ऐतिहासिक चरितमाला—१ सचित्र ऐतिहासिक वीरोपाख्यान

# मेवाड़-मार्त्तण्ड

अथवा

Maha Rana Partap.

# महाराणा-प्रताप

लेखक—

श्री० "उमेश" चतुर्वेदी, साहित्यभूषण, कविरत्न,

Sh. Umesh.

प्रकाशक—

हिन्दी पुस्तकालय, मथुरा Hindi Pustkaly Mathura

मूल्य एक रुपया आठ आना

Rs. 1/50

ऐतिहासिक चरितमाला—१ सचित्र ऐतिहासिक वीरोपाख्यान

# मेवाड़-मार्त्तण्ड

अथवा

Maha Rana Partap.

# महाराणा-प्रताप

लेखक—

श्री० "उमेश" चतुर्वेदी, साहित्यभूषण, कविरत्न,

Sh. Umesh.

प्रकाशक—

हिन्दी पुस्तकालय, मथुरा Hindi Pustkia Mathura

मूल्य एक रुपया आठ आना

Rs. 1/50

प्रकाशक—

हिन्दी पुस्तकालय

मथुरा

सन् १६४८

नवयुवकों के करों में

द्वितीयवार

मुद्रक—

कैलाश प्रिंटिंग प्रेस,

हाथरस ।

# नम्र निवेदन

मेवाड़ मार्त्तण्ड की गौरवमयी गाथा का गुणगान एक क्षुद्र लेखक या कवि अपनी लेखनी द्वारा क्या कर सकता है ? हां ! ऐसे महान् पुरुष के दिव्य पवित्र चरित्र को अङ्कित करने का सौभाग्य प्राप्त करके लेखनी गौरवान्वित होती हुई पवित्र अवश्य हो जाती है। बस, इसीलिए इन पंक्तियों के क्षुद्र लेखक की तुच्छ लेखनी ने इस पवित्र उपाख्यान को अङ्कित करने का साहस किया है। प्रयास असफल होगा या सफल इस पर भी ध्यान न दिया जा सका। पुस्तक कैसी है ? यह बताना हमारा काम नहीं, इसका भार तो पाठकों पर ही है।

कथानक न तो नवीन ही है और न पाठक इससे अपरिचित ही हैं फिर भी यदि यह पुस्तक पाठकों को पसन्द आई और कुछ भी मनोरन्जकता अथवा रोचकता उत्पन्न कर सकी तो लेखक अपना प्रयास सफल समझेगा। यदि कृपालु पाठकगण जो दोष उन्हें दृष्टिगोचर हों उसकी सूचना लेखक को देने की कृपा कर सकें तो लेखक उनका अत्यन्त कृतज्ञ रहेगा।

श्री चतुर्वेदी भवन<br>जयपुर<br>विजयादशमी सं० १९९४

विनीत—<br>"उमेश" चतुर्वेदी

❀ ओ३म् ❀

श्री० ____________________

____________________

____________________

ता०..................

____________________
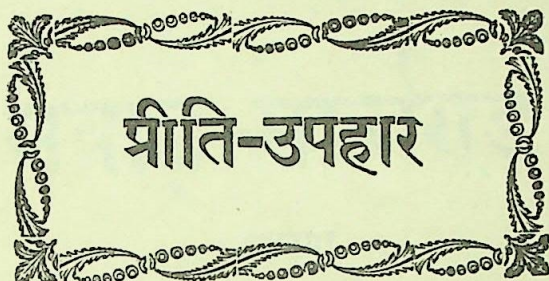
समर्पक
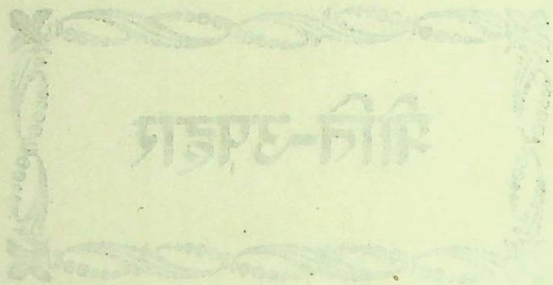
# मेवाड़-मार्त्तण्ड

अथवा

# महाराणा प्रताप

—◌*◌—
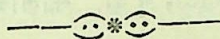
## पहला परिच्छेद

### प्रस्तावना

### मे—वा—ड़

भारतवर्ष में "राजस्थान" नामक एक प्रदेश है जिसको "राजपूताना" भी कहते हैं। राजपूतों का प्रदेश होने के कारण इसका यह नाम पड़ा है। 'राजस्थान" और "राजपूताना" शब्द ही इसका साक्षात प्रमाण हैं। जिस प्रकार मरहठों का स्थान महाराष्ट्र अथवा दक्षिण-प्रदेश सिक्खों का पंजाब, गोरखों का नैपाल, बुन्देलों का बुन्देलखण्ड तथा अन्य जातियों के अन्य स्थान नियत हैं उसी प्रकार राजपू-ों का भी राजपूताना ही निश्चित एवं मुख्य स्थान है। यह भारतवर्ष में पश्चिम दिशा

की ओर बसा हुआ है। इसके उत्तर में पंजाब, पूर्व में संयुक्त प्रांत, पश्चिम में सिन्ध प्रांत, दक्षिण में गुजरात और मध्य प्रदेश हैं।

इसी राजपूताना के अन्तर्गत अनेकों रियासतें हैं। मुख्य यह हैं। मेवाड़, मारवाड़, मेरवाड़ा, ढूंढार अथवा दूसरे शब्दों में उदयपुर (मेवाड़) जोधपुर (मारवाड़) जयपुर (ढूँढार) और मेरवाड़ा जो कि अजमेर कहलाता है रियासत नहीं है वह अब ब्रिटिश गवर्नमेंट का सूबा है। इसके अतिरिक्त अन्य रयासतें भी हैं जैसे बीकानेर, कोटा, बूंदी, झालावाड़ आदि। यह भी बड़ी रियासत हैं। किन्तु सबसे बड़ी, मुख्य और प्रसिद्ध जयपुर जोधपुर और उदयपुर ही हैं। हमें यहाँ सब रियासतों का उल्लेख नहीं करना है। हमें तो केवल उसी रियासत का संक्षिप्त परिचय पाठकों के सन्मुख उपस्थित करना है जिसका सम्बन्ध हिन्दूपति महाराणा प्रतापसिंह से है। वह रियासत कौनसी है? वह है...........

## "मेवाड़"

यह तीन अक्षरों की रियासत 'मे—वा—ड़" वह रियासत है जो आज के दिन तक भी "हिन्दुओं की नाक" कहलाती है। वहां का कण कण हिन्दुओं का गौरव प्रदर्शित कर रहा है। चित्तौड़गढ़ यहां का मुख्य गढ़ है समस्त भारतवर्ष में इसकी जोड़ का कोई भी गढ़ नहीं। आजकल ग्रामीण जनता में भी कहावत प्रसिद्ध है कि "गढ़ तो चित्तौड़ गढ़ और सब गढ़ैयाहैं"

अर्थात् चित्तौड़ गढ़ से अच्छा गढ़ कोई भी नहीं है। वास्तव में यही बात है। चित्तौड़ का किला बड़ा मजबूत है। इसके चारों ओर बहुत बड़ी और मजबूत चहार दीवारी है। किले के चारों ओर जो परकोटा बना हुआ है वह इतना चौड़ा है कि दो तीन आदमी उस पर आसानी से दौड़ सकते हैं। किले में जाने के लिये रास्ता भी विकट है। रास्ते में ऐसी ऐसी घाटियां पड़ती हैं जिनको पार करना बड़ा कठिन हो जाता है। यद्यपि अब तो कोई विशेष कठिनाई प्रतीत नहीं होती ऐसा हाल प्राचीन काल में ही था। इस प्रकार यह किया बड़ा मजबूत और सुरक्षित है यूं तो तमाम मेवाड़ प्रदेश ही पहाड़ी है किन्तु तो भी विशेष-तया यह स्थान अधिक सुदृढ़ है। केवल इतना ही नहीं सुदृढ़ होने के साथ २ यह स्थान सुन्दर एवं रमणीक भी बहुत है। मेवाड़ की सीमा में प्रदेश करते ही चित्त प्रसन्न हो जाता है। प्राकृतिक दृश्य तो इतने सुन्दर हैं कि जिस ओर आंख उठाकर देखा जाये उसी ओर आँखें अटक जाती हैं। हृदय आह्लादित हो उठता है वाह्य सौंदर्य के अतिरिक्त किले के अन्दर भी सुन्दर सुंदर महल और मंदिर बने हुये हैं।

दूसरा मुख्य स्थान जो कि मेवाड़ प्रांत की राजधानी है उदयपुर है। इसको महाराणा उदयसिंह ने बसाया था और उन्हीं के नाम पर इसका नाम उदयपुर रक्खा गया। इसका विवरण हम आगे देंगे। प्रिय पाठको ! हम तो यह कहेंगे, कहेंगे ही क्या अनुरोध करेंगे कि जीवन में कम से कम एक

बार इस पवित्र भूमि के दर्शन आपको अवश्य करने चाहिये। यदि हरिद्वार, जगन्नाथजी, बद्रीनाथ जी आदि २ आपके पवित्र तीर्थ हैं तो यह स्थान भी उनसे किसी दशामें कम नहीं। यह भी तो एक परम पावन तीर्थ है। यहां क्या नहीं है जो कि तीर्थ में होता है। यदि आपका यह अनुमान है कि समस्त तीर्थों की यात्रा करने से पाप दूर होते हैं, जीवन सुखमय हो जाता है और स्वास्थ्य लाभ भी होता है तो मेवाड़ को भी एक तीर्थ समझ कर यात्रा कीजिए। यदि आप यह समझते हैं कि बिना तीर्थ यात्रा किये मनुष्य का जीवन सफल नहीं होता तो यह भी याद रखिये कि बिना मेवाड़ की यात्रा किये आप हिन्दू कहाने के अधिकारी नहीं हो सकते। क्यों ? इसलिये कि मेवाड़ भूमि वीरों की जननी है ऐसे वीरों की जिन्होंने हिन्दू जाति की प्राण-पण से रक्षा की। जो स्वतन्त्रता देवी के आनन्द के उपासक बने रहे जिन्होंने हिन्दुओं के इतिहास को स्वर्णाक्षरों में अंकित करने योग्य बना दिया। अकेले मेवाड़ ने भारतवर्ष के गौरव की रक्षा की। क्या ऐसी भूमि सुपावन नहीं है ? क्या ऐसा स्थान हिन्दुओं का तीर्थ स्थान नहीं हैं ?

यही पवित्र स्थान उदयपुर एक छोटी सी नदी के किनारे बसा हुआ है चारों ओर पहाड़ हैं बीच में शहर है चित्तौड़ के समान यहां भी प्राकृतिक दृश्यों की भरमार है। समस्त भारतवर्ष में आजकल उदयपुर प्राकृतिक दृष्यों के लिये प्रसिद्ध है। विदेशी यात्री केवल इसी उद्देश्य से अकसर यहां आते रहते हैं। सिनेमा

की कम्पनियां भी बहुधा यहां आकर यहां के प्राकृतिक दृश्यों की फोटो लिया करती हैं। नगर के अन्दर भी अनेक ऐसे स्थान हैं जो बहुत सुन्दर रमणीक और देखने योग्य हैं जैसे सहेलियां बाग़, उदयसागर झील, जग निवास मन्दिर आदि २।

ऐतिहासिक दृष्टि से मेवाड़ अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। मुख्यत: यवन काल में तो यह कुरुक्षेत्र का मैदान बना हुआ था। एक दो नहीं इस पर अँगणित आक्रमण हुये परन्तु इसका गौरव नष्ट न हो सका। विशेषतया बाप्पा रावल के समय से इसका मुख्य इतिहास प्रारम्भ होता है। बाप्पा रावल बड़े प्रतापी नरेश हो चुके हैं। भारत ही नहीं विदेशों के शासक भी इनका लोहा मानते थे। बड़ी २ बलिष्ठ जातियों का गर्व वह अपनी शक्ति से चूर कर चुके थे। महान् शक्तिशाली नरेश जिन्हें अपने बल साहस का बड़ा अभिमान था जैसे पठान, तुर्क, ईरानी इत्यादि वह सब उनका नाम मात्र सुनकर कांप उठते थे। चारों ओर रावल जी का आतंक छाया हुआ था। किसी को सर उठाने का साहस ही नहीं होता था। बाप्पा रावल सूर्यवंशी क्षत्रीय थे जिनकी उत्पत्ति मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान रामचंद के ज्येष्ठ पुत्र लव से हुई है। अभी तक वही वंश चला आता है यह सूर्य वंशी क्षत्रीय राजपूत सिसौदिया भी कहलाते हैं यह लोग मुख्यत: मेवाड़ में ही पाये जाते हैं।

बाप्पा रावल की सन्तति में से प्रत्येक ही बड़ावीर और साहसी था। राणा खुमान भी उन्हीं में से थे। वह भी अपने समय

के अद्वितीय वीरों में से। कई पीढ़ियों के बाद रावल समरसिंह मेवाड़ के महाराणा हुये। उन्हीं दिनों दिल्ली में महाराजपृथ्वीराज शासन कर रहे थे। पृथ्वीराज का नाम भी भारतीय इतिहास में बहुत प्रसिद्ध है। वास्तव में वह बड़े वीर और रणबांकुरे थे। चारों ओर उनकी वीरता का डंका बज रहा था। मेवाड़ नरेश महाराणा समरसिंह पृथ्वीराज के बहनोई थे। पृथ्वीराज उन दिनों केवल दिल्ली के ही राजा नही थे प्रत्युत भारत के सम्राट कहलाते थे। बस भारत के अन्तिम सम्राट भी यही थे। इन्हीं के पश्चात यवन काल प्रारम्भ होता है। इसका कारण था। पृथ्वीराज की अदूरदर्शिता और हिन्दुओं की फूट। पृथ्वीराज का एकभाई था जयचंद जो कि कन्नौज का राजा। वहीं हिंदुओं के विनाश का मुख्य कारण था। वह पृथ्वीराज का कट्टर शत्रु होगया था क्योंकि उसकी इच्छा के विरुद्ध पृथ्वीराज ने उसकी पुत्री संयोगिता से विवाह किया था।

वह समय ही भारतवर्ष के लिये बड़ा मनहूस था। हिंदुओं में फूट खूब फैली हुई थी। ऐसी दशा देखकर विदेशी भला चुप रहकर बैठने वाले कब हैं? वह लोग तो ऐसे अवसर की तलाश में ही रहा करते हैं। शहाबुद्दीन गौरी जो कि ग़ौर देश का बादशाह था इसी की ताक में बैठा था। गौर मध्य ऐशिया में ग़ज़नी के पास है। उसने ऐक बड़ी फौज लेकर भारतवर्ष पर आक्रमण किया किन्तु क्षत्रियों से लोहा लेना बच्चों का खेल नहीं होता। हारा और बुरी तरह हारकर वापस ही भाग गया। एक दो बार

नहीं उसने अठारह हमले किये लेकिन सभी में वह असफल रहा इतिहास में मुख्यत: उसके दो ही हमले प्रसिद्ध हैं। एक तो शुरू का और दूसरा अन्त का। जयचन्द पृथ्वीराज का शत्रु था ही उसे यह भी मालूम हो था कि पृथ्वीराज उससे कहीं अधिक वीर है इसलिये उसने बैर का बदला लेने के लिये शहाबुद्दीन गोरी से मित्रता करली ? "घरका भेदी लङ्का ढाये" कहावत प्रसिद्ध ही है। गौरी को भी इससे अच्छा मौका फिर कब मिलता जयचन्द ने उसको ऐसे समय में बुलाया जब कि पृथ्वीराज चिन्तारहित होकर विलास का जीवन व्यतीत कर रहा था। उसे यह भी न मालूम था कि बाहर क्या हो रहा है ? गोरी ने हमला कर दिया और यही उसका अन्तिम आक्रमण था। जयचंद की पूर्ण सहायता उसको प्राप्त थी। जब गौरी देहली आगया और सर पर ही आकर सवार होगया तब पृथ्वीराज की आखें खुलीं। संयोगता ने भी उसको खूब उत्साहित किया। मेवाड़ नरेश समर सिंह से भी सहायता मांगी गई ! घोर घमासान युद्ध हुआ ! वह गौरी जो अठारह बार हार चुका था और पृथ्वीराजके पैरोंपरगिर कर जीवन की भिक्षा मांग चुका था इतना ही नहीं वह खुदा और कुरान की कसम भी खा चुका था कि फिर कभी वह आक्रमण न करेगा। वही अब फिर धोखे छल फरेब से पृथ्वीराज कोहराने की कोशिश कर रहा था। अन्त में वह सफल हुआ मेवाड़नरेश समरसिंह वीरता से लड़ते हुये रणक्षेत्र में ही वीरगति को प्राप्त हुये। पृथ्वीराज जिन्दा पकड़ लिये गये उनकी आँखें फोड़दीगई

और उन्हें अपने साथ ही गोरी अपने देश लेगया वहां पृथ्वीराजने शब्दभेदी बाण द्वारा गोरी को भी मारा और स्वयं भी आत्मघात करके मरगये। जयचंद को भी उसकी कुटिलता का फल मिल गया। वह भी शहाबुद्दीन गोरी द्वारा मारा गया। भारतवर्ष में यवनों का राज्य स्थापित होगया। हा! खेद!! महाखेद!!!

"दिल के फफोले जल उठे सीने के दाग से।
इस घर में आग लग गई घर के चिराग से॥"

यवन लोग सानन्द राज करने लगे। पहिले गुलाम वंश ने राज्य किया फिर क्रमशः, खिलजी, तुगलक, सैयद, लोधी, वंश ने। सभी बादशाहों की हिन्दुओं से लड़ाइयां हुई। खिलजी वंश के समय अलाउद्दीन नामक बादशाह बड़ा धूर्त और क्रूर था। यों तो सभी बादशाहों ने हिन्दुओं के साथ अत्याचार प्रकट किया किन्तु अलाउद्दीन तो हिन्दुओं का कट्टर शत्रु ही था। उन दिनों मेवाड़ में महाराणा भीमसिंह राज्य करते थे। मेवाड़ हमेशा से स्वतन्त्रता का उपासक रहा है। उस समय भी वह स्वतंत्र ही था। अलाउद्दीन ने सुना कि मेवाड़ाधिपति भीमसिंह की रानी पद्मनी बहुत सुन्दर है। वास्तव में वह अद्वितीय सुन्दरी थी। उसकी सौन्दर्यचर्चा समस्त भारतवर्ष में फैल रही थी। अलाउद्दीन ने उसको अपनी बेगम बनाना चाहा परन्तु वह यह बात भी जानता था कि पद्मिनी क्षत्राणी है। उसको बेगम बनाना लोहे के चने चबाना है। वासना का भूत उस के सिर पर सवार था। उसने पद्मनी को शीशे में देखने की इच्छा प्रकट

की। मेवाड़ नरेश ने यह बात स्वीकार करली। लेकिन दगाबाज बादशाह ने धोके से भीमसिंह को कैद कर लिया और पद्मनी को कहला भेजा कि जब तक वह उस की बेगम बनना स्वीकार न करेगी भीमसिंह को नहीं छोड़ा जायगा। पद्मनी ने भी चतुराई से काम लिया। अपने भतीजे बादल को अपना वेष धारण कराकर भेज दिया। दो बार युद्ध हुआ। चित्तौड़ तबाह हो गया। ओफ! एक नहीं सैकड़ों वीरांगनायें जलती हुई चित्ताओं की धू धू करती हुई आग में जलकर राख हो गईं। हजारों वीर जान पर खेल गये। वीरवल "गोरा" और चौदह वर्ष का बालक "बादल" बड़ी वीरता से लड़े। मेवाड़ की महत्ता विश्व में प्रकट हो गई। भीमसिंह आदि सब वीर वीरगति को प्राप्त हुये। अलाउद्दीन हाथ मलता ही रह गया और उसके हृदय पर "मेवाड़ के गौरव" की गहरी छाप लग गई।

पाठकों। राज्य का भी अन्त आया और मुग़लों ने भारत में प्रवेश किया। पहिला मुगल बादशाह बाबर था और उसी जमाने में मेवाड़ नरेश थे।

## महाराणा संग्रामसिंह

जो कि राणा सांगा के नाम से प्रसिद्ध हैं। वह कैसे वीर थे यह तो 'बाबरनामा' या 'तुजक बाबरी' (बाबरकी जीवनी जोउसने स्वयम् ही लिखी थी) से ही मालूम हो सकता है। बाबर ने उसमें राणा सांगा की एक शत्रु होते हुये भी मुक्त कंठ

से प्रशंसा की है। वास्तव में वह महावीर थे। वह अनेकों बार संग्राम में सम्मिलित हो चुके थे और लड़ाई में उनकी एक आंख जाती रही थी, एक हाथ टूट गया था, एक पैर कट गया था और शरीर पर भी अस्सी घाव लग चुके थे। परन्तु ऐसे शूर होते हुये भी वह हारे क्यों? इसका कारण वही था कि जिसने भारत में यवनों का पदार्पण कराया। उसी डायन फूट ने बाबर को विजय प्रदान की। यद्यपि उन इतिहासों में जो पाठशालाओं में पढ़ाये जाते हैं। इस भेद को गुप्त ही रक्खा गया तथापि यह सोचने की बात है कि अकारण ऐसा महान् वीर पराजित किस प्रकार हो सकता था? उस के साथ धोखा हुआ और भारी धोखा हुआ। राणा सांगा का एक सम्बन्धी सरहदी सरदार बाबर से जा मिला साथ ही उसकी अपार सेना भी और राणा को उसका पता भी न लगा। मालूम उस समय हुआ जब कि राणा ने अपनी सेना को आपस ही में भरते पिटते हुये देखा। राणा बड़ी बीरता से लड़ते हुये मारे गये। बाबर भारतवर्ष का बादशाह बन बैठा। मुगलों का राज्य शुरू हो गया।

मेवाड़ कभी सुख चैन से न रह सका। किसी समय भी वहां शान्ति न रहीं। वह हमेशा ही संग्राम की भूमि ही बनी रही। प्रत्येक यवन सम्राट का उस पर दांत रहता था। इसलिये नहीं कि मेवाड़ धन सम्पन्न प्रदेश था। अथवा दुआबा की भांति वहां की भूमि भी बहुत उपजाऊ थी। नहीं ऐसा नहीं था। वहां न तो उपज 'पैदावार' ही विशेष होती है और न वह धनी देश ही

है वह तो केवल स्वाभिमानी है। किसीके सन्मुख शीस झुकाना वह नहीं सीखा। उसने कभी दासत्व ग्रहण नहीं किया। जबतक भारत में यवनों का राज्य रहा तब तक मेवाड़ ने उन्हें खूब ही छकाया और नाकों चने दबा दिये। और अन्त तक उसने उनकी आधीनता स्वीकार नहीं की।

प्रत्येक यवन सम्राट यह चाहता था कि मेवाड़ नरेश उसके आगे शीस झुकादे और उसकी आधीनता स्वीकार करले कोशिश भी बहुत की खून पसीना एक कर दिया हजारों लाखों का खून बहा दिया। मेवाड़ को कुरुक्षेत्र का मैदान बना दिया। वहां की भूमि को खून पिला पिला कर लाल कर दिया। लेकिन फल कुछ न निकला। वहां का एक भी नरेश उनके काबू में न आया। वहां के एक बच्चे ने भी उनकी दासता स्वीक.र न की। केवल दो एक ही ऐसे कुलकलंक निकले जिन्होंने मेवाड़ के नाम को बदनाम करना चाहा परन्तु वह भी अन्य नरेशों की भांति उनके दासत्व में न रहे। कोई गिरते गिरते सम्हल गया और कोई केवल कायर कहला कर ही दासत्व बंधन से मुक्त हो गया। मेवाड़ का गौरव नष्ट न हो 'सका। उसकी रक्षा हो गई।

यवन भी मेवाड़ के नाम मात्र को सुनकर चौंक पड़ते थे। गनका खून पानी के रूप में परिवर्त्तित हो जाता था। मेवाड़ वासियों से लड़ते समय वह अपने जीवन की आश त्याग बैठते थे। मेवाड़ का बच्चा २ उनको साक्षात् यमराज मालूम

होता था । वैसे वह चाहे जितना भी द्वेष रखते हों लेकिन मेवाड़ वासियों की प्रशंसा उनको भी हृदय से करनी पड़ती थी । । यही तो थी..........

"मेवाड़-महिमा"

---

# दूसरा परिच्छेद

## मेवाड़ का कलंक

### उदयसिंह

भले बुरे के होत हैं, बुरे भले के होयं ।<br>
आह ! दीपक ते काजल प्रकट, कमल कीच ते होयं ॥

सत्य है । यह कहावत यहां इस अवसर पर सर्वथा उपयुक्त जंचती है । कहां तो महाराणा संग्रामसिंह अपने समय के अद्वितीय वीर और कहां उनके कायर कपूत । राणासाँगा के पांच पुत्र थे जिनसे दो तो बचपन में ही मर चुके थे और तीन शेष थे रत्नसिंह सबसे बड़े थे इसलिये वही राज्य सिंहासन पर बैठे। लेकिन उनका स्वभाव अच्छा न था, प्रजा भी उनसे अप्रसन्न थी । कुछ समय तक राज्य करने के पश्चात ही वह मारे गये ।

उनके बाद उनके छोटे भाई विक्रमादित्य गद्दी पर बैठे। लेकिन वह अपने बड़े भाई से भी दो हाथ बढ़कर थे। ऐसा कोई शायद ही अवगुण होगा जो उनमें न पाया जाता हो। स्वभाव भी खराब था विलासी भी पक्के थे और कायर तो थे ही। यह हालत देखकर गुजरात और मालवा के मुसलमान बादशाहों ने मेवाड़ पर चढ़ाई करदी। पहले तो राजपूतों की विजय हुई किन्तु अन्त में बेचारे हार गये। लगभग ३२ हजार वीर राजपूत इस युद्ध में काम आये। चित्तौड़ पर बहादुरशाह का कब्जा हो गया। लेकिन कुछ समय पश्चात् ही वह भी हुमायूं से हार गया और फिर विक्रमादित्य गद्दी पर बैठ गया। इस बार बनवीर नामक एक व्यक्ति जो राणा सांगा के भाई पृथ्वीराज का खास पुत्र था उसके विरुद्ध खड़ा हुआ। राजपूतों ने भी उसका साथ दिया क्योंकि सब लोग विक्रमादित्य से अप्रसन्न थे। विक्रमादित्य मारा गया और बनवीर राजा बन बैठा। बनवीर था तो बहादुर लेकिन बड़ा क्रूर दुष्ट और उद्दण्ड था। गद्दी पर बैठते ही उसको राज्य का मद हो गया। और वह मनमाने अत्याचार करने लगा। उसने चाहा कि राणा सांगा के पांचवें पुत्र उदयसिंह को भी जो अभी बच्चा ही था मार डाला जाये। ऐसा करने से मार्ग निष्कंटक हो जायेगा और उसका वंश ही मेवाड़ का एक मात्र अधिकारी रहेगा। उसकी यह नियत उदयसिंह को पालने वाली धाय "पन्ना" को मालूम हो गई। उसने फौरन उदयसिंह को अपने पड़ौसी के घर में छुपा दिया और

उसकी जगह अपना बच्चा रख दिया। जब बनवीर आया और उसने उदयसिंह का पता पूंछा तो पन्ना ने अपने बच्चे की ओर इशारा कर दिया। बनवीर ने उसी समय पन्ना के बच्चे को मार डाला। अहा! पन्ना का त्याग कैसा अपूर्व था। ऐसा बलिदान ऐसा आदर्श कदाचित् ही किसी देश के इतिहास में मिलता होगा अगर पन्ना धाय न होती तो क्या होता ? क्या इसकी कल्पना की जा सकती है? सिसौदिया वंश का दीपक बुझ जाता। राणा सांगा का उज्वल कुल हमेशा के लिये नष्ट हो जाता कौन ऐसा व्यक्ति होगा जो पन्ना नहीं नहीं, वीरांगना पन्ना के इस कार्य की हृदय से प्रशंसा न करेगा और अनायास ही उसके मुख से "धन्य न निकलेगा आज भी पन्ना का नाम सर्वत्र प्रसिद्ध है। और हमेशा तक अमर रहेगा।

कई बर्षों के पश्चात् राजपूतों को उदयसिंह के जीवित रहने का समाचार मालूम हो गया। सबको अपार हर्ष हुआ। कुम्भलमेर में एक दरबार किया गया और वहां यह निश्चय हुआ कि बनवीर को सिंहासन से उतार कर उदयसिंह को बिठाया जाये। ऐसा ही हुआ भी। बनवीर इस बार कुछ न कर सका चुपचाप राज्य छोड़कर चला गया क्यों कि सब राजपूत उसके विरुद्ध थे वह करता भी क्या।

उदयसिंह सिंहासन पर बैठ गये और मेवाड़ का राज्य करने लगे। अब इतने समय बाद मेवाड़ में कुछ शान्ति हुई। पन्ना धाय को उसकी सेवाओं के उपलक्ष में खूब मान सम्मान

पुरुस्कारादि दिया गया। आशाशाह नामक एक वैश्य और एक नाई इन दोनों को भी यथायोग्य पुरुस्कार मिला क्योंकि इनके घरों में ही उदयसिंह का पालन पोषण हुआ था। यह लोग बड़े राजभक्त थे। वरना मेवाड़ में किसी को साहस न होता था कि उदयसिंह को अपने यहां प्रवेश भी करने दे। बनवीर का आतंक सब पर छाया हुआ था।

मेवाड़ वासियों को जैसी आशा थी वैसे सफल शासक उदय सिंह न निकले। सब सोचा करते थे कि आखिर बात क्या है? क्या वीरता राणा सांगा के साथ ही चलीगई? क्या मेवाड़ के उन्नत मस्तक पर कलंक का ही टीका लगेगा? मेवाड़ के सरदार और वहां की प्रजा दोनो ही देश भक्त थे। क्या यह कम दुख और आश्चय की बात थी कि राणा सांगा के तीनों पुत्रों में से एक भी उनके वंश को उज्वल करने के योग्य सिद्ध न हुआ? मेवाड़वासी इस बात से बड़े दुखी थे। उदयसिंह को अपनी प्रजा की कुछ चिन्ता न थी देश की प्रतिष्ठा, जाति का गौरव, वंश का सम्मान आदि किसी का भी उस को ध्यान नहीं था। उसको अगर चिन्ता रहती थी तो केवल अपने सुख की। देश नष्ट हो जाये जाति का नाश हो जाये किन्तु उसके सुख विलास में कमी न आये वह केवल यही चाहता था।

अकबर भारतवर्ष का सम्राट हुआ और उसने सर्वत्र अपना अधिकार स्थापित करना शुरू कर किया। उसने हिन्दुओं से मित्रता का सम्बन्ध रक्खा और इसी बहाने अपना उद्देश्य सिद्ध

किया। उसका आतंक उदयसिंह पर भी छागया और वह युद्ध से भयभीत होकर चित्तौड़ को छोड़कर अरावली पर्वत के बनों में जा छुपा। उसका यह साहस न हुआ कि अकबर से युद्ध करता और पत्थर का जवाब पत्थर से देता। किन्तु यह होता कैसे ? वह तो स्वभाव का ही कायर था।

अरावली पहाड़ के बनों में भी वह अपने सुख वैभव की ओर से उदासीन न रहा। वह वहीं रहने लगा और धीरे २ वहाँ तालाब महल वगैरा बनवाने लगा। जंगल में मंगल होने लगा। और वह सुनसान बन एक सुन्दर नगर बन गया। चारों ओर पहाड़ों से घिरा हुआ वह स्थान बड़ा रमणीक होगया उदयसिंह ने अपने नाम पर ही उस नगर का नाम "उदयपुर" रक्खा यही नाम अभी तक चला आता है और मेवाड़ की राजधानी कह-लाता है। अब भी यह नगर बड़ा सुन्दर और देखने योग्य है।

उदयसिंह तो चित्तौड़ छोड़ कर भाग खड़े हुये लेकिन राज पूतों ने ऐसा न किया। उन्होंने निश्चय कर लिया कि जब तक शरीर में प्राण हैं हम यवनों की अधीनता कभी स्वीकार न करेंगे पहली बारतो उदयसिंह ने युद्ध भी किया लेकिन हार गया और कैद कर लिया गया। उदयसिंह की उपपत्नी मीराबाई यह सहन न कर सकी। वह स्वयम सशस्त्र रण में गई और उसने मुगलों को करारी हार दी और उदयसिंह को छुड़ा लिया। कुछ दिनों बाद वह स्वयम भी मर गई। दूसरी बार अकबर ने फिर हमला किया इस बार उसके पास बड़ी भारी सेना थी यह देखकरउदय

सिंह तो भाग ही गये लेकिन क्षत्रिय वीरों ने साहस न छोड़ा।

चित्तौड़ की रक्षा करने के लिये कुछ अन्य वीर भी आ गये थे। चित्तौड़ के मुख्य द्वार 'सूर्यलोक अथवा सूर्यद्वार पर वीर चन्दावत सहीदास डटा हुआ था। उसने वहीं वीरता से लड़ते हुये प्राण त्याग दिये। यूँ तो अनेकों वीर काये थे किन्तु विशेष तयः दो अधिक प्रसिद्ध हैं। एक तो बेदनोर का राजा जयमल दूसरा चन्दावत कुल की जगवत शाखा में उत्पन्न कैलवाड़े का राजा "पत्ते'। 'पत्ते" का पूरा नाम "प्रताप" था किन्तु वह "पत्ता"नाम से ही प्रसिद्ध था। उसकी अवस्था उस समय केवल १६ सोलह वर्ष की थी। केवल "पत्ता" ही नहीं उसकी वीरांगना माता और कम उम्र पत्नी भी रण में लड़ने को तैयार होकर आई थी। उनके साथ अन्य वीर नारियों ने भी संग्राम में भाग लिया। इन वीराङ्गनाओं का जत्था ऐसी वीरता से लड़ा कि मुगलों के छक्के छूट गये किन्तु एक अपार सेना से कब तक युद्ध करती। वीरता से लड़ती हुई सब मारी गईं। एक भी शेष न बची।

उधर 'जयमल' और 'पत्ता' ने मुगलों की नाक में दम कर दिया। अकबर इस विकट संग्राम से ऐसा घबड़ाया कि विजय की आशा ही उसकी न रही किन्तु जबकि एक रात को जयमल किले की दीवार पर खड़ा हुआ दीवाह की मरम्मत कर रहा था अकबर ने उसे देख लिया और गोली से मार दिया। वाहरे वीर-वर अकबर खूब वीरता दिखाई। इसकी वीरता के गानों से

इतिहास के पृष्ठ भरे हुये हैं यह उसी वीर की वीरता है ? भला कौन इस वीरताकी प्रशंशा करेगा ? जयमल ने मरते २ राजपूतों को जुहार बृत करने की आज्ञा दी। सब वीर केसरिया बाना पहनकर समर भूमि में कूद पड़े और स्त्रियां जलती हुई चिताओं में बैठकर जल मरीं।

बड़ा बिकट युद्ध हुआ। राजस्थान के सुप्रसिद्ध इतिहास-कार कर्नल टॉड ने इसका बड़ा लम्बा चौड़ा वर्णन दिया है। एक जगह वह लिखते हैं—"जिस प्रकार कार्थेज नगर के महावीर हनिवल रूम वालों को कना के मैदान में हराकर अपनी विजय का परिणाम रूम वालों की अँगूठियों को तोलकर मालूम किया था। उसी प्रकार अकबरने भी इस युद्धमें मारे गये राजपूतों के जनेऊ तोले थे। सब जनेऊ की तोल ७४॥ मन थी।" यह अङ्क अब तक गुप्त पत्रों पर लिखा जाता है जिसका अर्थ यह है कि यदि उस पत्र को अन्य व्यक्ति खोल कर पढ़ेगा तो उसको चित्तौड़ तोड़ने का पाप लगेगा ? अकबर ने चित्तौड़ का नाश कर दिया। बड़ी २ कीमती चीजें वह अपने साथ ले गया। नगर को खूब लूटा। मन्दिर और सुन्दर महलों को खाक में मिला दिया। चित्तौड़ का दुर्ग फाटक, भगवती चतुर्भुजी देवी के मन्दिर की बहुमूल्य दीवट और बड़े-बड़े नगाड़ों को वह अपने नगर को सजाने के लिये ले गया।

लेकिन अकबर पर भी इस युद्ध का काफी प्रभाव पड़ा। उसने भी राजपूतों की बड़ी प्रशंसा की। जयमल और पत्ता की

पत्थर की मूर्तियां बनावाकर उसने अपने महलों में बड़े सन्मान से रक्खीं जिनको बाद में औरङ्गजेब ने जमीन में गढ़वा दिया। उन वीरों की अपार वीरता आज भी हिंदू मात्र के हृदय में उत्साह प्रदान कर देती है। उनकी कहानियां आज भी सोते हुये हृदय में जागृति उत्पन्न कर देती है। धन्य है! वह वीर जो देश पर बलिदान हो गये और धन्य है वह वीराँगनायें जिन्होंने सतीत्व रक्षा के लिये अपने शरीर चिताओं की धधकती हुई भयंकर आग को समर्पित कर दिये। जबतक संसार कायम है तब तक उनके नाम स्वर्णाक्षरों में चमकते हुये अमर रहेंगे। धन्य! धन्य !!...............

चित्तौड़ के विध्वंस हो जाने के चार साल बाद उदयसिंह का देहांत हो गया। वह अपने जीते जी ही अपने छोटे पुत्र जगमल को उत्तराधिकारी बनागये थे। जगमल उनकी छोटी रानी कापुत्र था जिसको वे बहुत चाहते ये। उदयसिंह के चौबीस बेटे थे और उनमें सब से बड़े राजकुमार प्रतापसिंह थे। युवराज कहलाने का तथा मेवाड़ के सिंहासन पर बैठने का प्रतापसिंह को ही अधिकार था। परन्तु उदयसिंह ने उनके साथ अन्याय किया। उदयसिंह के बाद जगमलसिंह ही गद्दी पर बैठा परन्तु वह कुशल शासक भी सिद्ध न हो सका। तमाम राजपूत सरदार और मेवाड़ के प्रजावासी उससे अप्रसन्न थे। सब प्रताप को ही अपना नरेश बनाना चाहते थे। धर्मप्राण हिन्दू ऐसा अन्याय कदापि सहन करने को तैयार न थे।

———

# तीसरा परिच्छेद

## "मेवाड़ के सिंहासन पर प्रताप"

जगमल के सिंहासनारूढ़ हो जाने से सब लोग क्रोधित हो रहे थे। स्वयम प्रतापसिंह को भी यह बात उचित न मालूम हुई किन्तु सिंहासन के लिये वह झगड़ा करना ठीक नहीं समझते थे अगर वह उस समय चाहते तो राजपूत सरदारों की मदद से जगमल को उतार कर स्वयं गद्दी पर बैठ जाते और यह काम बड़ी आसानी से हो सकता था। कोई उन की ओर आंख भी उठाने वाला नहीं था। किन्तु उनका स्वभाव ऐसा नहीं था वह राज्य के भूखे नहीं थे। मेवाड़ नरेश कहलाने की इच्छा से वह व्याकुल नहीं हो रहे थे। तब जगमल का राजा बनना उन्हें बुरा क्यों लगा? इसलिये कि वह न्याय के पक्षपाती थे, धर्म पथ पर चलने वाले थे। मेवाड़ प्रदेश में अपनी गौरवमयी जन्मभूमि में यह अन्याय होता हुआ नहीं देख सकते थे। इसके अतिरिक्त जगमल अयोग्य शासक था इसलिये उन्हें मेवाड़ की चिन्ता थी। और यह भी ख्याल था कि वह स्वयम् भी स्वतंत्र नहीं रह सकेंगे। पराधीनता का जीवन इनको बिताना पड़ेगा। और ऐसा जीवन उन के लिये असह्य था। अतः उन्होंने मेवाड़ छोड़ कर अन्यत्र जाने का निश्चय कर लिया। बिचार पक्का होने पर एक दिन उन्होंने अपने सेवक को घोड़ा तैयार करने की

आज्ञा दे दी। यह समाचार गुप्त रखने परभी कुछ राजपूत सरदारों को मालूम हो ही गया। जब वह घोड़े पर बैठकर जाने ही वाले थे उसी समय मेवाड़ के कुछ ही बफादार राजपूत सरदारों ने आकर उन्हें जाने से रोक लिया। सरदारों ने कहा— 'राजकुमार ! आप हमें छोड़कर कहीं नहीं जा सकते यदि जाना ही है तो हमें भी साथ ले चलिये। जहां आप रहेंगे वहीं मेवाड़ बसेगा। मेवाड़ की प्रजा का एक भी व्यक्ति आपके बिना यहां नहीं रह सकता। हमारे नरेश आपही हैं। और हम आपकी ही प्रजा हैं। हम कभी अन्यव्यक्तिको अपना महाराज स्वीकार नहीं कर सकते। कुमार ! हम आपकी आज्ञा की प्रतीक्षा में ही अब तक शान्त बैठे हुये हैं वरना अबतक न जाने क्या क्या होजाता ? प्रतापसिंह सरदारोंकी बातें ध्यानसे सुनरहे थे। वह कहने लगे— "वास्तव में तुम लोग महान वीर हो और तुम्हारी वीरता परही मेवाड़ का अस्तित्व अवलम्बित है। तुम सबकुछ कर सकते हो परन्तु मैं यह नहीं चाहता कि इस जरासी बात के लिये शोणित के दरिया बहाये जायँ और अपना दल बल ही क्षीण कर दिया जाये। जगमल भी मेरा भाई है उससे लड़कर मैं गद्दी पर बैठूँ इससे क्या लाभ होगा ? एक तो पहिले ही फूट सब जगह फैली हुई है। और अब इसका रूप अधिक प्रचण्ड हो जायगा। और इसका परिणाम क्या होगा यह तो सर्व विदित ही है ? जिस पौधे को बाप्पा रावल दादा संग्रामसिंह आदि ने सींचा और बड़ा किया वही झुलस झुलस कर नष्ट हो जायगा। इसलिये

अच्छा तो यही है कि मैं मेवाड़ को छोड़ कर दूसरी जगह चला जाऊँ ताकि किसी बात का झगड़ा ही न रहे। आप सब लोग यहीं रहिये और अपने राणा कों सन्मार्ग पर लाने का यत्न कीजिये। मेवाड़ का गौरव आप ही लोगों के हाथ है कहीं ऐसा न हो कि अनर्थ हो जाये और मेवाड़ की पुण्य भूमि कलङ्कित हो जाये।.........…

यह कहते२ प्रतापका गला भर आया और वह चलनेके लिए तैयार हो गये लेकिन राजपूत उनको आगे बढ़ने ही नहीं देते थे। वह लोग उनसे वहीं ठहरने के लिये सानुरोध प्रार्थना करते थे। जब प्रताप किसी तरह माने ही नहीं तो वह लोग कहने लगे— "कुमार! यदि आपको अपने होते हुये मेवाड़ का सर्वनाश देखना है और अपनी प्यारी प्रजा को दुखी करना है तो आप जा सकते हैं......"प्रतापसिंह अब क्या कहते? सरदारों के अनुरोध को कैसे टालते। बार २ उनके विवश करने पर प्रतापसिंह को मेवाड़ त्यागने का विचार छोड़ना ही पड़ा। दूसरे ही दिन राजपूत सरदारों ने मिलकर यह निश्चय कर लिया कि अब शीघ्रातिशीघ्र ही मेवाड़ के सिंहासन पर प्रतापसिंह को बिठला दिया जाये और जगमल को जैसे भी हो गद्दी से उतार दिया जाये। यदि समझाने से ही जगमल मान जाये तब तो सबसे अच्छी बात है वरना इस कार्य में युद्ध करने से भी संकोच नहीं करना चाहिये

वयोवृद्ध राजमंत्री चूड़ावत कृष्णसिंह जी सरदारों के नेता बने हुये थे। वह बड़े बुद्धिमान, वीर और राज्य के शुभचिन्तक

थे। दूसरे दिन ही वह जगमल से मिलने गये जब कि वह दरबार में गद्दी पर बैठा हुआ था। कृष्णसिंह ने कहा— 'जगमल! तुम इस गद्दी के हकदार नहीं हो। जो कुछ तुम्हारे पिताने किया वह उनकी भारी भूल थी। मेवाड़ की सारी प्रजा और सरदार गण इस बात से अप्रसन्न हैं। मेवाड़ की गद्दी के लिये अन्याय होता हुआ मेवाड़ की प्रजा का एक बालक भी नहीं देख सकता। तुम्हें स्वयम चाहिये था कि गद्दी पर बैठना स्वीकार न करते और अपने बड़े भाई प्रतापसिंह को ही मेवाड़ का नरेश बनाने देते किन्तु तुम्हें तो स्वार्थ ने आ दबाया और तुमने उचित और अनुचित का कुछ भी विचार नहीं किया। तुम्हीं सोचो क्या यह अन्याय नहीं है कि युवराज के होते हुये जो कि गद्दी का असली हकदार है तुम गद्दी पर आ बैठो। धर्म पर प्राण देने वाले हिन्दू ऐसा अन्याय सहन नहीं कर सकते। प्रजा तुम्हारे विरुद्ध हो रही है। सरदारगण भी तुम्हारे विपक्ष में हैं इसलिये अच्छा य ी है कि तुम अपनी राजी से ही गद्दी त्याग दो और प्रतापसिंह को बैठने दो वरना परिणाम जानते हो क्या होगा? मेवाड़ में विद्रोह खड़ा हो जायगा और व्यर्थ ही हजारों जानें चली जायेंगी।"जगमल शान्तिसे सब कुछ सुनता रहा। उसका मुँह पीला पड़ गया। उसका साहस न हुआ कि मुख भी खोल सके। वह चुपचाप रहा लोगों ने समझ लिया कि जगमल अब कुछ कहना नहीं चाहता और वह गद्दी को त्यागने के लिये तैयार है। वास्तव में उनका अनुमान सत्य ही था। जगमल ने

विचार किया कि लड़ने भिड़ने से कुछ लाभ हो ही नहीं सकता क्योंकि सब लोग उसके विरुद्ध हैं और वास्तव में प्रतापसिंह ही गद्दी के हकदार हैं इसलिये गद्दी को त्यागना ही अच्छा होगा।

यह सोचकर वह स्वयं ही गद्दी छोड़कर उठ खड़ा हुआ। उसी समय प्रतापसिंह को बुलाया गया और सबने मिल कर प्रतापसिंह को सिंहासन पर बिठा दिया। प्रतापसिंह के गद्दी पर बैठते ही दरबार में खुशी के फुव्वारे छूटने लगे। सब एक स्वर से बोल उठें—

"मेवाड़ नरेश महाराणा प्रतापसिंह की जय"

यह शुभ समाचार फौरन ही सर्वत्र सुगन्ध की भांति फैल गया नगर में भी हर्ष का ठिकाना न रहा। प्रजा भांति २ से हर्ष प्रगट करने लगी। कुछ क्षणोंमें ही नगर खूब सज गया। मालूम होता था इन्द्रपुरी भी उसके सामने तुच्छ है। शायद ही कोई व्यक्ति ऐसा होगा जिसको हर्ष न हुआ हो। मेवाड़ वासी अपने प्यारे और वीर राजकुमार को महाराणा के रूप में पाकर बहुत खुश थे। सरदारगण को खुशी इस बात की भी थी कि बिना खून बहाये ही काम बनगया वरना न मालूम कितनी जानें बात की बात में चली जातीं। जो कुछ हुआ अच्छा ही हुआ। अङ्ग-रेजी में भी कहावत है—"well lbegun half done" अर्थात् जिसका आरम्भ अच्छा होता है वह कार्य आधा तो वहीं सम्पूर्ण हो जाता है। अस्तु'''''''
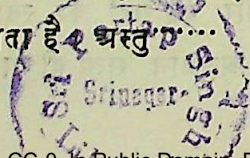
## 'परिस्थिति'

जिस समय महाराणा प्रतापसिंह मेवाड़ के सिंहासन पर बैठे उस समय मेवाड़ की हालत बड़ी खराब थी। शत्रुओं ने चारों ओर से उसे घेर रक्खा था। राणा प्रताप को भी मेवाड़ नरेश होकर क्या मिला? कुछ नहीं? कोष बिल्कुल खाली था चित्तौड़ में कोष होने के कारण यवनों ने उसको अपने अधिकार में कर लिया था। मुख्य चीज भी कोष ही है और उसीका महाराणा के पास अभाव था। सबसे बड़ी विपदा यही थी। क्योंकि सेना संचालन आदि का कार्य कोष की सहायता से ही हो सकता है। वस्तुतः मेवाड़ उस समय धनहीन था।

इसके अतिरिक्त यवनों के दांत मेवाड़ पर लगे हुये थे। चारों ओर मेवाड़ के शत्रु ही शत्रु थे। उसका मित्र कोई न था। महाराणा प्रताप ने नजर उठाकर चारों ओर देखा और उनके मुख से एक आह निकल पड़ी। क्यों? इसलिये कि उनकी जन्म भूमि यवनों द्वारा पददलित हो रही थी। अपने पिता की कायरता पर उन्हें बार बार क्रोध आता था। वह चित्तौड़ छोड़ कर क्यों भागे? क्या वह यवनों से युद्ध नहीं कर सकते थे। क्या वह क्षत्रिय वीर के पुत्र नहीं थे? राणा सांगा के नाम को उन्होंने क्यों कलङ्कित किया? आह यदि राणासाँगा के बाद उदयसिंह न हुए होते तो चित्तौड़ कभी यवनों के हाथ न पड़ता। चित्तौड़ के पतन का कारण उदयसिंह ही है। यह सोच कर प्रताप का हृदय दुख से भर जाता था।

प्रतापसिंह अकेले थे उनका सहायक कोई न था । सब बड़े २ राजपूत राजा अकबर से मिल गये थे। किन्तु प्रताप को इसकी कुछ चिन्ता न थी । उन्होंने अपनी जननी जन्म भूमि चित्तौड़ को स्वाधीन करने की प्रतिज्ञा की। उन्होंने प्रण किया कि जब तक शरीर में प्राण हैं तबतक वह चित्तौड़ के लिये लड़ते ही रहेंगे। यदि वह अपना जीवन चैन से न बिता सके तो यवनों को भी सुख से न सोने देंगे उनके प्राण जन्मभूमि की बेदी पर बलिदान होने के लिये ही हैं उनका शरीर चित्तौड़को स्वाधीन करने के लिये ही है। उनका शीस जन्मभूमि की भेंट चढ़ने के लिये ही है।

प्रताप के पास अधिक तो था ही क्या ? केवल महाराणा की उपाधि थी और कुछ नहीं। बड़ी विकट परिस्थिति थी । किन्तु महाराणा साहसी थे शक्तिमान थे। हिम्मत हारना वह जानते ही नहीं थे ऐसी हालत होने पर भी उन्होंने प्रतिज्ञा की—"जब तक चित्तौड़ को स्वतंत्र न कर लूंगा तब तक सोने के थाल में भोजन न करूँगा, चटाई पर शयन करूंगा।

अभी तक प्रताप की इस कठोर प्रतिज्ञा का पालन मेवाड़के नरेशों ने किया। अब तो बात ही दूसरी है जमाना ही दूसरा है, लेकिन कुछ अंश इस प्रतिज्ञा का अब भी उदयपुर में मौजूद है। भोजन करते समय सोनेके थालके नीचे पत्तल रखी जाती है व सोते समय बिस्तर के नीचे चटाई का या घास का कुछ हिस्सा भी रक्खा जाता है। यह सब प्रताप प्रतिज्ञा की आन रखने के

महाराना प्रताप की प्रतीज्ञा

लिये ही होता है। लेकिन समय के साथ ये सब बातें अब लोप होती जा रही हैं।
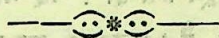
# चौथा परिच्छेद

## श····क्ति····सिं····ह

ऊपर लिखा जा चुका है कि महाराणा उदयसिंह के चौबीस बेटे थे और प्रतापसिंह उनमें सबसे बड़े थे। शक्तिसिंह भी प्रतापसिंह के छोटे भाईयों में से एक थे।

वास्तव में शक्तिसिंह 'यथानाम तथा गुण' थे। बचपन से ही वह बड़े वीर और पराक्रमी थे। उनके मुख पर वीरत्व की आभा सदैव दीप्त रहा करती थी। किन्तु खेद की बात तो यह थी कि महाराणा उदयसिंह उनसे सदैव अप्रसन्न रहा करते थे। उन्होंने शक्तिसिंहकी शक्ति की कद्र नहीं जानी। वह क्या जानते ? वह तो स्वयम ही विलासप्रिय और भीरु थे।

एक दिन की बात है कि महाराणा उदयसिंह का दरबार लगा हुआ था। शक्तिसिंह भी वहां मौजूद थे। उस समय उनकी उम्र केवल सात आठ वर्ष की थी, बालक ही थे। उसी समय वहां एक तलवार लाई गई। तलवार नङ्गी थी और खूब चमक रही थी। सब लोग उसको देख कर खुश हो रहे थे और कहते थे

तलवार बहुत अच्छी है। महाराणा ने भी उसको देखा और उसकी खूब प्रशंशा की। कुछ देर बाद कहने लगे—"तलवार तो अच्छी है लेकिन यह मालूम कैसे हो ? यह भी तो देखना चाहिये कि इसमें कितनी धार है। तलवार का यही गुण मुख्य है। इसके न होने से सब बातें बेकार हैं। बाहरी शोभा देखकर ही प्रशंसा करना बुद्धिमानी नहीं है।" ऐसा कह कर वह दरबार में बैठे हुये अपने वीर सरदारों की तरफ देखने लगे और बोले—

"लो देखो और इसकी परीक्षा करो कि यह कितनी तेज है।"

केवल आज्ञा की देरी थी। तलवार महाराणा के हाथ से लेली गई लेकिन अब यह विचार होने लगा कि परीक्षा किस चीज पर की जाये। उस समय दरबार में रक्खा ही क्या था जो परीक्षा की जाती। सब एक दूसरे के मुंह की ओर ताकने लगे। शक्तिसिंह भी बैठे हुये यह हाल देख रहे थे। अब तक उसकी ओर किसी का ध्यान भी न गया था। ध्यान देता ही कौन ? वह बालक, केवल सात आठ वर्ष का बालक, तलवार की क्या परीक्षा कर सकता था। परीक्षा करना तो दूर रहा वह तलवार को समझे ही क्या। यही ख्याल लोगों के दिलों में जमे हुये थे। महराणा का भी यही विचार था।

अचानक शक्तिसिंह उठ खड़े हुये। और कहने लगे—लाओ यह तलवार मुझे दो, मैं इसकी परीक्षा करूंगा" सब लोग इसको केवल उपहास या बचपन समझ कर ही चुप रहे।

लेकिन शक्तिसिंह चुप रहने वाले नहीं थे। वह फौरन आगे बढ़ गये और स्वयं ही वीर सरदारों से तलवार खींच कर ले आये। बीच दरबार में खड़े होकर उन्होंने तलवार से अपनी उंगली काट दी और कहा— 'तलवार ठीक है" यह कह कर तलवार उठाकर महाराणा को दे दी।

दरबार में सन्नाटा छा गया। सब लोग शक्तिसिंह के मुख की ओर देखने लगे। शक्तिसिंह के मुख पर विशाद का चिन्ह भी न था! उसे मानो उंगली कट जाने का कुछ दुख ही नहीं हुआ। उदयसिंह भी चकित होकर उसकी ओर देख रहे थे। वास्तव में आश्चर्य की बात ही थी। कांटा लग जाने से ही शरीर में बेचैनी हो जाती है यह तो तलवार थी। आजकल जिस तलवार को युवक उठा भी नहीं सकते ऐसी तलवार से एक बालक अपनी उङ्गली काट डाले। क्या यह आश्चर्य की बात नहीं। एक सात वर्ष के बालक का साहस क्या प्रेशंसनीय नहीं।

शक्तिसिंह की उंगली से खून बह रहा था किन्तु वह पूर्ववत ही प्रसन्नता पूर्वक मुस्करा रहा था। लोगों को आश्चर्य चकित देखकर वह क ने लगा—'आप सब लोग क्या अचम्भा कर रहे हैं। यह भी कोई आश्चर्य की बात है ? क्षत्रिय वीर तलवार की परिक्षा लकड़ी पर या अन्य किसी वस्तु पर नहीं करते। उनका शरीर ही तलवार की परीक्षा के लिये बना होता है। मैंने जो कुछ किया है वह आश्चर्य का कार्य नहीं क्षत्रियों के वीर बालक ऐसे ही हुआ करते हैं। मैंने वही किया

जो एक क्षत्रिय बालक को करना चाहये था। आप मेरी ओर देखकर चिन्तित क्यों हो रहे हो। चिन्ता की अथवा घबराने की कोई बात नहीं है। क्षत्रिय पुत्रों का जीवन तो रुधिर बहाने के लिये ही होता है।"

सब शान्त होकर शक्तिसिंह का वक्तव्य सुन रहे थे। किसी का साहस न हुआ कि कोई कुछ कह सके। सब सिर नीचा किये हुये चुपचाप जमीन की तरफ देख रहे थे। सब लोग शक्तिसिंह की वीरता पर मुग्ध होगये और मुक्तकण्ठ से उसकी प्रशंसा करने लगे। परन्तु उसके पिता उदयसिंह को यह बात अच्छी नहीं लगी। बात वास्तव में यह थी कि जब शक्तिसिंह का जन्म हुआ था तो एक ज्योतिषी ने भविष्य-वाणी की थी कि यह बालक एक दिन देश जाति का द्रोही बनेगा और कुल को कलंक लगायेगा किन्तु बहादुर भी बहुत होगा। यह बात उदयसिंह को बड़ी बुरी मालूम हुई। वह अपने पुत्र को इस प्रकार कलंकित देखना नहीं चाहता था। उसे यह सन्देह होगया कि कहीं यह उदयपुर ( मेवाड़ ) राज्य का ही विनाश न कर बैठे या अपने पिता या राज्य का शत्रु बन जाये। शायद उसको सबसे अधिक अपनी चिन्ता थी इसीलिये वह शक्तिसिंह से हमेशा नाराज रहता था और उसको सन्देह की दृष्टि से देखा करता था।

इस बार शक्तिसिंह की वीरता देखकर भी उसको हर्ष न हुआ। अपने पुत्र का पराक्रम देखकर कौन ऐसा पिता होगा जो खुश न होता हो लेकिन उदयसिंह ऐसा नहीं था। उसको अधिक

सन्देह होने लगा। उसने सोचा कि जब बचपन ही में शक्तिसिंह का यह हाल है तो बड़ा होकर न जाने यह कैसा बनेगा और क्या न क्या कर गुजरेगा ? अवश्य किसी दिन यह देश के लिये शत्रु सिद्ध होगा। ज्योतिषी की वाणी असत्य नहीं हो सकती। उसकी सत्यता धीरे २ प्रकट होती ही जा रही है। उदयसिंह की चिन्ता अधिक बढ़ गई और वह शक्ति सिंह की ओर से शंकित रहने लगा।

कुछ समय पश्चात् उसके मन में एक बड़ा भयङ्कर राक्षसी विचार उत्पन्न हो गया। उसने शक्तिसिंह को मार डालने का विचार किया। निर्दयी पिता के हृदय में जरा भी दया न आई। और एक दिन मौका देखकर महाराणा ने शक्तिसिंह को जल्लादों के सुपुर्द कर दिया और कह दिया कि इस हत्या का किसी को पता न लगे वरना प्रजा आन्दोलन कर बैठेगी और सरदार भी विरुद्ध हो जायेंगे। इसको जङ्गल में ले जाकर ऐसी जगह मार डालना कि किसी को मालूम न हो सके। हत्या हो जाने के बाद तो कुछ न कुछ बहाना करके सबको शान्त कर दिया जायेगा।

पाषाण-हृदय जल्लाद भी पिता के मुख से पुत्र के प्रति ऐसी कठोर हत्या की आज्ञा सुन कर चौंक पड़े। किन्तु वह बेचारे क्या करते ? वह कह भी क्या सकते थे ? महाराणा की आज्ञा पालन करना ही उनका मुख्य कर्त्तव्य था। वह आज्ञा का उल्लङ्घन कैसे करते ?

गुप्त रखने पर भी यह समाचार सालुम्ब्रा सरदार को मालूम हो ही गया। उस को उदयसिंह का यह कार्य बड़ा बुरा लगा, लेकिन वह भी क्या कर सकता था। अन्ततः उसने एक उपाय शक्तिसिंह को बचाने का सोच ही लिया। वह उदयसिंहके पास गया और बिनय पूर्वक कहने लगा—"महाराणा! मैंने अबतक आपकी सेवा की है और आपकी पूर्ण कृपा मुझ पर रही है। जो कुछ मैंनेचाहा वही हुआ, जो कुछ मैंने आप से मांगा वही आप ने मुझे दिया भी। आज भी में आप से कुछ निवेदन करना चाहता हूँ। आंशा है आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करेंगे।" महाराणा ने कहा—"हां हाँ कहो क्या बात है? तुम क्या चाहते हो?"

सालुम्ब्रा सरदार बोला—"महाराणा! कुछ निवेदन करने के पूर्व मैं चाहता हूं कि पहिले आप मुझे बचन दें कि आप अवश्य मेरी याचना पूर्ण करेंगे। आप सकोच न करें, मैं यथा योग्य याचना ही करूंगा।" महाराणा पहिले तो सकुचाये परन्तु कुछ क्षण भर के उपरान्त कहने लगे-' यथा साध्य मैं तुम्हारी याचना को पूर्ण करने की चेष्टा करूंगा।" तुम जो कुछ कहना चाहते हो फौरन कह डालो।"

सालुम्ब्रा ने कहा—"महाराणा मैं पुत्र गोद लेना चाहता हूं क्योंकि इस समय तक मैं सन्तान हीन हूँ और मेरी सम्पत्ति का कोई भी उत्तराधिकारी नहीं है।"

महाराणा—' इसमें निवेदन करने की क्या बात है? तुम

जिसे चाहो गोद गोद ले लो, मुझे इसमें कोई ऐतराज नहीं है।"

सालुम्ब्रा—"मैं ऐसे बालक को गोद लेना चाहता हूँ जिससे आपका विशेष सम्बन्ध है।

महाराणा—' वह कौन है? कहते क्यों नहीं?"

सालुम्ब्रा—"वह आपका ही पुत्र शक्तिसिंह है?'

महाराणा—'शक्तिसिंह! उसको मैं कैसे दे सकता हूं?"

सालुम्ब्रा—"यह तुम क्या कह रहे हो?"

सालुम्ब्रा—"महाराणा! आप पहले मुझे बचन दे चुके हैं क्या अब बचन से विमुख होना चाहते हो ? इसके अतिरिक्त आपकी इसमें कोई हानि नहीं। आप के अनेकों पुत्र हैं और शक्तिसिंह युवराज भी नहीं है।"

महाराणा—"युवराज भी नहीं है?"

सालुम्ब्रा—' किन्तु मुझे मालूम हुआ है कि आप शक्तिसिंह को मार डालना चाहते हैं और उसके वध की आज्ञा भी आपने दे दी है। आप उसका बध क्यों करते हैं। महाराणा! वह अबोध है और निर्दोष है ऐसा कोई अपराध उसने नहीं किया जिसके कारण वह ऐसे कठोर दंड का अधिकारी हो। किन्तु खैर, यदि आप की यही इच्छा है तो मुझे कुछ नहीं कहना है। मैं तो केवल यही प्रार्थना करता हूँ कि आप शक्तिसिंह को मुझे दे दें। आप का भी उद्देश्य पूरा होगा और मेरा भी।'

यह बात सुन कर महाराणा के चेहरे का रङ्ग उड़ गया। उनको इस बात का विशेषतयः आश्चर्य हुआ कि शक्तिसिंह के बध का समाचार सालुम्ब्रा को कैसे मालूम हो गया। इतना गुप्त रहने पर भी यह समाचार जाहिर कैसे हो गया। अस्तु.........जो हो गया सो गया......अब क्या हो सकता है ? वह सालुम्ब्रा की प्रार्थना शायद स्वीकार नहीं करते लेकिन इस समाचार के फैलने का उसको भय लगा हुआ था इसलिये उसकी प्रार्थना को स्वीकार करना ही उन्होंने उचित समझा। वह सालुम्ब्रा से कहने लगे–"सालुम्ब्रा मैं तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार करता हूं किन्तु ध्यान रहे शक्तिसिंह के बध का समाचार जिस प्रकार तुम्हें मालूम हो गया वैसे किसी दूसरे को मालूम न होने पाये। इस बात को गुप्त ही रखना।" सालुम्ब्रा ने यह बात स्वीकार कर ली।

शुभ समय व मुहूर्त में गोद लेने की प्रथा बड़ी धूम-धाम से पूरी हो गई और शक्तिसिंह सालुम्ब्रा सरदार के दत्तक पुत्र कहलाने लगे। इस प्रकार सालुम्ब्रा ने शक्तिसिंह की प्राण रक्षा अपनी बुद्धिमानी, चातुराई एवं नीतियुक्त युक्ति से कर ही ली अन्यथा शक्तिसिंह का जीवन-दीपक तत्काल ही बुझ जाता। किन्तु शक्तिसिंह को स्वयम् भी इन बातों का कुछ पता नहीं था। वह तो यही जानते थे कि वह सालुम्ब्रा के दत्तक पुत्र हो गये हैं।

———

## वैमनस्य

सालुम्ब्रा सरदार शक्तिसिंह को बड़े प्रेम से रखते थे किन्तु विधाता की गति बड़ी विचित्र है। कुछ ही समय पश्चात सालुम्ब्रा की पत्नि के गर्भ रह गया और वृद्धावस्था में उन्हें एक पुत्र प्राप्त हुआ। कहते हैं कि बुड़ापे की सन्तान बहुत प्यारी होती है, सत्य ही है। सालुम्ब्रा अपने पुत्र को अधिक प्रेम करने लगे और शक्तिसिंह के प्रति उदासीनता के भाव प्रकट करने लगे। उन्हें यह चिन्ता हुई कि मेरा उत्तराधिकारी कौन होगा? वह अपने पुत्र के होते हुये शक्तिसिंह को अपना उत्तराधिकारी नहीं बनाना चाहते थे। किंतु हक शक्तिसिंह का ही था क्योंकि वह इसीलिये गोद लाया गया था। समस्त देश को यह बात मालूम थी।

उसके भाव यह छुपे न रहे। महाराणा उदयसिंह के मरने पर जब प्रतापसिंह सिंहासन पर बैठा तो उन्होंने शक्तिसिंह को अपने पास बुला लिया। उन्होंने सोचा कि कहीं ऐसा न हो कि सालुम्ब्रा के यहां रह कर शक्तिसिंह का कुछ अहित न हो और यह सम्भव ही था। ऐसा बहुत हो जाता है। सम्भव है कि वह षडयन्त्र करके शक्तिसिंह को मरवा डालता। महाराणा प्रतापसिंह ने बड़ी बुद्धिमानी से काम लिया। यह उनकी दूरदर्शिता थी।

प्रताप के सिंहासनारूढ़ होने की समस्त मेवाड़ प्रदेश को प्रसन्नता हो रही थी। सब वीर सरदारों ने मिलकर इस खुशी

में शिकार खेलने का निश्चय किया। एक घोर घने जंगल में जाकर सब लोग सूअर का शिकार खेलने लगे। शिकार बड़े आनन्द से सम्पन्न हुआ। सभी लोग विजयी रहे और खुशियां मानने लगे। महाराणा प्रताप और शक्तिसिंह दोनों भाई भी शिकार खेलने आये थे। यह दोनों एक साथ शिकार खेल रहे थे। शिकार की तलाश में यह लोग दूर निकल गये। वहां कुछ दूर पर उन्हें एक सूअर दिखाई दिया। दोनों ने एक साथ उस पर प्रहार किया। परिणाम स्वरूप वह बचने की लाख कोशिशें करने पर मारा गया। चोट ऐसी लगी थी कि उसको दम लेने की भी फुरसत न मिली और तत्काल ही मरगया।

दोनों भाई खुश होते हुये वाराह ( सूअर ) के पास पहुँचे। उसके शरीर पर केवल एक ही घाव लगा था। यह देखकर शक्तिसिंह ने कहा—"देखिये भाई साहब! मेरे प्रहार का निशान पशु पर ज्यूं का त्यूं बना हुआ है। यह सूअर मेरी ही बरछी से मरा है।" प्रताप ने शक्तिसिंह की इस बातपर कोई ध्यान न दिया और वह चुप ही रहे। शक्तिसिंह को यह बात बहुत बुरी लगी। वह लाड़ प्यार में पला हुआ राजकुमार था अतः हठी और अभिमानी हो गया था। वह चाहता था कि प्रताप उसकी वीरता की प्रशंसा करे और वाराह को मारने का यश उसी को प्राप्त हो। परंतु प्रताप इन व्यर्थ की बातों में पड़ना नहीं चाहते थे। शक्तिसिंह बार बार वही बात कहता था लेकिन प्रताप सुनी अन-सुनी कर जाते थे। अंत में जब प्रताप सुनते सुनते तंग आ गये तो

कहने लगे—'शक्तिसिंह। व्यर्थ बात क्यों कहते हो? तुम्हारे हाथ से सूअर मरा या मेरे हाथ से. बात तो एक ही है। व्यर्थ विवाद करने से क्या लाभ है? आखिर सूअर तो मर ही गया है। चलो अधिक बातें न बनाओ! यह शिकार अब देवी की भेंट में काम आयेगा।" शक्तिसिंह को इस उत्तर से भला कब सन्तोष हो सकता था। वह तो प्रताप के मुख से अपनी प्रशंसा सुनना चाहता था परन्तु प्रताप भी ऐसा करने वाले न थे। शक्तिसिंह के हृदय में कुटिलता ने अपना स्थान कर लिया और वह दृढ़ होता ही गया? इधर प्रताप को भी शक्तिसिंह पर क्रोध आगया आखिर मनुष्य ही तो थे, कबतक शांत रहते। प्रताप भी क्रोधी स्वभाव के थे। उनके हृदय में भी स्वाभिमान भरा हुआ था। वह झुंझलाकर कहने लगे—"शक्तिसिंह! मैं तुम्हारा मतलब समझता हूँ। तुम चाहते हो कि मैं तुम्हारी वीरता की बढ़ाई करूँ और सूअर को मारने का यश तुम्हें अकेले को ही प्राप्त करने दूँ? याद रक्खो तुम्हारी यह मनोवृत्ति अच्छी नहीं है और न मुझको यह पसन्द ही है! शक्तिसिंह को भी यह सुन कर क्रोध आगया। वह कहने लगा—'यदि आप इस बात को स्वीकार नहीं करते कि यह शिकार मेरे ही हाथों से मारा गया है तो आइये वीरता का निर्णय कर लीजिये। मैदान में मालूम हो जायेगा कि अधिक वीर कौन है। द्वन्द्व युद्ध में जो विजय प्राप्त करेगा यह शिकार भी उसी का माना जायगा। आइये संकोच न करिये संसार देखेगा कि एक तुच्छ शिकार का निर्णय भाई

भाई का द्वन्द्व युद्ध—नहीं नहीं भाइयों का खून करेगा ?" यह कहकर शक्तिसिंह ने म्यान से तलवार निकाल ली और युद्ध के लिये तन कर खड़ा होगया। प्रताप जैसा वीर एक निमन्त्रणको अस्वीकार कैसे कर सकता था ? उनको भी क्रोध आ गया और वह तलवार निकाल-कर शक्तिसिंह के सामने द्वंद्व युद्ध करने के लिये जा खड़े हुये। भाई भाई का युद्ध होने लगा।

उस समय सब लोग भी वहां आचुके थे। सबने आश्चर्य से देखा कि मेवाड़ में भाई भाई का युद्ध हो रहा है। अरे यह ! क्या ? मेवाड़ की ऐसी भयंकर परस्थिति और उस पर भी पारस्परिक वैमनस्य ! भगवान् !! मेवाड़ की रक्षा करो!!! सेकड़ों आदमी वहां मौजूद थे लेकिन किसी की हिम्मत नहीं होती थी कि बीच बचाव करदे या एक शब्द भी दोनों भाइयों से कहे—दोनों का प्रचण्ड क्रोध देख कर सब लोग भयभीत हो रहे थे। आह ! क्या सचमुच ही मेवाड़ नष्ठ होने वाला है। क्या इसी प्रकार बाप्पा रावल और महावीर संग्रामसिंह की सन्तति कलङ्कित होने वाली है। हे प्रभो। क्या अनर्थ होने वाला है। जिस राज्य को यवन लोग लाखचेष्टा करने पर नष्ट नहीं कर सके क्या वह सब स्वतः ही रसातल को जाना चाहता है! यह पारस्परिक कलह क्या परिणाम दिखायेगा ? कुछ समझ में नहीं आता ? क्या किया जाये ? क्या करें ? क्या न करें ? कुछ वीर सरदार हिम्मत करके दोनों भाइयों को समझाते भी थे लेकिन उनको समझाने का प्रभाव बिल्कुल उल्टा होता था। ज्यूं २ वह कुछ

कहते थे त्यूं त्यूं उनका रूप विकराल होता जारहा था। एक दूसरे की जान लेने को तुला हुआ था। भयानक जंगल में तलवारों की झंकार बड़ी भयंकर मालूम होती थी। पास ही सैकड़ों सैनिक, सरदार इत्यादि खड़े हुये थे। सब लोगों के दिलों में उथल पुथल मची हुई थी—"अब क्या होगा ? क्या होने वाला है ?" यही सोचकर सब चिन्तित हो रहे थे। भावी परिणाम का विचार आते ही सब के मुखमंडल मुरझा जाते थे। और सब व्याकुल हो उठते थे।

अन्त में मेवाड़ के वृद्ध राजपुरोहित से यह दृष्य न देखा गया। वह मेवाड़ राज्य का सच्चा शुभचिन्तक था। मेवाड़ की सेवा करते २ ही उसके बाल पके थे। मेवाड़ की दुर्दशा वह अपने ही नेत्रों से किस प्रकार देख सकता था ? वह साहस करके दोनों भाइयों के निकट आगया और उच्च स्वर से कहने लगा— "बन्द करो ! बंद करो !! इस पारस्परिक युद्धको अभी बन्दकरो" मेवाड़ प्रदेश की अपनी जननी जन्म भूमि की दयनीय दशा पर जरा विचार करो और ऐसी अदूरदर्शिता से काम न लो। भाई भाई की लड़ाई अच्छी नहीं होती। महाभारत का क्या परिणाम हुआ यह सबको मालूम है। यह सब कुछ जानते हुये भी दोनों भाई नादान क्यों बन रहे हैं ? इस प्रकार अपनीशक्ति को नष्ट न करो इसको शत्रुओं के लिये सुरक्षित रखलो। शत्रु कम बलवान नहीं है उनसे लोहा लेना आसान नहीं है उनका सामना करने के लिये अपार शक्ति की आवश्यकता है। इस

पारस्परिक युद्ध का क्या परिणाम होगा ? यह तुम्हें मालूम नहीं! मेवाड़ प्रदेश मट्टी में मिल जायगा। जो काम शत्रु भी न करसके वह स्वयम्म ही मेवाड़ के कर्णधारों द्वारा ही सम्पन्न हो जायेगा ? क्या इससे मेवाड़ के इतिहास को कलंक न लगेगा? क्या संसार तुम लोगों की हंसी न उड़ायेगा ? क्या शत्रुओं को तुम्हारी अपेक्षा करने का अवसर प्राप्त न होगा ? यवनों को जब इस युद्ध का हाय मालूम होगा तो वह लोग क्या करेंगे ? हमें मालूम है। वह मेवाड़ को तहस नहस कर डालेंगे और इसमें रुकावट डालने वाला कोई न होगा । इसलिये मैं फिर कहता हूँ मान जाओ। जरा२ सी बातोंपर ध्यान देना बुद्धिमानी नहीं कहलाती महाराणा प्रताप ! तुम बड़े भाई हो अपने अनुज शक्तिसिंह को क्षमा करदो। बड़े भाई छोटे भाईयोंकी बातों पर ध्यान नहीं देते। तुम शक्तिसिंह के पिता के स्थान पर हो। कुछ ख्याल न करोऔर लड़ाई बन्द करदो, शक्तिसिंह ! तुम भी अपनी हठछोड़ो। छोटेको बड़ों के मुंह लगना शोभा नहींदेता। तुम्हें प्रतापका आदर करना चाहिये वह तुम्हारे पिता के स्थान पर है और मेवाड़ के अधीश्वर हैं इसलिये तुम ही मानजाओ। मैंने तुम मोनों को बचपनसे गोद में खिलाया है। तुम भी मेरा आदर करते हो और मेरी बात मानते हो!क्या आज मेरी इतनीसी बात नहीं मानोंगे लेकिन वहां कौन सुनता था। दोनों भाई एक दूसरे के खून के प्यासे हो रहे थे। नक्कारखाने में तूती की आवाज का भला क्या असर हो ?

राज पुरोहित ने जब यह देखा कि उनका कहने का कुछ भी प्रभाव न पड़ा तो उनको बड़ा दुःख हुआ। उसके हृदय में भयंकर भाव उत्पन्न होने लगे। वह आगे बढ़ा और दोनों भाईयों के सामने आकर कहने लगा—"अच्छा! तुम नहीं मानते तो न सही परन्तु मैं अपने नेत्रों से यह युद्ध नहीं देख सकता। इस फूट का दुष्परिणाम देखने के लिये अब मैं इस संसार में जीवित नहीं रहूँगा। परन्तु याद रक्खो तुम पछताओगे और खूब पछताओगे। हे भगवान! इन दोनों भाइयों को सुबुद्धि प्रदान कर। जो देश अब तक गौरव से अपना सिर ऊँचा किये हुए है, उसकी लाज अब तेरे ही हाथ है। मेवाड़ की प्रतिष्ठा स्वतंत्रता अब तेरी ही दया पर अवलम्बित है। प्रभो! बाप्पारावल और संग्रामसिंह के नाम को बट्टा न लगने पाये। उनका वंश उनका प्यारा देश कलंकित न हो सके। बस मेरी यही अन्तिम कामना है। दीनबन्धु इसे अवश्य पूर्ण करना। यह दोनों भाई अभी नादान हैं। यह नहीं समझते कि हम क्या कर रहे हैं। यह जवानी के जोस में दीवाने हो रहे हैं। इनको क्षमा कर दे और इन पर दया रख।

यह कहते कहते वृद्ध पुरोहित ने अपने सीने में अपने हाथ से ही कटार मार ली और वह वही धड़ाम से गिर पड़े। सब लोग उनकी ओर दौड़े परन्तु उस समय तक राज पुरोहित के प्राण पखेरू उड़ चुके थे। प्रताप और शक्तिसिंह ने जब यह दशा देखी तो युद्ध बन्द कर दिया और राज पुरोहित की

मृत्यु का शोक मनाने लगे। वास्तव में दोनों को उस समय पश्चात्ताप हो रहा था क्योंकि उनके ही कारण उस राज-भक्त के प्राण गये थे। परन्तु अब क्या हो सकता था—"अब पछताये क्या होता है जब चिड़ियां चुग गईं खेत"—चारों तरफ शोक छा गया। प्रत्येक व्यक्ति दुःख के आंसू बहा रहा था। ऐसे राजभक्त को खोकर भला किसको दुःख न होता? महाराणा प्रताप ने शक्तिसिंह की ओर देख कर कहा—"शक्तिसिंह! यह सब हमारे पारस्परिक युद्ध का ही परिणाम है। विजय किसकी हुई यह कोई नहीं कह सकता और आगे युद्ध भी नहीं हो सकता, बस यहीं अपने युद्ध का अन्त समझो और यही फैसला। जो कुछ होना था वह हो चला। मैं जानता हूँ कि तुम्हारे हृदय में अब भी अशांति मची हुई है और वह अभी दूर भी नहीं हो सकती। यह अशान्ति न केवल हमारे तुम्हारे लिये प्रत्युत समस्त देश के लिये हानि कारक सिद्ध होगी। इसलिये मेरी आज्ञा है कि तुम मेवाड़ प्रदेश से बाहर निकल जाओ। बस यही तुम्हारे लिये उपयुक्त दण्ड है। एक नरेश की हैसियत से मैं तुम्हें देश से निकल जाने की आज्ञा देता हूँ।" प्रताप का यह वक्तव्य सुन कर सर्वत्र सन्नाटा छा गया और सब सरदार एक दूसरे का मुख ताकने लगे। इन दोनों भाइयों के बीच में कौन बोलता? सब चुप ही खड़े रहे। और शक्तिसिंह······?

वह भला ऐसा अपमान कब सहन कर सकता था। वह वहाँ अधिक न ठहर सका और वहां से चला गया। न केवल

उसी क्षण के लिये अपितु सदा के लिये ही उसने मेवाड़ को त्याग दिया। उसके हृदय में प्रतिहिंसा की आग भड़क उठी। वह मानों प्रताप को भस्म ही कर देना चाहती थी। प्रतापसिंह से बदला लेने के लिये उस भयङ्कर अग्नि की लपटें प्रज्वलित हो रही थीं !! इस दिन के इस अपमान को शक्तिसिंह न भूला—न भूला और कभी नहीं भूला—

आह ! मेवाड़ का एक वीर कम हो गया। देश का एक हाथ कट गया। किस कारण ? केवल जरासी बात पर बात का बतंगड़ हो गया और फूट, वैमनस्य का बीजारोपण होगया। अरी डायन फूट तेरा सत्यानाश हो ! मेवाड़ के लिये तू क्यों कांटे बो रही है ? तूने पहले ही क्या जौहर दिखाये हैं। हिन्दुओं की जो दयनीय दशा आज दिखाई दे रही है वह सब तेरी ही तो माया है। क्या अभी तक तुझे संतोष नहीं हुआ ? अब तेरी क्या इच्छा है दुष्टे !

————

## यवनों से मित्रता

शक्तिसिंह ने मेवाड़ को त्याग कर विचार किया कि अब उसको कहां जाना चाहिये और क्या करना चाहिये। उसके हृदय में प्रतिहिंसा की आग जल रही थी। वह महाराणा प्रताप से अपने अपमान का बदला लेना चाहता था। वह बदला लेने का उपाय सोचने लगा। परन्तु वह अकेला क्या करे ? उसको

सहायता की आवश्यकता थी। उसके पास प्रथम तो रहने के लिये भी स्थान नहीं था। दूसरे कोई साथी भी नहीं। वह करे तो क्या करे?

उसने चारों ओर दृष्टि फैलाई और देखा कि महाराणा प्रताप का सब से बड़ा दुश्मन अगर कोई है तो अकबर है। अकबर हिन्दुस्तान का सम्राट है उसकी शक्ति भी बढ़ी चढ़ी हुई है और वह प्रताप का कट्टर शत्रु भी है। इसीलिये शक्तिसिंह ने निश्चय किया कि अकबर से ही मित्रता की जाये और उस की सहायता से ही प्रताप से बदला लेने का अवसर भी हाथ लग जाएगा। आह! मेवाड़-वीर के हृदय में कैसे कुभाव पैदा हो रहे थे।

ऐसे कुत्सित विचारों को लिये हुये वह अकबर से मिलने के लिये चल पड़ा। रास्ते भर उसके हृदय में विचारों का युद्ध हो रहा था। उसके पैर उठते थे और रुक जाते थे। कभी कभी ख्याल होता था कि "मैं क्या कर रहा हूं। एक म्लेच्छ सम्राट से मित्रता करने जा रहा हूं। क्या यह मेरा अनुचित कार्य है? हां! निस्संदेह!! मेवाड़ प्रदेश कलंकित हो जायगा। आज तक हमारे पूर्वजों ने कभी यवनों से मित्रता न की। उनकी कीर्ति नष्ट हो जायगी।" यह सोच कर उसके पैर रुक जाते थे। और वह पीछे ही लौटने को तैयार हो जाता था किन्तु दूसरे ही क्षण जब उसको अपने अपमान का ख्याल आ जाता था तो उसका हृदय जल उठता था। उसके विचार बदल जाते थे,

और वह फिर देहली की ओर बढ़ने लगता था। कभी आगे बढ़ता और कभी पीछे हटता है। अजब हालत हो रही थी।

अन्ततोगत्वा वह देहली पहुँच ही गया और उसने अपने आने का समाचार अकबर को कहला भेजा। "अन्धे को क्या चाहिये ? दो आंखें।" अकबर तो यही चाहता था। वह खिल गया उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। मेवाड़ का एक प्रमुख वीर, महाराणा प्रताप का सहोदर, उसका मित्र बनेगा। क्या यह कम खुशी की बात है ? शक्तिसिंह के बारे में वह पहले भी सुन चुका था। वह जानता था कि शक्तिसिंह बड़ा बहादुर है। उसने बड़े आदर से शक्तिसिंह को बुलाया।

शक्तिसिंह के आते ही अकबर उससे मिलने के लिये आगे बढ़ा। उसने शक्तिसिंह को गले से लगा लिया और अत्यन्त प्रेम प्रकट किया। बड़े आदरसे उसको बिठलाया और बड़े सन्मान से वार्तालाप किया। शक्तिसिंह इस आदर सन्मान को पाकर बड़ा खुश हुआ। भोला वीर अकबर की राजनैतिक चालों में आ गया ऐसा सन्मान उसको मेवाड़ में कभी प्राप्त नहीं हुआ था और न होने की कभी आशा ही थी। उसने अकबर से कह दिया कि उसने महाराणा प्रताप से सम्बन्ध बिच्छेद कर लिया है। वह प्रताप के पास रहना अब नहीं चाहता। प्रताप से उसकी बिगड़ गई है। वह उसका शत्रु बन गया है।

प्रिय पाठको ! याद है विभीषण की कथा। यहां भी वही हाल है न ? अन्तर यह है कि वह तो धर्मात्मा राम से जाकर

मिला था और यह अधर्मी अकबर से। परन्तु स्थिति दोनों की एक ही है। वह भी भाई द्वारा निकाला गया था और यह भी विभीषण ने राम से मिलकर रावण का समस्त वंश नष्ट कराया था और देखें अब शक्तिसिंह क्या करने वाला है। "घर का भेदी लङ्का ढाये" यह कहावत सत्य ही तो है। आह! खेद! महाखेद !!!

"इस घर में आग लग गई घर के चिराग से"

अकबर ने भी सब से बड़ा फाइदा यही सोचा कि घर का भेदी मिल जाने से बहुत कुछ लाभ होनेकी सम्भावना है इसलिये शक्तिसिंह को मित्र बना लेना चाहिये। दूसरे शक्तिसिंह बड़ा बहादुर भी है, मेवाड़ नरेश का भाई है। यह सब लाभ क्या कम है? उसने शक्तिसिंह को वचन दिया कि वह हमेशा उसका मित्र बना रहेगा। और उसकी यथासाध्य सहायता करेगा शक्तिसिंह अब वहीं रहने लगा। वहीं दरबार में उसको एक उच्च पद मिल गया। वह सुखपूर्वक अपने जीवन के दिन व्यतीत करने लगा।

---

# पांचवां परिच्छेद

## अ···क· ब···र

अकबर मुगल राज्य के संस्थापक बाबर का पौत्र था। उसका पूरा नाम "जलालुद्दीन" था और उपनाम 'अकबर' था।

"अकबर" नाम से ही वह सर्वत्र प्रसिद्ध था। "अकबर" शब्द का अर्थ 'महान' है। वास्तव में उस समय वह 'महान' ही था उसका पिता हुमायूं उसे बचपन में ही छोड़कर मर गया था। उसके फूफा एवं शिक्षक बैरमखां ने ही उसका पालन-पोषण किया था। तेरह वर्ष की अवस्था में वह देहली के सिंहासन पर बैठा था किन्तु राज्य के अधिकार उसको प्राप्त नहीं थे। अठारह वर्ष की अवस्था में उसने सब अधिकार अपने हाथों में ले लिये। वह सम्राट कैसे बना और आरम्भ में उसको किन२ घटनाओं का सामना करना पड़ा,इन सब बातों का बर्णन करने से यहां कोई लाभ नहीं। हमें अकबर का इतिहास नहीं लिखना है। केवल संक्षिप्त परिचय देकर ही पाठकों को इसके विषय में कुछ बताना है।

जिस समय अकबर देहली का सम्राट बना हुआ था, उस समय मेवाड़ के अधीश्वर महाराणा उदयसिंह थे जिनका हाल पीछे लिखा जा चुका है। अकबर ने उनकी कायरता से कितना लाभ उठाया यह भी पहले बता दिया गया है।

अकबर ने सम्राट बनते ही चारों ओर एक सरसरी नजर डाली। उसने देखा कि भारतवर्ष हिन्दुओं का है और उन्हीं की यहाँ अधिकता भी है। सब से बलवान जाति भी उसको यही मालूम हुई। शक्ति में यवन आदि कोई भी हिंदुओं के समान नहीं थे। उसने पूर्व का इतिहास देखा और मालूम किया कि बिना हिन्दुओं से मित्रता किये यवन अपना राज्य

स्थापित करने में यहां असफल ही रहे। अलाउद्दीन का क्या परिणाम हुआ ? थोड़े दिनों की बहार रही फिर वही मोची के मोची। इसी प्रकार अन्य यवन बादशाह भी अधिकतर असफल ही रहे। हिंदुओं से लोहा लेना आसान नहीं, बड़ा कठिन काम था। विशेषतय: राजपूत जाति का तो नाम ही सुनकर लोगों का खून सूख जाता था। लेकिन फारसी में कहावत है:—

"हर जवाले हर कमाले हर कमाले राजवाल"

अर्थात् "जो उन्नति करता है उसका पतन भी होता है और जिसका पतन होता है उसकी उन्नति भी होती है।" हिंदुओं का यही हाल था। हजारों वर्ष से हिंदू भारतवर्ष के राजा होते हुये चले आ रहे थे। भारतवर्ष के ही क्यों समस्त संसार के चक्रवर्त्ती राजा भी हिन्दू ही कहलाये हैं। जो उन्नति हिंदुओं ने कर दिखाई वह कौन कर सकता है। हम पक्षपात नहीं कर रह हैं। अपितु सत्य ही कह रहे हैं संसार का इतिहास इस हमारे कथन का साक्षी है। अतः अब उनकी अवनित का समय आ भी गया तो आश्चर्य ही क्या है। यवनों की किस्मत का सितारा चमक रहा था। हिंदुओं का सौभाग्य-सूर्य अस्ताचल की ओर पयान करता जा रहा था। किंतु यह सब हिंदुओं के कारण ही हुआ। उन्होंने विचारहीन होकर स्वयं ही अपने पैरों में कुल्हाड़ी मारी। सत्य तो यह है कि "विनाश काले विपरीत बुद्धि" जब पतन का समय आता है तो बुद्धि भी स्वतः ही उलटी हो जाती है और वैसे ही काम होने

लगते हैं। कुछ भी हो हमारे कहने का प्रयोजन तो यह है कि यवन जाति की किस्मत का सितारा बुलन्दी पर था।

अकबर भी तो यवन ही था। वह उन्नति क्यों न करता वास्तव में वह किस्मत का सिकन्दर था। उसका भाग्य अच्छा था। भविष्य उज्वल था। किसी अच्छे मुहूर्त में ही उसने जन्म लिया था। विधाता की उस पर पूर्ण कृपा थी इसीलिये तो जो कुछ वह करता था अपने हित के लिये ही करता था और उसकी उन्नति होती ही जा रही थी। न जाने उस पर कौनसा जादू था। कौनसा आकर्षण था कि समस्त देश ने उसको अपना लिया। देश उसका हो गया और वह देश का हो गया। भारत माता ने उसको अपनी गोद में आश्रय दिया और सप्रेम बिठाया। वह भाग्यशाली था, वास्तव में महान भाग्यशाली था। क्या ऐसा उज्ज्वल भाग्य भी किसी का हो सकता है? हमें तो सन्देह है।

अकबर की कई लेखकों ने बड़ी प्रशंसा की है। कई इतिहासकारों ने भी उसकी प्रशंसा में पृष्ठ के पृष्ठ रङ्ग डाले हैं। वास्तव में बात भी ठीक है, वह प्रशंसा के ही योग्य था। जिस कूट नीति से उसने अपना राज्य स्थापित किया वह कम प्रशंसा के योग्य न थी। लोग कहते हैं वह हिन्दुओं का सच्चा हितैषी था। उसका हृदय दया से परिपूर्ण था। धार्मिक पक्षपात वह कदापि नहीं करता था उसका चरित्र उज्ज्वल था। परन्तु वह कैसा था और क्या था इसका अनुमान पाठकगण स्वयं ही

लगा लेंगे जब कि प्रस्तुत पुस्तक को वे आद्योपांत पढ़ लेंगे। उसके कार्य स्वतः ही उसका चरित्र प्रकट कर देंगे। किसी के कहने सुनने से क्या लाभ ? कई मुसलमान लेखक भी उसको बुरा भला कहते हैं क्योंकि वह हिन्दुओं का मित्र था और उसने हिन्दुओं को अपने दरबार में मुख्य पद दे रक्खे थे। परन्तु यह उन मुसलमान लेखकों की भूल है। उसने जो कुछ भी किया मुसलमानों की भलाई के लिये ही किया। मुसलमानों के विरुद्ध उसने कोई भी कार्य नहीं किया। यदि वह कुछ करता भी था तो वह उसकी कूट नीति ही थी और कुछ नहीं।

## हिन्दुओं से मित्रता

सिंहासनारूढ़ होते ही वह यह जान गया था कि बिना हिंदुओं से मेलजोल किये काम नहीं चल सकता। अतः उसने यही निश्चय किया कि हिन्दुओं को अपना मित्र बनाया जाये। वह बड़ा बुद्धिमान और दूरदर्शी था। प्रत्येक कार्य सोच समझ कर करता था। धीरे धीरे उसका चक्र चलने लगा, और उसकी नीति सफल होने लगी। हिन्दुओं में फूट तो हमेशा से ही रही है, इसलिये अकबर ने इससे भी लाभ उठा ही लिया। हिन्दू राजा उसके मित्र बनने लगे और अकबर उनका स्वागत करने लगा। सब से अधिक ध्यान उसने राजपूताना के राजपूतों पर दिया। एक एक करके वहां के राजाओं को वह अपना मित्र बनाने लगा। यही लोग सब से अधिक वीर भी

थे। अन्ततः राजपूताना के लगभग सभी राजा उसके मित्र बन गये केवल कुछ ही शेष रह गये।

कुछ राजा ऐसे भी थे जिन्होंने मित्रता तो करली किन्तु घनिष्ठता स्थापित न की अर्थात् वह उसके आधीन रह कर जीवन व्यतीत करना नहीं चाहते थे। अकबर ने उनकी शर्तें भी स्वीकार कर लीं। यों तो राजपूताना के अन्य राजा भी उसके दास बन कर तो नहीं रहे मित्रता का ही सम्बन्ध उन्होंने स्थापित किया और अकबर का व्यवहार भी उनके साथ मित्रों जैसा ही रहा। परन्तु हां, यह बात अवश्य थी कि उन्होंने अकबर को अपना सम्राट स्वीकार कर लिया। बात यह थी कि वह लोग शांतिप्रिय थे और यह नहीं चाहते थे कि हमेशा खून की नदियां ही बहती रहें। और व्यर्थ ही प्रजा को अत्याचार की चक्की में पिसना पड़े। यही उन लोगों के बिचार थे और ऐसा सोच कर ही उन्होंने अकबर से मित्रता कर ली। उनके यह विचार अच्छे थे या नहीं यह बात दूसरी है।

हिंन्दुओं पर पहले से ही जब से कि यवनों का शासन हुआ एक प्रकार का कर लगा हुआ था, जिसको जजिया कहते हैं। यह केवल हिन्दुओं के लिये ही होता था। हिन्दुओं के देश में ही हिन्दुओं पर कर ( टैक्स ) लगाया जाये? बलिहारी लेकिन 'जिसकी लाठी उसकी भैंस" यवनों का उस समय जोर था। वह जो कुछ करते थे वही होता था। अकबर ने देखा कि हिन्दू लोग जजिया से असंतुष्ट हैं। उसने

इस कर को बन्द कर दिया। हिन्दू अकबर की इस नीति से खुश हो गये वह उसकी प्रशंसा करने लगे। हिन्दू बेचारे भोले तो होते ही हैं। जरा से उपकार में ही खुश हो जाते हैं। हिन्दुओं ने समझ लिया कि अब हमारे अच्छे दिन आ गये हैं। किसी प्रकार का दुःख अब भोगना नहीं पड़ेगा। हमेशा चैन की बन्शी बजा करेगी और सुख की नींद सोयेंगे। पिछले बादशाहों के अत्याचारों से हिन्दू प्रजा बुरी तरह तङ्ग आचुकी थी। गजनवी, तैमूरलंग आदि ने क्या कम अत्याचार किये थे। उनका नाम मात्र याद आते ही आँखों में खून उतर आता है। सारांश पृथ्वीराज के पश्चात् हिन्दू प्रजा सुख की नींद सोई ही नहीं थी। अब अकबर का शासन काल ही एक ऐसा समय था जब कि चारों ओर शांति ही शांति थी। इसलिये हिन्दू कुछ न बोले और उन्होंने रङ्ग में भङ्ग करना उचित न समझा। वह अकबर को सम्राट मान कर उसे आदर श्रद्धा एवं प्रेम की दृष्टि से देखने लगे।

अकबर की संगति (सोसाइटी) भी अधिकांश हिन्दुओं की ही थी। उसके दरबार में नवरत्न थे! यह नवरत्न उसके खास मुसाहिब थे जिनको वह अपने मित्र के समान मानता था इन नवरत्नों में से भी ज्यादातर हिन्दू ही थे। तानसेन, बीरबल, टोडरमल भगवानदास आदि नवरत्न ही थे। हिन्दुओं में उसको श्रद्धा भी थी। वह यह जानता था कि हिन्दू बड़े वीर धर्मपरायण एवं वचन के पक्के होते हैं। हिन्दू लोग आदर्श

व्यक्ति होते हैं यह वह मानता था। उसके हृदय पर हिंदुओं के पवित्र आदर्श का सिक्का जमा हुआ था। यद्यपि वह दिल में इनसे ईर्षा ही क्यों न रखता हो और वास्तव में रखता भी था लेकिन मन ही मन प्रशंसा भी किया करता था।

अकबर ने यवन राज्य बड़ी बुद्धिमता से स्थापित किया यदि वह न होता तो मुगलों का राज्य भारत में कभी न रह पाता। उसने हिंदुओं के साथ जो कुछ किया वह अपने राज्य की भलाई के लिये ही किया। हिन्दुओं का वास्तविक उपकार वह कुछ भी न कर सका और न वह करना चाहता ही था।

उसने हिन्दुओं से सम्बन्ध स्थापित करने शुरू किये। कई इतिहासकारों ने लिखा है कि कुछ राजाओं ने अकबर के साथ अपनी लड़कियों का विवाह कर दिया था। वह राजा कौन थे? जयपुर और जोधपुर के नरेश!! इन्हीं दोनों ने अकबर से बेटी व्यवहार किया। अन्य राजाओं ने ऐसा न किया। उन्होंने अकबर से शर्त कर ली थी कि वह बेटी व्यवहार नहीं करेंगे। लेकिन कुछ इतिहासकारों ने इस बेटी व्यवहार को मिथ्या प्रमाणित किया है। उनका कहना है कि जयपुर और जोधपुर के नरेशों ने अपनी बेटियां अकबर को नहीं दी थीं, अपितु दासी पुत्रियों से उनका विवाह किया था। यह दासी पुत्रियाँ निम्न श्रेणी की होती थी और अब भी होती हैं। इन्हीं को अकबर ने पत्नी रूप में ग्रहण किया था। जयपुर जोधपुर का इतिहास लिखने वालों ने भी ऐसा ही लिखा है और

वहां की प्रजा भी यही कहती है। हां यह बात अवश्य थी कि उन दासी पुत्रियों को ही राजकन्या घोषित कर दिया गया था। यही बात सत्य भी मालूम होती है। सब इतिहासकारों ने भी इसी को प्रमाणिक बात माना है। किंतु कुछ भी हो इस बात से उन नरेशों की आत्म निर्बलता अवश्य प्रकट होती है। उन्होंने यह कार्य अनुचितही किया। वह दासी कन्यायें मान लिया कि नीची जाति की ही थीं, किंतु फिर भी वह हिन्दू ही थीं। क्या हिन्दू नहीं कहलाते ?

यह कन्यायें अकबर की रानियां बन कर रहीं, बेगमें नहीं। अकबर के पुत्र जहांगीर ( सलीम ) का विवाह भी इसी प्रकार हुआ था, किंतु वह सब हिन्दु ही बनकर रहती थीं। अकबर ने उन्हें मुसलमान नहीं बनाया। वह हिंदू धर्मानुसारही जीवन व्यतीत करती थीं। पूजा, पाठ, अर्चन बंदन नियमानुसार होता था, प्रत्युत कभीर अकबर स्वयं भी हिन्दू रीतिसे पूजापाठ करता था। सूर्य भगवान की उपासना किया करती थी। हिंदू रानियों को खुश करने के लिये और हिन्दू जनता को दिखाने के लिये इसी प्रकार वह कई ढोंग रचा करता था। अकबर की कई रानियां थीं लेकिन वह अधिकप्रेम हिन्दू रानियोंसे ही रखता था। उसका सब से बड़ा पुत्र सलीम जहांगीर ) आधा हिंदू और आधा मुसलमान था। सलीम का जन्म हिन्दू रानी से ही हुआ था यहीं कारण था कि वह कट्टर मुसलमान न बन सका। यूँ तो वह भी कम न था लेकिन यह बात न थी कि कट्टर

मुसलमान बादशाहों में होती है। कुछ इतिहासकार अकबर को भी कट्टर मुसलमान नहीं मानते लेकिन वास्तव में अकबर कट्टर मुसलमान ही था। उसने कोई कार्य ऐसा न किया जिससे इस्लाम को क्षति पहुंची हो अपितु उसके द्वारा इस्लाम को लाभ ही हुआ! पाठकों को स्वयं ही मालूम हो जायेगा कि अकबर का आदर्श कैसा था? उसका चरित्र कैसा था? वास्तव में वह हिन्दुओं का हितैषी था या नहीं? हमारा लिखना व्यर्थ, पुस्तक को आद्योपन्त पढ़ कर और विचार करके पाठकगण स्वयं ही निर्णय करलें।

किन्तु हां…कम से कम उस जमाने में तो अकबर की धाक खूब जमी हुई थी। वही भारत का सर्वेसर्वा बना हुआ था। हिन्दू मुसलमान सभी मुक्तकंठ से उसकी प्रशंसा के गायन गाया करते थे। हिन्दू लोग उस पर पूर्णतयः विश्वास करते थे। अकबर की प्रजा कहने में वह अपना सौभाग्य समझते थे 'दिल्लीश्वरो वाः जगदीश्वरो वा' यही शब्द चारों ओर सुनाई देते थे। दिल्लीश्वर अकबर को ही सब परमात्मा के तुल्य मान बैठे थे।

परन्तु…केवल एक ही प्रदेश ऐसा था जो इन सब बातों से दूर था। वैसे तो कुछ प्रदेश और भी थे किन्तु निर्भीकता पूर्वक खुल्लमखुल्ला अकबर का विरोध करने वाला प्रदेश एक ही था उसका नाम था "मेवाड़'। वह अभी तक अभिमान से अपना शीश ऊंचा किये हुये था। अकबर, एक यवन सम्राट के सामने शीस झुकाना उसने सीखा ही नहीं था। पिछले परिच्छेदों

में हम उन बातों का वर्णन कर चुके हैं जो कि मेवाड़ और यवन सम्राटों के सम्बन्ध की थीं। अकबर से पहिले जो सम्राट हुये उनका तो पूरा दांत मेवाड़ पर रहा ही, लेकिन जब से अकबर सिंहासन पर बैठा तभी से वह मेवाड़ को अपने आधीन करने की चिन्ता में लीन रहा करता था। स्वप्न में भी उसे मेवाड़ के ही दर्शन हुआ करते थे। सोते उठते बैठते हमेशा मेवाड़ का ही ध्यान बना रहता था। क्यों ? यह आगे मालूम होगा।

चित्तौड़ की अकबर ने कैसी दुर्दशा की यह तो पहले लिखा ही जा चुका है। पाठक शायद न भूले होंगे। उदयसिंहने किस प्रकार अपने वंश की रण से विमुख होकर कलंकित किया यह भी लिख दिया गया है। अब तो हमें उस समय का हाल देखना है जब कि महाराणा प्रताप उदयपुर के राज सिंहासन पर आरूढ़ हो चुके हैं और इधर अकबर उन पर खार खाये बैठा है।

पाठकों को उस समय की परिस्थिति तो मालूम ही है। महाराणा प्रताप के पास केवल उदयपुर राज्य और वहां के सैनिक यही कुल सम्पत्ति थी। धन तो पर्याप्त था ही नहीं, चित्तौड़ में ही रह गया था और वह यवनों के अधिकार में आही चुकाथा उनके पिता उदयसिंह जी की कृपा से। यह अवसर अकबर के लिये बहुत अच्छा था। उसने देखा कि प्रतापसिंह की दशा इस समय अच्छी नहीं है। प्रताप का भाई शक्तिसिंह भी अकबर की

तरफ मिल गया था। इस कारण अकबर का साहस अधिक बढ़ गया। वह समझा कि शायद मेवाड़ में अब वह प्राचीन शक्ति नहीं है। मेवाड़ नरेश प्रतापसिंह भी अपने पिता की भांति ही कायर विलासप्रिय और साहस से शून्य होगा।

अकबर ने महाराणा प्रताप को कहला भेजा कि तुम भारत सम्राट की अधीनता स्वीकार करलो। सम्राट तुम से मित्रता का व्यवहार रक्खेगा। तुम्हें अपने दरबार में भी सम्मान पूर्वक अच्छा पद दिया जायेगा। तुम्हारी तरफ कोई उँगली उठाने वाला भी नहीं होगा। तुम शान्ति और सुख से अपना जीवन बिता सकोगे। तुम्हारा गया हुआ राज्य भी तुम्हें वापिस दे दिया जायेगा चित्तौड़ पर भी तुम्हारा अधिकार हो जायेगा। इतना ही नहीं अन्य राज्य भी तुम्हारे अधिकार में कर दिये जायेंगे। देखो लगभग सभी राजपूत राजाओं ने भारत सम्राटसे मित्रताका सम्बन्ध स्थापित कर लिया है। अकबर ही इससमय भारतवर्ष का एक मात्र सम्राट है किसका साहस है जो सम्राट के विरुद्ध कान भी हिला सके। अतः तुमभी सम्राट से मिलकर रहो और मित्रता का सम्बन्ध स्थापित कर सुख से रहो। यह तुम्हारा सौभाग्य है कि सम्राट तुमसे मित्रता का सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हैं। यदि तुम ऐसा न करोगे तो याद रक्खो तुमको पछताना पड़ेगा। तुम सम्राट से लड़कर विजय प्राप्त नहीं कर सकते। तुम्हें अन्त में सम्राट की शरण में जाना ही होगा। तुम सम्राट के विरुध कबतक रह सकोगे?

महाराणा प्रताप पर इन बातों का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। अकबर ने नाना प्रकार के प्रलोभन दिये बहुत फुसलाया समझाया लेकिन सब बेकार साबित हुआ। वह तो आजादी का दीवाना था। स्वतंत्रता देवी का सच्चा उपासक था जननी जन्म भूमि का पक्का भक्त और पुजारी था। उसके हृदय पर बातों का क्या प्रभाव पड़ता? जिस हृदय पटल पर स्वतंत्रता देवी की प्रतिमा अंकित हो वहां पराधीनता के चिन्ह मात्र भी कैसे रह सकते हैं? एक सिंह पराधीन रहकर भी क्या कभी सुखी हो सकता है? नहीं कभी नहीं—महात्मा तुलसीदास जी ने सत्य ही तो कहा है—

"पराधीन सपनेहु सुख नाहीं"

हां, हां, पराधीन व्यक्ति कभी सुख की नींद नहीं सो सकता। फिर भला प्रताप मेवाड़ का सिंह पराधीनता की शृङ्खला में बद्ध होकर जीवन व्यतीत करना कब पसन्द कर सकता था? वह तो पराधीनता के नाम मात्र से घृणा करता था। पराधीनता? किसकी? एक यवन सम्राट की क्यों? वह भी तो मनुष्य ही है देवता तो नहीं? उसमें ही ऐसे क्या गुण हैं जो उसकी पराधीनता स्वीकार की जाये? यदि वह वीर है तो उसके शरीर में भी शक्ति है उसके तन में भी वीरत्व भरा हुआ है। रगों में खून है पानी तो नहीं है। फिर वह क्यों पराधीनता स्वीकार करे? यही विचार प्रताप के हृदय में उठते थे। वह अकबर के दूतों को टका सा जवाब दे देता था। दूतों को भी तो उसके सामने

ठहरने का साहस न होता था। अकबर हैरान था कि क्या किया जाये ? किस प्रकार प्रताप को वश में किया जाये। उसे बस केवल प्रताप का ही डर था अन्य किसी का नहीं। स्वप्न में भी उसको प्रताप का ही भय लगा रहता था। उसी वीर की तेजोमय मूर्ति उसकी आंखों के सामने नाचा करती थी। वह युद्ध करे, शान्ति से फिर समझाने का यत्न करे? क्या करे ? क्या न करे वह निश्चय ही नहीं कर सकता था। उसके हृदय में एक तूफान-सा उठा करता था। और केवल इसी कारण वह बेचैन रहा करता था।

---

# छटा परिच्छेद

## मानसिंह

जैसे कि पहले लिखा जा चुका है अकबर हिन्दुओं से सम्बंध स्थापित कर चुका था। जयपुर के राजा भारमल ने अपनी पुत्री का विवाह अकबर से कर दियाथा। भारमल को कहीं कहीं बिहारीमल लिखा गया है किन्तु भारमल नाम ही ज्यादातर प्रसिद्ध है। यह भी हम पहिले लिख चुके हैं कि जिन पुत्रियों से अकबर के साथ राजपूत राजाओं ने विवाह किया था वह कैसी थीं ? वास्तव में वह दासी पुत्रियां थीं राजकुमारियां नहीं थीं किन्तु उन्हीं को बनावटी राजकुमारी कह कर विवाह कर दिया गया था। उन लोगों का सम्बन्ध अकबर से हो जाने के

कारण वह निर्भय हो चुके थे। अकबर उन्हें अपना मित्र मानता था वह राजा अपनी राजकुमारी तो दे नहीं सकते थे नीच जाति की दासियों की जो कन्यायें होती थीं उनका विवाह कर देते थे किन्तु साथ ही यह शर्त रखते थे कि जो पुत्र उस कन्यासे उत्पन्न होगा वही सम्राट का उत्तराधिकारी बनेगा और वह कन्या बेगम न कहायेगी अर्थात् मुसलमान न बनेगी हिन्दू ही रहेगी और उसके आचार विचार भी सब हिन्दुओं के ही रहेगे। सम्राट ऐसा ही करते थे उनके धार्मिक कर्यों में हस्तक्षेप नहीं करते थे। यह विवाह ऐसा ही था जैसा कि आजकल भी सिविल मैरिज का चलन है। एसे विवाह में वर बधू दोनों अपने २ धार्मिक कर्यों में स्वतन्त्र रहते हैं और अंतर्जातीय विवाह ही बहुधा ऐसे विवाहोंमें सम्मलित होजाते हैं। ऐसा ही अन्तर्जातीय औरसिविल विवाह 'वह' था। हां किन्तु यह बात अवश्य है कि चाहे वह दासी पुत्रियां ही थीं परन्तु हिन्दू तो थीं। उन्हें यवनों को सौंप देना और उन्हें राजकुमारी प्रकट करना उन राजपूत राजाओं की मानसिक दुर्बलता ही प्रकट करता है यह उनके लिये कलंक की बात तो है ही। अस्तु.......

जयपुर और जोधपुर दो राज्य ही विशेषतय: ऐसे थे जिन्होंने वैवाहिक सम्बंध अकबर से स्थापित किया। अकबर का विवाह जयपुर से हुआ और अकबर के पुत्र सलीम अर्थात् जहांगीर का विवाह जोधपुर से और फिर इसके बाद यह प्रणाली बन्द होगई। जहांगीर के पुत्र शाहजहां ने मुस लिम

कन्याओं से ही विवाह किये। शाहजहां के बाद तो मुगलों की काया पलट ही हो गई थी। औरङ्गजेब जैसा कट्टर बादशाह सम्राट होगया था जिसको हिन्दू अपना जानी दुश्मन समझते थे। यद्यपि औरङ्गजेब के समय में भी जयपुर जोधपुर से मुगलों का सम्बन्ध मित्रता का ही था और वहां के नरेश मुगल दरबार में प्रतिष्ठित पदों पर आसीन भी थे किन्तु उन लोगों ने वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित नहीं किये।

हां तो जयपुर नरेश भारमल के सुपुत्र भगवानदास थे और भगवानदास के सुपुत्र "मानसिंह"। मानसिंह को अकबर के दरबार में बड़ा प्रतिष्ठित पद प्राप्त था। और सब से अधिक आदर भी उन्ही का था। अकबर का इतिहास मानसिंहसे बहुत सम्बंधित है कारण कि अकबर मानसिंह का घनिष्ट मित्र था। मानसिंह के ही कारण वह इतना बड़ा सम्राट हो गया था। अधिकतर युद्धों में मानसिंह ने ही अपने बाहुबल से विजय प्राप्त की। अकबर की अखण्ड कीर्ति का मुख्य श्रेय मानसिंह को ही है। यदि मानसिंह न होता तो अकबर इतने बड़े सम्राज्य का अधीश्वर नही बन सकता था। प्रत्येक युद्ध में ही मानसिंह ने अकबर का साथ दिया। बड़ी २ भयंकर लड़ाईयाँ उसने लड़ी और उन देशों को अकबरके आधीन किया। अकेला मान सिंह ही अकबर का दहना हाथ था। जो कुछ मानसिंह कहता उसको अकबर कभी न टालता था। मानसिंह ही एक प्रकार से मुगल सम्राज्य का अधिष्ठाता बना हुआ था। यदि यह कहाजाये

कि मानसिंह ने ही मुगल सम्राज्य को भारतवष में सुदृढ़ बनाया तो अनुचित न होगा। वास्तव में मानसिंह अपने समय का अद्वितीय बीर था। अकबर उसकी वीरता का लोहा मानता था बड़े२ वीर उसके नाम मात्र को सुनकर कांप उठते थे। अकेले मानसिंह के कारण किसी का साहस न होता था कि मुगल साम्राज्य के विरुद्ध कान भी हिला सके। ऐसा कोई भी युद्ध शायद न होगा जिसमें मानसिंह ने विजय प्राप्त न की हो। काबुल ( अफगानिस्तान) जैसे पहाड़ी और लड़ाकू देश पर विजय प्राप्त करना मान सिह जैसे वीर का ही काम था उनदिनों मानसिंह की वीरताका डंका सर्वत्र वज रहा था। सभी बड़े २ शूरबीर उससे डरते थे।

हां......केवल एक ही व्यक्ति एसा था जो उससे भयभीत नहीं था। वह था...महाराणा प्रताप! यद्यपि प्रताप इस बात को मानता था कि मानसिंह बीर है किन्तु उसकी वीरता से भय भीत होना वह नहीं जानता था क्योंकि वह स्वयं मानसिंह से किसी भी प्रकार कम न था। प्रताप की वीरता का अनुमान तो इसी से लगाया जा सक्ता है कि जिस मानसिंह से भारतवर्ष के समस्त वीर कांपते थे जो महान वलशाली और रणकुशल था वह स्वयं महाराणा प्रताप की वीरता का लोहा मानता था। उसके युद्ध कौशल का मानसिंह कायल था और हर समय प्रताप की वीरता की प्रशंसा मुक्तकंठ से किया करता था। मानसिंह को संसार में किसी का भय न था, यदि भय था तो प्रताप का ही। मानसिंह को सारे सुख प्राप्त थे अकबरका साया उसके सर पर था

समस्त मुगल साम्राज्य कशमीर से लेकर दक्षिण तक उसके साथ था। अपार सेना की शक्ति उसे प्राप्त थी, किंतु प्रताप की दशा उसके सर्वथा विपरीत थी, न तो उसके पास धन था न उसके पास सेना थी, न उसके पास विशाल साम्राज्य का सहयोग था, न किसी अन्य वीर का साथ था। वह अकेला था न केवल अकेला। कुछ लेखक लिखते हैं कि उसकी परिस्थिति बहुत अच्छी थी क्योंकि उदयपुर जैसा पहाड़ी राज्य जो स्वयं ही प्राकृतिक दुर्ग है और पहाड़ों से सुरक्षित है उसके पास था। उसके मनुष्य अथवा सेना के वीर चुने हुये थे और उसमें से हर एक बड़ा वीर और रणकुशल था यह सर्वथा सत्य है परन्तु सोचने की बात है कि केवल इतनी सी सुविधाओं से मनुष्य शक्तिशाली हो सकता है और वह भी उन लोगों के सामने जिनके पास अगणित वीर हों और सैकड़ों दुर्ग और अजेयगढ़ हों। केवल एक उदयपुर के दुर्ग से ही क्या कर सकते थे जब तक उनके पास पर्याप्त धन न हो, अपार सेना न हो।……

खैर कुछ भी हो यह बात तो निर्विवाद है कि महाराज मानसिंह अद्वितीय वीर थे। अकबर हर एक काम में उन्हीं की सलाह लिया करता था। अकबर ने जब यह देखा कि राणा प्रताप किसी प्रकार उसके वश में नहीं आता तो उसने मान-सिंह से भी कहा कि तुम स्वयं ही राणा प्रताप को वश में करो अकबर चाहता था कि साम दाम दंड भेद किसी भी तरह राणा प्रताप उसके वश में हो जाये और उसकी आधीनता स्वीकार

करले। उसने अपने यह विचार प्रकट भी किये कि—"मैं यह नहीं चाहता कि राणा प्रताप से लड़ाई ही लड़ी जाये या वह मार डाला जाये। ऐसा वीर मारने योग्य नहीं है। यदि वह हमसे संधि करले और प्रेमपूर्वक हमारा मित्र बनजाये तो सबसे अच्छा है। उसके हमारी ओर मिल जाने से हमें बहुत सुविधा हो जायेगी और हमारी शक्ति भी बहुत बढ़ जायेगी। उस अकेले के ही हमारे आधीन होजाने से भारतवर्ष की तमाम हिन्दू जाति हमारे आधीन हो जायेगी। कोई भी ऐसा हिंदू न रह जायेगा जो उसका अनुकरण न करे।" यह अकबर की हार्दिक इच्छा थी। वास्तव में वह हिंदू जाति को पूर्णतय: पद दलित करना चाहता था। निस्संदेह राणा प्रताप के आधीन हो जाने सेकोई भी हिंदू अकबर के विरुद्ध नहीं रह सकता था। उससमय राणा प्रताप ही हिन्दुओं की नाक था। उसीने आर्य जाति के गौरव को स्थिर रखा था। इसीलिये तो अकबर का उस पर दांत था। वह हिंदुओं की सहायता से ही हिंदुओं को पद दलित कर रहा था। हारने पर भी उसकी विजय थी और जय पानेपर तो थी ही क्योंकि जब वह हारता था तो अधिकांश हिन्दुओं का ही नाश होता था कारण कि उसकी सेना में अधिकतर हिंदू ही रहते थे और सेनानायक भी प्राय: हिन्दू ही होता था। बस यही तो उसकी कूट नीति थी। परन्तु यह समझता कौन ? हिन्दुओं की आंखों पर तो अज्ञानता का परदा पड़ा हुआ था "विनाश काले विपरीत बुद्धि" वाली कहावत चिरतार्थ होरही थी। अकबर

मीठी छुरी बनकर अपना काम निकाल रहा था और हिन्दू उसको अपना हितैषी समझे बैठे थे। उन बेचारे भोले भालों को यह नहीं मालूम था कि इस सोने के घड़े में विष भरा हुआ है। खैर हमें अकबर के जीवन चरित्र के उतने अंश पर प्रकाश डालना है। जितना कि हमारे गाथा नायक महाराणा प्रताप से संबन्धित है। केवल उसी से पाठकगण उसके समस्त जीवन का अनुमान लगा सकते हैं।

अकबर ने मानसिंह पर खूब जादू चला रक्खा था। मानसिंह उसकी माया में पूर्णतयः भ्रमित हो चुके थे और उसके हाथों का खिलौना बनरहे थे, मानसिंह वीर थे महान वीर थे स्वाभिमानी भी पूरे थे राजनीतिज्ञ भी थे विद्वान भी थे धार्मिक भी थे सभी कुछ थे सर्वगुण सम्पन्न थे किंतु भोले भी बहुत थे, बुद्धिमान थे लेकिन कदाचित अपने पूर्व गौरव को गंवाते समय वह अपनी बुद्धि का उचित प्रयोग न कर सके। राजनीति की दृष्टि से उन्होंने जो किया वह भले ही उचित हो परंतु जो कलङ्क उन्होंने अपनी जाति पर लगादिया वह अमिट है। कट्टर धार्मिक होते हुये भी वह बहक गये। यह नहीं कहा जा सकता कि शायद अपने हृदय में उन्हें भी पश्चातापरहा हो और राणा प्रताप के आदर्श को देखकर उनका हृदय अपने प्रति ग्लानि से यदा कदा पूरित हो जाता हो क्योंकि वह हृदय से राणा प्रताप का आदर करते थे और अपने मुख से उन्हें हिंदुपति, हिंदुओं के कीर्ति-स्तम्भ आदि शब्दों से सम्बोधित किया करते थे। अकबर के सामने भी

वह राणा की प्रशंसा प्रायः करते ही रहते थे। यूं तो वह क्या प्रत्येक व्यक्ति ही चाहे वह उनका शत्रु हो या मित्र उनकीप्रशंसा करता ही था यदि प्रकट में नहीं तो गुप्त रूप से हृदय में ही।

——❀——
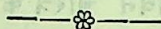
## शत्रुता

मानसिंह ने राणा प्रताप को समझाने का यत्न किया किंतु सब व्यर्थ हुआ। राणा प्रताप का हृदय उस चिकने घड़े की भांति था जिस पर एक बूंद नहीं ठहरती। किसी के समझानेका उन पर असर नहीं होता था। स्वयं अकबर ने प्रताप को कई बार लिखा और समझाया लालच भी दिया, लेकिन राणा ने अपनी आन न छोड़ी जब अकबर स्वयं सफल न हो सकातो उसने मानसिंह की सहायता ली। उसके ही प्रयत्न से दो हिन्दू नरेशों में द्वेष की आग भड़क उठी और अकबर तमाशा देखता रहा। दोनों में से किसी का नाश तो अवश्यम्भावी ही था और यह अकबर के हक में अच्छा ही थी, पारस्पारिक लड़ाइयों से तो उसे लाभ ही था हानि क्या? मानसिंह नहीं चाहते थे कि व्यर्थ ही राणा से युद्ध किया जाये इसलिये वह समझाने की कोशिश करते रहे लेकिन राणा की आन भला कैसे जाती? वह क्षत्रिय थे वे सच्चे वीर थे, सिसौदिया वंश के रत्न थे। उन्हीं रघुवंशी सूर्यवंशियों की सन्तान थे जिनका उद्देश्य ही यह था कि......

"रघुकुल रीति सदा चलि आई।
प्राण जाये पर वचन न जाई" (रामायण)

एक बार महाराजा मानसिंह किसी युद्ध में विजय प्राप्त करके लौट रहे थे। रास्ते में उदयपुर पड़ता था। उन्होंने सोचा कि—"इधर आये हैं तो राणा प्रताप से ही मिल चलें" यह सोचकर वह उदयपुर में ही रुक गये और अपनी सेना को भेज दिया। जब राणा को यह खबर लगी तो उन्होंने महाराजा का अपूर्व स्वागत किया। नगर में चहल पहल मच गई। अम्बर नरेश (जयपुराधीश) महाराजा मानसिंह उदयपुर में आये हुये हैं यह समाचार चारों ओर सुगन्ध की भांति फैल गया जैसा एक अतिथि नरेश मित्र का सत्कार होना चाहिये उस से भी अधिक राणा ने उनका स्वागत सम्मान किया। मानसिंह यह देखकर फूले न समाये और इस आदर सत्कार से बहुत ही खुश हुये। वह मन ही मन राणा प्रताप की खूब प्रशंसा करने लगे। उनके हृदय में राणा के प्रति प्रेम ही नहीं श्रद्धा भी उत्पन्न हो गई। एक विरोधीका ऐसा आदर सत्कार कौन करता है? क्या इसमेंराणा की कोई चाल है। नहीं नहीं राणा प्रताप ऐसा व्यक्ति नहीं जो किसी से चालबाजी करे वह कभी दगा नहीं कर सक्ता? फिर··· क्या बात हैं? क्या वह चापलूसी कर रहा है? नहीं नहीं वह चापलूसी भी नहीं वह खुशामद क्यों करेगा? वह जो कुछ चाहता है स्पष्ट कह देता है चापलूसी करना तो वह सीखा ही नहीं, वह महान वीर है······हां-हां वह उदार है वीर है आदर्श पुरुष है अतिथि सत्कार के धर्म का पालन कर रहा है।···ऐसे ही नाना प्रकार के विचार महाराजा मानसिंह के हृदय में उठ

रहे थे। वह खुश ही नहीं, बहुत खुश थे।

इस समय उनका हृदय प्रेम श्रद्धा और गौरव से भरगया। उनका हृदय कहने लगा कि हां राजपूत जाति में अभी तक एक रत्न है, जगमगाता हुआ हीरा है, जिस पर सब हिंदुओं को अभिमान है और वह है "राणा प्रताप"।

दूसरी ओर वह यह भी सोच रहे थे कि कदाचित हो नहीं अवश्य इस समय राणा मुससे अप्रसन्न न होंगे यदि अप्रसन्न या रुष्ट होते तो ऐसा सत्कार न करते। अतः यह सुअवसर ही है कि मुगलों से सन्धि करने के लिये उन्हें कहाजाये। शायद ऐसे अवसर पर वह स्वीकार करलेंगे।.........फिर यह भी विचार करते थे कि कहने से क्या लाभ? राणा प्रताप मानने वाले जीव नहीं हैं। इस प्रकार हजारों बातें दिल में उठती थीं और बैठ जाती थीं। वह कुछ भी निश्चय न कर सके कि यहां क्या किया जाये?....अस्तु!

उधर राणा व अन्य सरदार भीं यह सोचते थे कि अकस्मात ही महाराजा मानसिंह ने यहां पधारने की कृपा कैसे की? मानसिंह तो प्रताप का विरोधी है। उन्होंने विरोधी के पास आने का कष्ट कैसे उठाया? लेकिन राणा ने अपने धर्म का पालन किया और अतिथि-सत्कार में कुछउठा न रखा।

भोजन तैयार होने पर महाराज मानसिंह को बुलाया गया। मानसिंह ने जाकर देखा कि भोजन का सभी सामान तैयार है और राजसी ठाठ से ही भोजन का प्रबंध किया गया है। नाना

प्रकार के षटरस व्यंजन तैयार किये गये थे। किन्तु महाराजको इस बातपर आश्चर्य हुआ कि वहां राणा प्रताप न थे, केवल राणा के पुत्र कुमार अमरसिंह ही वहां उपस्थित थे। नियम यह होता है कि अतिथि सत्कार करने वाला भी अतिथि के साथ भोजन करे। राजा महाराजा अकेले भोजन करते भी नहीं महाराज मानसिंह भोजन करने के लिये बैठ तो गये लेकिन उन्होंने शुरू न किया। वह अमरसिंह से कहने लगे "कुमार! राणा कहां है? वह अभी तक क्यों नहीं आये? बिना उनके आये हम भोजन कैसे शुरू करें। हम और वह साथ २ ही भोजन करेंगे। अमरसिंह ने कहा—'महाराज! पिताजी ने स्वयं न आकर मुझे ही अतिथि सत्कार के लिये भेज दिया है। वह इस समय क्षमा चाहते हैं वह भोज में सम्मलित न हो सकेंगे क्योंकि उनके सर में कुछ दर्द है।"

यह सुनते ही मानसिंह क्रोधित हो उठे वह कहने लगे—"कुमार! राणा से जाकर कहदो कि मैं उनके सर का दर्द अच्छी तरह समझता हूँ, मैं दूध पीता बच्चा नहीं हूँ सब कुछ समझ गया हूं! मैं यह अपमान सहन नहीं कर सकता' यह कह कर वह उठ खड़े हुये। केवल थाल में से दो एक दाने उठाकर उन्होंने अपनी पगड़ी में रखलिये ताकि अन्न का अपमान न हो।

महाराज के उठने का समाचार जब राणा को मिला तो वह स्वयम ही आये और मानसिंह से कहने लगे—"आप बिना भोजन किये ही क्यों उठ खड़े हुये? इसमें अपमान की क्या बात

है ? आप व्यर्थ ही इतने नाराज क्यों हो रहे हैं ? अगर मेरे न आने से ही आप रुष्ट होगये थे तो अब मैं आगया हूं अब आप भोजन कर लीजिये ।" राणा के मधुर वचन सुनकर महाराज मानसिंह कहने लगे-"लेकिन आपको भी मेरे साथ भोजन करना होगा" राणा प्रताप ने कहा—"यह कैसे हो सकता है ? मुगलों के सम्बन्धियों के साथ बैठकर हम भोजन कैसे कर सकते हैं ? हमको भी तो अपने धर्म का विचार है ।"

यह सुनकर महाराज मानसिंह का दबा हुआ क्रोध फिर भड़कउठा वह कहने लगे—"राणा ! आप मेरा अपमान कर रहे हैं !" राणा ने जवाब दिया—"अपमान तो तब होता जब कि कोई झूठ बात कही जाती किन्तु यह बात तो सत्य है । अपमान की क्या बात है आपने तो खुल्लमखुल्ला स्वेच्छा से मुगलों को अपना सम्बन्धी बनाया है।सोचिये हमने आपका क्या अपमान किया ? यदि इसको आप अपना अपमान ही समझते हैं तो आपने यवनों से सम्बन्ध ही क्यों किया था ? यदि वास्तव में देखा जाये तो अपमान तो हमारा है। हमारा ही क्या समस्त राजपूत वंश अथवा हिन्दू जाति का आपने अपमान किया है ।"

मानसिंह बोले—"राणा ! तुम्हारे यह वचन नहीं बाण हैं जो मेरे हृदय में चुभते जा रहे हैं। बस अपना वक्तव्य रहने दो। मैं अधिक सुनना नहीं चाहता । मैं यह भोजन भी नहीं कर सकता । लेकिन याद रक्खो राणा मेरा नाम भी मानसिंह नही अगर तुम्हारा यह 'मान न तोड़ूं' और अपने अपमान का बदला तुमसे न लेलूं ।"

राणा कहने लगा—'मैं युद्ध भूमि में अपने समक्ष तुम्हें देखकर प्रसन्न होऊंगा। मैं भी उस दिन की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहा हुं जब कि आप अपने अपमान का बदला लेने के लिये रणक्षेत्र में मेरे सामने आयेंगे। मेवाड़ का राणा ऐसे अवसरों के लिये हमेशा तैयार है। उस समय भी वह तुम्हारा अपूर्व सत्कार करेगा!"

मानसिंह वहां अधिक न ठहर सके और 'अच्छा देख लूंगा' कह कर घोड़े पर सवार होकर वहां से चल दिये। राणा प्रताप ने बहुत समझाया था, लेकिन क्रोध के वशीभूत होकर वह कुछ भी ध्यान न दे सके। कहते हैं कि जिस समय मानसिंह क्रोधित होकर जाने लगे उस समय किसी ने मानसिंह को लक्ष्य करके कहा था कि—"अपने फूफा अकबर को भी लड़ाई में अपने साथ लेते आना'। नहीं कह सकते कि यह बात कहां तक ठीक है? समझ में नहीं आता कि अपने सामने ही राणा एक सरदार द्वारा मानसिंह के प्रति ऐसे शब्द कहलवाते। राणा के सामने उनका सेवक एक नरेश से ऐसा कह दे तो कोई बात नहीं किन्तु उसके होते हुये उनके एक सेवक को कुछ बोलने का क्या अधिकार है? खैर कुछ भी हो मानसिह को उस समय बड़ा क्रोध आया और वह वहां से क्रोधित अवस्था में ही चले गये। राणा उन्हें कुछ और समझाते बुझाते लेकिन इतना अवसर ही मानसिंह ने नहीं दिया।

कहते हैं कि मानसिंह के चले जाने के पश्चात् वह स्थान

पवित्र जल से धुलवाया गया जहां कि मानसिंह ठहरे थे। इतना ही नहीं बल्कि जिन लोगों ने मानसिंह के शरीर का स्पर्श किया था उन्होंने भी स्नान किया और यज्ञोपवीत बदले।

भविष्य में क्या होगा यह सब को मालूम हो चुका था। मेवाड़ का बच्चा बच्चा इस बात को जान गया था कि अब शीघ्र ही युद्ध होने वाला है। क्योंकि मानसिंह अपमान्ति होकर शांत बैठने वाला जीव नहीं है। मेवाड़ के सरदारों का तो विचार भी यही था कि मानसिंह का मेवाड़ में आने का प्रयोजन केवल युद्ध की घोषणा करने का ही था। मेवाड़ के वासी तो युद्ध के लिये सदैव तैयार रहते ही थे। इस घटना से उन्हें अधिक प्रोत्साहन मिला और वे खूब उत्तेजित हो गये। अब वह इसी प्रतीक्षा में थे कि कब युद्ध हो और कब रणभूमि के दर्शन हों।

उधर मानसिंह का हाल सुनिये—

राणाप्रताप से विदा होकर मानसिंह सीधे अकबर के पास ही पहुँचे। उस समय वह अत्यन्त कुपित थे। उनके मुख पर क्रोध के भाव स्पष्ट झलक रहे थे। मानसिंह दक्षिण को विजय करके आ रहे थे यह समाचार देहली में पहले पहुँच गये थे। अतः उनके वहां पहुँचते ही बड़ी खुशियां मनाई गई खूब जलसे हुये। मानसिंह का अपूर्व स्वागत किया। अकबर को खास कर बहुत खुशी थी। होनी ही चाहिये क्योंकि विजय का एक मात्र कारण मानसिंह ही थे। एक बड़ा भारी दरबार किया गया

उसमें मानसिंह का बड़ा मान सम्मान हुआ। सब लोग उसकी वीरता की प्रशंसा कर रहे थे। जिस ओर देखो यही चरचा थी। सारा दरबार खुशी से भरा हुआ था। परन्तु महाराजा मानसिंह के चेहरे पर हर्ष का चिन्ह भी न था। वह उदास बैठे हुये थे। मालूम होता था किसी चिन्ता में लगे हुये हैं। सब लोगों को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ विशेषतयः अकबर के पेट में तो उथल पुथल मची हुई थी। वह सोचरहा था कि आखिर कारण क्या है कि मानसिंह का मुख इतना चिन्तित और मलीन है। कहीं कोई बात तो ऐसी नहीं हो गई जिससे उसके दिल को दुख पहुंचा हो। यदि वह अप्रसन्न होगया तो मुगल सम्राज्य को बड़ा धक्का पहुंचेगा। यही सोचते २ वह भी चिन्ता के सागर में गोते खाने लगा।

कुछ क्षण उपरान्त वह मानसिंह से पूछ ही बैठा कि उसकी उदासी का कारण क्या है। अकबर ने कहा 'मानसिंह' क्या किसीने तुमसे अपशब्द कहे हैं? क्या किसी ने तुम्हारा अपमान किया है। बोलो ऐसा कौन उद्दण्ड है जो इतना साहस कर सकता है। मैं उसको उचित से भी अधिक दण्ड दूंगा। मानसिंह में तुम्हारे लिये सब कुछ कर सकता हूं मैं तुम्हें उदास मुख नहीं देख सकता। तुमने दक्षिण पर विजय प्राप्त की और विजयी होकर आने पर भी तुम्हारे मुख पर हर्ष का नाम नहीं यह कैसे आश्चर्य की बात है। बताओ मानसिंह तुम्हारे उदास होने का क्या कारण है? मैं अवश्य उसे दूर करूंगा सब बात साफ २ कह डालो।

मानसिंह ने कहा—"सम्राट! यह सच्च है कि मैं विजय प्राप्त करके आ रहा हूँ। मुझे शोलापुर विजय की खुशी होनी चाहिये यह मैं मानता हूँ किन्तु मार्ग में मेरा पूर्ण अपमान हो चुका है। राणा प्रताप ने मेरा खूब तिरस्कार किया है मैं एक अतिथि की भांति वहां ठहरा था किन्तु मेरा उचित सत्कार न किया गया! सम्राट! आपका हितैषी होतेहुये भी मेरा अपमान हो क्या आश्चर्य की बात नहीं है। मैंने सब भांति आप कीसहायता की किन्तु क्या इसका फल मुझे यही मिलेगा कि मैं एक छोटे से राज्य द्वारा अपमान सहनकरूं मेरा हृदय अपमान की ज्वाला से जल रहा है। मेरेहृदय में शान्ति का नाम नहीं हैंऔर न शान्ति हो सकेगी जब तक कि मैं प्रताप से अपने अपमान का बदला न लेलूं विख्यात मुगल साम्राज्य का सेनापति होकर मैं अपमा सहन करके नहीं बैठसकता। यह खुशियां मुझे नहीं अच्छी लगतीं। खुशी के बाजे मुझे प्रिय नहीं मालूम होते मेरे कानअब रणभेरी की आवाज सुनना चाहते हैं इन साधारण बाजों की आवाज नहीं। मेरे नेत्र अब रणभूमि का मैदान देखना चाहतेहैं महफिल को नहीं। अपमान का बदला लेने के पश्चात ही मैं खुशियां मना सकूँगा।—"

अकबर मानसिंह का वह वाक्तव्य सुनकर बड़ा क्रोधित हुआ। उसने कहा "मानसिंह! मुझे मालूम न था कि महाराणा प्रताप की इतनी हिम्मत हो जायगी। वह तुम्हारा अपमान करके सुख से नहीं रह सकता। मानसिंह तुम मुझे सब से प्रिय हो। मैं तुम्हें कभी अपमानित नहीं देख सकता, तुम्हारा अपमान

मेरा अपमान है। प्रतापने सोते हुये शेर को जगाया है। अब वह चैन से नहीं बैठ सकेगा। लो और अपने अपमान का बदला उससे जरूर लो। मेरी तमाम सेना और मैं स्वयं भी तुम्हारी सहायता करने के लिये तैयार हैं। मेवाड़ पर हमला कर दो। मेवाड़ की ईंट से ईंट बजा दो। अपने अपमान के बदले में सारे मेवाड़ का नाश करदो। देखें वीर नामधारी कैसा बहादुर है? भारत के सम्राट का सामना वह किस प्रकार कर सकता है, यही अब देखना है। राणा प्रताप को पराजित करो, उसे नीचा दिखाओ, अगर हो सके तो उसके टुकड़े २ कर डालो वरना जिन्दा ही मेरे सामने पकड़ कर ले लाओ और भारत सम्राट के आधीन बना कर छोड़ो। उसकी हट तोड़ दो। उसकी आन बान शान मिट्टी में मिलादो। बस यही मेरा आखिरी हुक्म है। जितनी भी सेना की आवश्यकता हो यहां से ले जाओ।" अकबर के मुख से यह शब्द सुनकर वह खुश होगया सभी दरबारी फड़क उठे। अकबर के पुत्र सलीम की अध्यक्षता में सेना के जाने का निश्चय हुआ। सलीम उस समय बालक ही था किन्तु अकबर के स्थान पर उसको नाम मात्र के लिये भेजा जा रहा था। यह वही सलीम है जो आगे जाकर जहांगीर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। बड़ी भारी सेना तैयार होने लगी। मानसिंह के अतिरिक्त शक्तिसिंह (प्रताप के छोटे भाई जिनका हाल पहिले आ चुका है) सागर जी इत्यादि वीर भी सेना में सम्मिलित किये गये। क्योंकि यह लोग भी बड़े वीर थे और

मानसिंहके समान ही रणकुशल और साहसी थे। बड़े बड़े प्रसिद्ध वीर योधा जितने भी थे प्रायः सभी इस सेना में सम्मिलित कर लिये गये। इस प्रकार यह सेना बहुत बड़ी और सुसङ्गठित हो गई।

## मेवाड़ में

उधर मेवाड़ में क्या हो रहा था यह भी सुन लीजिये। मानसिंह के जाने के बाद मेवाड़ राज्य के बुद्धिमान सरदारों ने परस्पर विचार किया कि अब युद्ध छिड़ने ही वाला है। मान-सिंह का इस प्रकार चले जाना अवश्य कोई न कोई नया गुल खिलायेगा। यही सब लोगों का विश्वास था। प्रजा भी यही सोचती थी। और स्वयं राणा प्रताप का भी यही ख़्याल था। इसके अतिरिक्त महाराणा ने तो मानसिंह को रण का निमन्त्रण पहले ही दे दिया था इसलिये युद्ध का आरम्भ तो निश्चय ही था। अब राणा प्रताप ने सेना तैयार करने का विचार किया।

एक दिन राणा ने आम दरबार किया जिसमें लगभग सभी वीर सामंतगण उपस्थित हुये। सब लोग महाराणा के वक्तव्य को सुनने के लिये उत्सुक थे। महाराणा ने उच्च स्वर से समस्त सरदारों को सम्बोधित करते हुये कहा—"मेरे प्यारे भाइयो! तुम जानते ही हो कि आज के दरबार का मुख्य लक्ष्य किस ओर है फिर भी मैं बताना चाहता हूं कि अब शीघ्र ही तुम्हारे बल शौर्य की परीक्षा होने वाली है। प्यारे सामन्तगण! यह राज तुम्हारे ही आधार पर है। तुम्हीं इसके

स्तम्भ हो। मैं यहां का शासक नहीं तुम्हीं लोगों का तुच्छ सेवक हूं, तुम्हीं ने मुझको अपना कर मुझे मान सन्मान दिया है और अपना पेशवा बनालिया है। बस मुझ में और तुम में इतना ही अन्तर है कि मैं तुम्हारा पेशवा हूँ और तुम मेरे सहयोगी हो। किसी भी बात की आज्ञा मैं नहीं देता हूँ और मैं देने वाला भी कौन हूँ यह तो तुम्हारा निज कर्तव्य है। यह देश तुम्हारा ही तो है। तुम्हीं तो इसकी प्यारी सन्तान हो। अपनी जननी जन्म-भूमि मेवाड़ के लाडले सुपुत्र हो। क्या इसकी रक्षा करना तुम्हारा कर्तव्य या धर्म नहीं है?"

सब वीर एक साथ बोल उठे—"जय जय जननी जन्म-भूमि की जय!!!

### कवित्त

आपदायें झेले घोर संकट सहेंगे हम,
किन्तु निज मुख से न उफ भी निकारेंगे
सादर करेंगे भेंट तन मन सर्वस्व हम,
मातृ पद पंकज पै प्राण हम वारेंगे॥
देशद्रोहियों का मान मर्दन करेंगे हम,
गर्व शत्रुओं का चूर चूर कर डारेंगे।
भीषम के प्रण से भी भीषण कठोर आज,
प्रण है हमारा हम वीर-व्रत धारेंगे॥

——:o:——

जिस ठौर बहा अब तक आखों का ही पानी है।
अब हमको वहाँ सरिता शोणित की बहानी है॥

मेवाड़ पर संकट की घिर आई हैं घटायें।
उसको घटा घटा कर बिलकुल ही घटानी है॥
सर्वस्व अपने प्यारे मेवाड़ पै वारेंगे।
प्राणों की भेंट उसके चरणों पै चढ़ानी है॥
मेवाड़ की सेवा में जीवन को गंवा देंगे।
प्रण है यही हमारा जी में यही ठानी है॥

राजपूतों का यह सिंनाद सुनकर राणा प्रताप खुश हो गये। वह अपने वीरों को दुगना उत्साह दिलाने लगे। वह बोले 'वीरो मैं जानता हूँ कि तुम ऐसे ही बहादुर हो मुझे तुम्हारी शक्ति पर पूरा भरोसा है। इस में तनिक भी सन्देह नहीं कि तुम मुगलों से कहीं अधिक बलवान हो। यद्यपि यह सत्य है कि मुगलों के सामने हम लोगों की सेना बहुत कम है बल्कि कुछ नहीं के बराबर है किन्तु फिर भीमुझे तुम लोगों की शक्ति पर पूरा भरोसा है। तुम्हारा साहस तुम्हारा उत्साह अपूर्व है।

राजपूतों को पूर्ण प्रोत्साहन प्राप्त हो रहा था फिर वह क्यों न भड़कते ? वह कड़कते हुये कहने लगे:—

कवित्त

कठिन कठोर करवाल काल सी कराल,
काठ के कटारकूर कब लौं कहायेंगे ?
घहर घहर घिर आये घनघोर घटा,
गरज गम्भीर से न हम घबड़ायेंगे।

साहसी सहनशील सुदृढ़ सुमेरु सम,
प्राण दान देने में न नेक सकुचायेंगे ॥
साह्लाद काल को लगायेंगे गले से हम,
मात्रभूमि हेतु हम जीवन गंवायेंगे ॥

—⊙—

सब ने एक स्वर से कहा—"जननी जन्मभूमि की जय" "महाराणा प्रताप की जय" जयघोशों से पृथ्वी कम्पित होने लगी। राजपूतों ने कहा—"महाराणा! जब तक हमारे शरीर में रक्त की एक बूंद भी शेष रहेगी तब तक हम मातृभूमि की सेवा से विमुख न होंने। हमने जन्मभूमि के लिये ही जन्म लिया है और हम जन्मभूमि के लिये ही मरेंगे। हमारे प्राण मातृभूमि पर बलिदान होने में ही अपना गौरव समझते हैं। हमारे शरीर में शोणित है पानी नहीं है। हमारे देश का बच्चा बच्चा मातृभूमि की रक्षा के लिये हर समय प्राणों को भेंट चढ़ाने को तैयार है।

राजपूतों के यह वाक्य सुनकर महाराणा प्रताप को हर्ष हुआ। वह कहने लगे—"मेरे बहादुरों सरदारों! तुम्हीं मेवाड़ के सपूत हो। मेवाड़ को तुम जैसे लोगों पर ही अभिमान है। भाईयों! हमारी यह लड़ाई स्वतन्त्रता की लड़ाई होगी। हमारा किसी जाति विशेष से कोई द्वेश नहीं है। हमारा अकबर से भी व्यक्तिगत द्वेष नहीं है। मानसिंह या अन्य व्यक्ति से भी हमें कोई शत्रुता नहीं है। हम तो केवल मेवाड़ की स्वतन्त्रता के लिये लड़ना चाहते हैं। हमतो अपनी मातृभूमि की रक्षा करना चाहते

हैं उन लोगों ने हमारी जन्मभूमि को पद-दलित किया है यही हमारी उनकी शत्रुता है। हमारा मतलब इससे नहीं कि वह लोग यवन हैं। हमें यवन जाति या इस्लाम धर्म से कोई बैर नहीं है। हाँ! यदि उन यवनों को हम हिंदुओं से या हमारे हिंदू धर्म से बैर है तो हुआ करे। उन लोगों में धार्मिक पक्षपात है तो हुआ करे। परन्तु इससे कोई लाभ नहीं। हिन्दू धर्म या हिंदू जाति को हानि अवश्य होती है किन्तु उसका सर्वस्व नाश कभी नहीं हो सकता चाहे वह लोग कितनी भी कोशिश क्यों न करलें। गजनवी, गौरी और तैमूर जैसे क्रूर व्यक्ति भी लाख कोशिश करने पर इसको नष्ट न कर सके। यह उनकी भूल है। समय आने पर ही वह स्वयं ही सम्हल जायेंगे। धार्तिक पक्षपात करने से कोई लाभ नहीं होगा। हमारा युद्ध धार्मिक या जातीय युद्ध नहीं है स्वतन्त्रता का युद्ध है। भाइयों! तुम जानते हो हमारी कैसी स्थिति है। हम लोग अकेले हैं। उन लोगों की शक्ति हम लोगों से कई गुणा अधिक है। वह शक्तिशाली स्वयं नहीं हुये हमारे भाइयों ने ही उन्हें बलवान बना दिया है। तुम्हें मालूम है कि शक्तिसिंह भी इस समय उन्हीं का मित्र है। वह मेवाड़ का सुपुत्र हमारे विरुद्ध ही लड़ेगा। मानसिंह आदि राजपूत राजा भी युद्ध में हमारे ही विरुद्ध खड़े होंगे। क्या यह खेद एवं आश्चर्य की बात नहीं है। उन लोगों ने अपनी स्वतन्त्रता अपने आप नष्ट कर रक्खी है। यह लोग कितने वीर है फिर भी परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़े हुये हैं। इन्होंने अपने पैरों में अपने आप कुल्हाड़ी मारी है। अपने शत्रुओं से सम्बन्ध स्थापित

करके अपने गौरव एवं यश को कलंकित बना लिया है। जब तक पृथ्वी और आकाश कायम हैं यह कलङ्क कभी दूर नहीं हो सकता। परन्तु इसकी उन्हें चिन्ता ही क्या है। हमने उन्हें समझाया था वह न समझ सके हमारी बात न माने। इसके विपरीत वह हमको ही उल्टी पट्टी पढ़ाने लगे। खैर अब हमें इससे क्या मतलब ? हमको तो अब अपने कर्तव्य की ओर दृष्टिपात करना है। वह हमारा कर्तव्य है—"मातृ भूमि की रक्षा" "जन्मभूमि की सेवा।"

सब राजपूत सरदार बोल उठे—"जय जय मेवाड़ भूमि की जय, जन्मभूमि की जय, महाराणा प्रताप की जय,,—सब मिलकर राष्ट्रीय गीत गाने लगे—

गायन।

हम जन्मभूमि की रक्षा-हित प्राणों की भेंट चढ़ायेंगे।
हम मां के सच्चे बालक हैं यही दुनियां को दिखलायेंगे ॥
मेवाड़ प्रदेश हमारा है।
प्राणों से ज्यादा प्यारा है।
तन मन धन इस पर वारा है॥
प्रण यही हृदय में धारा है।
निज मातृभूमि की सेवामें हम अपने प्राण गंवायेंगे।
हम जन्म-भूमि की रक्षा हित प्राणों की भेंट चढ़ायेंगे ॥
दुख संकट घोर सहेंगे हम।
मुख से 'ऊफ, भी न कहेंगे हम ॥

प्रण अपना पू गे हम।
मृत्यू से भी न डरेंगे हम॥
कर्तव्य करेंगे पूरा हम प्रण सदा "उमेश,, निभायेंगे॥
हम जन्म भमि की रक्षाहित प्राणों की भेंट चढ़ायेंगे॥

---

# सातवां परिच्छेद

## प्रताप की कठोर आज्ञा

राणा प्रताप ने देखा कि समस्त वीर सरदार युद्ध के लिये उत्सुक हैं। वह अत्यन्त प्रसन्न हुए और दरबार की तैयारियां करने लगे। एक रोज एक आम दरबार किया गया जिसमें सरदारों के अतिरिक्त प्रजा के प्रमुख व्यक्तिभी उपस्थित थे। दरबार में महाराणा ने ओजस्वी भाषा में एक व्याख्यान दे डाला, सब लोग फड़क उठे। तदनन्तर एक प्रस्ताव महाराणा ने सबकेसन्मुख रक्खा। वह कहने लगे—"मेरे बहादुर भाइयों! तुम जानते ही हो कि हमारी वर्तमान राजधानी उदयपुर इस समय किस दशा में है? न तो हमारे पास इस समय पर्याप्त धन है, और न पर्याप्त सेना ही। जिसके द्वारा हम यवनों का खुल्लमखुल्ला निर्भय होकर मुकाबला कर सकें। अच्छा हो यदि हम इस समय दूरदर्शितासे कामलें और राजनीति एवं युद्ध-नीति काप्रयोगकरें। मेरी रायमें उदयपुर को छोड़कर कुछ काल के लिये कुम्भलमेरको अपनी राजधानी वसाना चाहिये। कुम्भलमेर का दुर्ग उदयपुरके

दुर्ग से अधिक सुरक्षित है। इस समय अपने देश का मोहछोड़ कर जङ्गलों में ही निवास करना हम लोगों के लिये हितकर होगा। मैं जानता हूँ कि यह कार्य बड़ा कठिन है और इसमें आप लोगों को बड़ा कष्ट होगा परन्तु मातृ-भूमि के हित के लिये यदि यह कष्ट सहन किया जाये तो यह कष्ट कष्ट नही कहलायेगा। कहिये! लोगों की क्या राय है? क्या आप सब लोग मेरी राय से सहमत हैं? क्या आप छाती पर पत्थर रख कर मेवाड़-भूमि को छोड़ सकते हैं। क्या आप महलों में रहने वाले सुन्दर गृहों में निवास करने वाले जंगलों में रह सकते हैं? भाइयो! मातृ-भूमि की तुम्हें सेवा करनी है। सेवा में सुख कहां इसमें तो कष्ट ही हैं? मखमली गद्दों पर नहीं तुम्हें कांटों पर सोना होगा। पथरीली कण्टकमय भूमि पर तुम्हें चलना होगा। भूखे प्यासे वस्त्रहीन रहकर भी जीवन बिताना होगा। पानी की जगह अपने हृदय के रक्त के घूंट पीने होंगे। षट-रस व्यञ्जन के बजाय मोहन भोग के स्थान पर अपने हृदय के टुकड़े खाने होंगे। सेवा कार्य बच्चों का खेल नहीं लोहेके चने चबाना है। बोलो करोगे ऐसा? मैं तुम्हारी सम्मति चाहता हूं, तुम्हारी आज्ञा चाहता हूं। मुझे तुम अपना राजा मत मानों, मैं तुम्हारा भाई हूँ। जैसे तुम हो वैसा ही मैं हूँ। बस अन्तर इतना ही है कि तुमने मुझे सन्मान प्रदान किया है और अपना राजा...नहीं नहीं...नेता मान लिया है। बोलो क्या मेरी राय से तुम लोग सहमत हो? क्या ऐसा कठोर व्रत धारण करने के लिये तुम तैयार हो?"

महाराणा के इस वक्तव्य को सुनकर सर्वत्र सन्नाटा छा गया। सब लोग सोचते थे—क्या हमें अपनी प्यारी मेवाड़ भूमि को छोड़ना पड़ेगा ? क्या अपनी जननी जन्मभूमि से विदाई लेनी पड़ेगी। लोगों के दिल दहल गये। वीर सुभट सरदार भी विचलित हो गये। उनकी इच्छा हुई कि वे राणा से कहदें कि हम लोग आपके इस प्रस्ताव से सहमत नहीं, परन्तु फिर सोचने लगे कि इसमें हमारा ही नुकसान है प्रतापसिंहसत्य ही कह रहें हैं। उदयपुर में रहना हम लोगों के लिये खतरे से खाली नहीं। पहाड़ों और जङ्गलों में रहने से ही कुछ कार्य हो सकेगा। बेचारा प्रताप हमारे ही हित की बात तो कह रहा है। जो कष्ट हमको,सहने पड़ेंगे वही उसको भी तो सहने होंगे। किसी की हिम्मत न हुई कि कोई राणा प्रताप से कुछ कह सके।सबने उनके प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। राणाप्रताप केतेज का ही यह प्रभाव था कि किसी का भी यह साहस त हुआ कि उनकी इच्छा के विरुद्ध कोई कुछ काम न कर सके।सब लोग जानते थे कि राणा कोई ऐसा कार्य नहीं कर सकते जिसमें देशका अहित हो। देश वासियों की जिसमें हानि हो ऐसी बात वह अपने मुख से नहीं निकाल सकते। सारे मेवाड़ देश को अपने नेता या राणा पर पूर्ण विश्वास था। क्यों न होता ? राणा प्रताप ने क्या कम त्याग किया था ? किसके लिये ? देश के लिये ही तो।

दूसरे ही दिन राणा प्रताप ने यह घोषणा करवादी कि मेवाड़ खाली करदिया जाये। एक भी बच्चा उदयपुर नगर में न

रहें ! यदि कोई इस आज्ञा का उल्लंघन करेगा वह कठोर से कठोर दंड पायेगा । महाराणा की इस कठोर आज्ञाको सुनकर सब लोग मेवाड़ छोड़ने लगे । एक२ घर खाली होने लगा धीरे २ समस्त मेवाड़ एक उजाड़ प्रान्त होगया ।

जहां बाग थे बगीचे थे वहां एक फूलका निशान भी न रहा। जहां एक दिन कोयलें और बुलबुलें बोला करती थीं वहां उल्लू बोलने लगे । बड़े २ महल सुनसान होगये, वहां चमगादड़ों ने अपने घर बना लिये । जिस नगर की शोभा को देख देख कर सुरपुर भी लज्जित होता था वह अब श्मशान के समान दृष्टि-गोचर हो रहा था ।

जिस समय लोग मेवाड़ की अपनी प्यारी जननी जन्मभूमि को छोड़ रहे थे उस समय उनकी क्या दशा थी ? यह कैसेवर्णन किया जाये ? किसी पक्षी का घोसला हटा लिया जाये तबउसकी विकलता देखिये, वह कैसा विकल हो जाता है । यही दशा उन सब लोगों की हो रही थी । समस्त राजधानी खाली हो गई।सब लोग मेवाड़ निवासी अपने पूज्य नेता महाराणा प्रताप के साथ मेवाड़ से विदा हुये । विदा होते समय सब के नेत्रों में आंसू थे । सब के हृदय फट रहे थे ।ठीक उसी तरह जिस प्रकार पुत्रअपनी माता से अलग हो रहे हैं । उस समय क्या माता नहीं रोती ? रोती है । कलेजा फाड़२ कर रोती है । मेवाड़ की भूमि भी रोरही थी। उसका वर्ण मलीन हो रहा था उसका तन क्षीण हो रहाथा वह उजड़ चुकी थी। उसका संसार सूना हो चुका था । वहकह

रही थी—"मेरे प्यारे पुत्रो। मुझे छोड़ कर कहां जा रहे हो? क्या फिर मुझसे कभी न मिलोगे? क्या मैं तुम्हें फिर कभी अपने हृदय से न लगा सकूंगी? क्या मैं तुम्हें फिर कभी 'बेटा कहकर न पुकार सकूंगी? अरे कठोर हृदय वाले पुत्रो! अपनी जननी को कहां छोड़े जाते हो? क्या अपनी अभागिनी मातासे सम्बन्ध विच्छेद करना चाहते हो? क्या हमेशा के लिये उसे भूलना चाहते हो? अरे प्रताप बेटा प्रताप! तूतो मेरा सच्चा बेटा है तूने तो मुझे आश्वासन दिया है? क्या उसे भूल गया बेटा? आह!! क्या तू इतना कठोर है? ऐसा निर्दयी है? क्या तू ऐसा पाषाण हृदय है?···मेवाड़ भूमि रो रही थी, गायकी तरह डकरा रही थी। उसका आर्त्तनाद सुनकर आकाश का हृदय फटापड़ता था। दिशायें चीख उठती थीं। परन्तु प्रणवीर प्रताप अपने प्रण से विचलित नहीं होता था।

प्रताप की आखें भी सजल होरही थीं उसका हृदय भी बेकल हो रहा था। वह अपनी प्यारी जननी जन्म-भूमि कीओर देखता था और मानों क्षमा मांगते हुये कहता था—'मां! मां!! विदा करो!अपने पुत्रो को उत्साह सहित विदाकरो! हम तुम्हारे पुत्र होकर तुम्हें कैसे भूल सकते हैं परन्तु विवश हैं। यदि हम तुम्हारे पास रहें तो तुम्हारी रक्षा न हो सकेगी तुम अधिक पद-दलित की जाओगे। हम तुम्हारी रक्षा के लिये ही तुम्हारा परि-त्याग कर रहे हैं यदि भाग्य अनुकूल रहा तो शीघ्र हो तुमसेआ मिलेगें। अभी तो विदा करो मां। आशीर्वाद दो माता कि हम

दुख सङ्कटों को धैर्य पूर्वक सहन कर सकें।' सभी के नेत्रों में आंसू थे।

पशु पक्षी इत्यादि भी मेवाड़वासियों के विछोह से दुखी से रहे थे। उनकी चहचहाहट व करुण-पुकार उनकी विकलता प्रकट कर रही थी सब लोग चले गये। महाराणा प्रताप अपनी रानी व अपने पुत्रों पुत्रियों को लेकर मेवाड़-वासियों के सहित मेवाड़ छोड़ कर जंगलों में चले गये। रास्ते में "मेवाड़ की जय, जननी जन्मभूमि की जय, मेवाड़ मार्तण्ड महाराणा प्रताप की जय से सब लोग अपना उत्साह द्विगुणित कर रहे थे। पथरीले कंटक मय मार्गों को पार करते हुए सब लोग चले जा रहे थे।

जङ्गल में मङ्गल होने लगा। उस सुनसान भयंकर बनमें एक नया नगर बस गया। कुम्भलमेर दुर्ग आबाद हो गया। सब लोग वहीं रहने लगे।

एक दिन का जिक्र है, महाराणा अपने घोड़े पर सवार हुये कहीं जा रहे थे। चलते २ वह उदयपुर पहुंच गये। वहां उन्होंने देखा कि मनुष्य का नाम निशान भी नहीं है। वह यह भी देखना चाहते थे कि उनकी आज्ञा का पालन कहां तक किया गया है। अचानक रास्ते में उनकी नजर एक गड़रिये पर पड़ गई, वह अपनी भेड़ बकरियां वहां चरा रहा था। बस यह देखते ही राणा को क्रोध आ गया और झपट कर वह गडरिये के पास पहुंच गये। गड़रिया राणा को देखते ही कांप उठा और उनके पैरों पर गिरकर क्षमा याचना करने लगा, प्रताप ने उसका

एक भी बहाना न सुना और तलवार से वहीं उसका काम तमाम कर दिया।

पाठकों को प्रताप का यह व्यवहार उचित न प्रतीत हुआ होगा। हां यह सत्य है कि प्रताप अपनी हठ के पक्के थे। परंतु नेता में कठोरता होनी ही चाहिये तभी वह कार्य कर सकता है। उस समय की परस्थिति बड़ी नाजुक थी और उन दिनों ऐसी कठोरता की ही आवश्यकता थी। नेता या नरेश की आज्ञा न मानने का कठोर दण्ड ही मिलना उचित था। अन्यथा मर्यादा भंग होती थी और प्रताप की आज्ञा का कोई प्रभाव न होता। प्रत्येक व्यक्ति उसकी आज्ञा उल्लंघन करने का साहस कर बैठता प्रताप के इस कार्य से सबके कान खड़े हो गये। दूसरी बात यह भी थी कि प्रताप को अपनी हठ के आगे कुछ नहीं सूझता था। वह आज्ञा पालन करने या प्रणपूर्ति करने में बड़े कठोर और पक्के थे। ऐसे नेताओं का स्वभाव कठोर ही होता है। आजकल भी तो इटली के तानाशाह मुसोलिनी और जर्मनी के भाग्य-विधाता हर हिटलर का यही हाल है। वह भी ऐसे ही कठोर हृदय वाले हैं और प्रण पूर्त्ति में भयंकर कार्य भी कर डालते हैं।

## प्रताप की नई राजधानी

महाराणा प्रताप ने पहाड़ पर पहुंच कर कुम्भलमेर को अपनी राजधानी बना लिया। वहां खूब चहल हहल होने लगी। प्रत्येक व्यक्ति अपने २ कर्त्तव्य की पूर्ति का यत्न करने में संलग्न दिखाई देता था। कुम्भलमेर दुर्ग भी एक अच्छा दुर्ग

है। वहां पहुँचने के केवल एक दो मार्ग ही हैं । अधिक नहीं। यह उदयपुर के पश्चिमी भाग में बसा हुआ है। इसकी लम्बाई चौड़ाई दोनों ओर से लगभग अस्सी मील है । इसके चारों ओर पहाड़ ही पहाड़ हैं पहाड़ों के अतिरिक्त जंगल भी हैं। इसका दुर्ग बनाया हुआ नहीं है। मनुष्य ने नहीं प्रकृति ने इस को अपने कुशल करों से बनाया है। इसका परकोटा ( चहार दीवारी) कोई नहीं है। पहाड़ियों की श्रेणियां ही चहार दीवारी का काम देती हैं । अतः यह दुर्गस्वतः ही सुरक्षित बन गया है। यही कारण था कि राणा प्रतापने उदयपुर को छोड़ कर कुम्भल- मेर को अपनी राजधानी बनाया। उदयपुर भी यूं तो पहाड़ोंसे घिरा हुआ प्रदेश ही है किन्तु इतना सुरक्षित नहीं जैसा कि कुम्भलमेर है। हां चित्तौड़ था किन्तु वह उनके अधिकार में ही नहीं था।उसीको अधिकारमें करने के लिये यह सारा बखेड़ा ही खड़ा किया गया था। उदयपुरमें जैसे सुख थे वह यहां कुम्भ- लमेर में प्राप्त कहाँ थे। यह तो पहाड़ी और जङ्गली स्थान था । न खानेकासुख न रहने का सुख। हां प्राकृतिक दृश्यों की नैसर्गिक छटा ने अवश्य उस स्थान को मनोरम एवं सुन्दर बना रक्खा था। यूंतो तमाम मेवाड़ ही पहाड़ी स्थान है । उदयपुर चित्तौड़, कुम्भलमेर आदि सभी के दुर्ग पहाड़ों से सुरक्षित हैं । अरावली की पहाड़ियों ने इस प्रांत को अपने अधिकार में कर रक्खा है। उदयपुर इसी पहाड़ी प्रांत का केन्द्र है । अस्तु ......

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कुम्भलमेर में आने के दो एक मार्ग थे। आजकल की तरह रेल वगैरा तो थी नहीं

पैदल या घोड़ों के द्वारा ही आना जाना होता था। एक मार्गजो मुख्य था वह एक घाटी थी। वही घाटी "हल्दीघाटी" के नाम से प्रसिद्ध है।

यहाँ के जङ्गलों में भीलों का निवास भी था। अब भी भील लोग यहां पाये जाते हैं। यह जाति बड़ी बहादुर होती है साथ ही निर्दयी भी। युद्ध कौशल में भी यह लोग बड़े प्रवीण होते हैं। यह लोग अपने सरदारों के अतिरिक्त किसी के आधीन नहीं रहते और हमेशा स्वतन्त्र रहकर जीवन व्यतीत करते हैं। नगर में यह लोग नही पाये जाते हैं हमेशा जङ्गलों में ही रहते हैं। उदरपूर्ति के लिये लूट मार भी किया करते हैं। उदयपुर के नरेशों से इनकी संधि है अतः यह राज्य को कोई हानि नहीं पहुंचाते। यह लोग अपनी बात के बड़े पक्के होते हैं। आन के लिये मर मिटना यह लोग अपना धर्म समझते हैं।

महाराणा प्रताप का भी इन लोगों ने बहुत साथ दिया। प्रताप के उद्देश्य एवं प्रण को देखकर यह लोग उनके मित्र होगये। पहलेइन्हीं भीलोंको राजपूतों ने हराकर मेवाड़से निकाल दिया था और इसीलिये वह बेचारे जङ्गल में रहने लग गये थे। इस समय वह लोग अपने उस तिरस्कार को भूल गये। उनके हृदय में भी स्वतन्त्रता का जोश छा गया। मेवाड़ के मूल निवासी तो वही भील लोग ही थे। मेवाड़ प्रांत उनका भी तो जन्म स्थान था। उनकी जननी जन्मभूमि भी तो मेवाड़ की ही पवित्र भूमि थी। उनका मूल मन्त्र भी तो यही था—

इधर महाराणा प्रताप युद्ध की तैयारी में लगे हुये थे उधर अकबर को भी इन बातों की खबर थी। वह भी शान्त बैठने वाला व्यक्ति न था। वह चाहता था कि प्रताप एक क्षण के लिये भी न बैठ सके और अन्त में तङ्ग आकर वह मुग़लों की आधीनता स्वीकार कर ले।

मुग़ल सेना के सिपाहियों ने प्रताप का पीछा यहाँ भी न छोड़ा। वह लोग यहां भी आकर तङ्ग किया करते थे। छोटी मोटी लड़ाइयाँ नित्य ही हुआ करती थीं। मुग़ल सैनिक प्रताप की शक्ति कम करना चाहते थे। किन्तु उन लोगों की एक भी न चलती थी, राजपूतों ने भी यहाँ ऊधम मचा रक्खा था। भील लोग भी उनसे मिले हुये थे वह लोग पहाड़ियों की शिलाओं पर बैठ जाते थे और जिस यवन सैनिक को आता हुआ देखते उसी पर पत्थरों की वर्षा शुरू कर देते थे या बड़ी बड़ी शिलायें उन पर पटक देते थे और वह यवन सैनिक, वहीं दबकर मर जाते थे।

राजपूतों और भीलों ने मिलकर आसपास लूटमार भी शुरू करदी। उस रास्ते से यदि व्यापारी माल लेकर जाते थे तो वह उनको लूट लेते थे। उन दिनों उसी रास्ते होकर व्यौपार हुआ करता था। उत्तरीय राजपूताने व आसपास के प्रान्तों से जो माल यूरोप को जाता था वह उसी रास्ते होकर जाया करता था क्योंकि वही रास्ता निकट पड़ता था। उस लूट मार के द्वारा ही वह लोग उदरपूर्ति किया करते थे।

महाराणा प्रताप को अपने इन साथियों पर बड़ा गर्व था।

यही सब कुछ महाराणा की सम्पत्ति थी। क्योंकि राणा के पास न तो धन था और न किसी अन्य राज की सहायता। उसको अपने इन्हीं थोड़े से वीरों का विश्वास था। सभी वीर प्रताप को अपना नेता या महाराणा मानते थे और उसके लिये अपने प्राण भी देने को तैयार रहते थे। महाराणा के पास बाईस हजार वीरों की सेना तैयार हो चुकी थी। इसके अतिरिक्त भील लोग भी उनकी सहायता के लिये तैयार थे। किन्तु इतनी सेना भी उनके लिये पर्याप्त नहीं थी। इन सैनिकों के कम होने पर महाराणा को कहीं से सहायता मिलने की आशा नहीं थी। इसके विपरीत मुग़लों के पास तो सैनिकों की कमी ही नहीं थी। लाखों वीर योद्धा उनके पास हर वक्त तैयार रहते थे

———

# आठवाँ परिच्छेद

## पगड़ी की प्रतिष्ठा

जिन दिनों राणा प्रताप कुम्भलमेर में अपनी सेना का संगठन करने में व्यस्त थे उन्हीं दिनों एक रोज एक भाट जिसका नाम सीतल था उनके पास आया। इस भाट की कथा एक मनोरंजक कथा है। पाठकों के मनोरंजनार्थ हम उसका यहां उल्लेख करना अनुचित नहीं समझते। यूं तो यह एक साधारण घटना है किन्तु आशा है यह व्यर्थ सिद्ध न होगी। पाठकों को इससे मालूम होगा कि सर्व साधारण की नजरों में राणा प्रताप की क्या कद्र थी।

सीतल भाट एक साधारण भाट था । वह बहुधा राजाओं महाराजाओं के पास आयाजाया करता था । भाट लोग हरएक जाति में ही हुआ करते हैं । आजकल भी यह लोग प्रायः सर्वत्र ही पाये जाते हैं । प्राचीन काल से ही यह लोग चले आते हैं । इनका क्या काम होता है ? यह बात तो सब लोग जानते हीहैं। दान दक्षिणा से ही इन लोगों का पालन पोषण होता है । विवाह आदि शुभ अवसरों पर यह लोग बहुत काम किया करते हैं ।

सीतल भाट जिस समय प्रताप के पास पहुंचा उस समय वह वहां की दशा देखकर चकित होगया । उसे समझते देर न लगी कि इसका क्या कारण है ? महाराणा प्रतापसिंह का प्रण उसे मालूम हो चुका था । वह अपने प्रण का कैसी कठोरता से पालन कर रहे थे यह देख कर सीतल का हृदय भर आया । चटाई पर सोना, पत्तलों पर भोजन करना, ऐसा अपूर्व त्याग ? आहा ! कैसा कठोर व्रत था वह एक साधारण सैनिक की भांति जीवन व्यतीत कर रहे थे महाराणा की भांति नहीं । सारेसुखों को वह लात मार चुके थे जिस प्रकार उनकी प्रजा रहती थीउसी प्रकार वह भी रहते थे । साम्यवाद का प्रचार था । सब एक समान थे । कोई छोटा बड़ न था ! वाह ! वाह !!कैसा सुखमय राज्य था । सुखमय ( ? ) हाँ यह सुखमय ही था उन वीरों के लिये जो सर्वस्व त्याग कर बैठे हों ।

महाराणाने सीतल भाट का स्वागत सत्कार किया,आजकल तो इतना आदर भाटों का नहीं है परन्तु प्राचीन काल में इनका

बड़ा आदर था। भाट खास कर प्रशंसा ही किया करते थे। परन्तु महाराणा को अपनी प्रशंसा अच्छी नहीं मालूम होती थी। वह नहीं चाहते थे कि लोग उनकी वीरता का गुण गान करते रहें या 'धन्य' 'धन्य' या 'जय' 'जय' कार किया करें। वह चाहते थे कि लोग कहें नहीं, कुछ करें। वह कहनेकी अपेक्षा करना अधिक उत्तम समझते थे। आजकल भी नेताओं का यही विचार है। हिटलर और मुसोलिनी तथा हमारे देश के युवक नेता वीर जवाहर लाल नेहरू भी यही उद्देश्य अपने सामने रखते हैं संसार के जितने बड़े२ नेता हुये हैं सब का यही उद्देश्य रहा है। उनका कहना है कि "पहले कार्य करो और फिर प्रोग्राम बनाओ।" अस्तु........

महाराणा को मालूम था कि सीतल भाट है और वह प्रशंसा का बखान करेगा सीतल भाट ने स्वयं ही महाराणा से कह दिया कि मैं कोई कविता आपको सुनाना चाहता हूँ। महाराणा बोले-"सीतल! यह समय तुम जानते हो हमारे लिये कैसा भयानक है हमारे कान इस समय कविता का पाठ नहीं सुनना चाहते अपितु रणभेरी की अवाज और तलवारों की झन्कार सुनना चाहते हैं। हमरा ध्यान हर समय युद्धकी ओरही लगा रहता है। हमें कविता सुनने का अवकाश कहां!......" सीतल महाराणाके यह वाक्य सुनकर उदास होगया और खिन्न होकर कहने लगा—"महाराणा जी! क्या मैं निराश होकरलौट जाऊं?" उसी समय महारानी ने कहा "नहीं नहीं सीतल!

तुम्हें निराश न होना पड़ेगा। प्राणनाथ! सीतल की इच्छा पूरी होनी चाहिये?"

महाराणा सीतल की ओर देखकर कुछ हंसते हुये बोले—'अच्छा सीतल तुम्हारे उत्साह को हम भंग करना नहीं चाहते। तुम अपनी कविता सुना सकते हो।" सीतल प्रसन्न होगया। वह अपनी कविता सुनाने लगा। वह बुद्धिमान था और सुकवि भील उसकी कविता बड़ी जोशीली थी उसको सुन कर महाराणा महारानी व अन्य सभी उपस्थित सरदारगण बहुत खुश हुये। सब वीरों का उत्साह द्विगुणित होगया। चारों ओर से सीतल की प्रशंसा होने लगी। किन्तु दूसरे ही क्षण महाराणा के मुख पर चिन्ता की कुछ रेखायें दौड़ आईं।

यह देख कर सीतल को बड़ा आश्चर्य हुआ। वह उदास होकर कहने लगा—"क्या मेरी यह तुच्छ कविता महाराणा को पसन्द नहीं आई?" महाराणा चौंक पड़े और बोले—"सीतल यह बात नहीं है। तुम्हारी कविता से हमको बहुत आनन्द प्राप्त हुआ है। जैसी कविता का हम अनुमान कर रहे थे तुम्हारी कविता उससे कहीं अधिक सुन्दर है। वास्तव में कविता का आकर्षण बड़ा विचित्र है। कविता का प्रभाव निसंदेह असाधारण होता है।" उसी समय महाराणा का एक सेवक एक पात्र में कुछ धन लेकर आगया। महाराणा ने वह धन सीतल को देते हुये कहा—"सीतल! लो इसी को इस समय स्वीकार करलो। मेरी चिन्ता का यही कारण था कि इस जगह

मैं तुम्हें क्या उपहार दे सकता हूँ ? मेवाड़ प्रान्त की आज यह दशा है कि वह तुम्हें उपहार देकर सन्तुष्ट नहीं कर सका। क्या मेवाड़ाधीश कहाने वाले राणा के लिये यह कम चिन्ता की बात है ? "यह कहते कहते महाराणा फिर उदास हो गये।

शीतल उसी समय हाथ जोड़ कर कहने लगा:-"महाराणा ! यह आप क्या कह रहे हैं ? मैं अन्य भाटों की तरह आपकी सेवा में नहीं आया हूं। मेरा उद्देश्य यह कभी नहीं था कि मैं कविता सुनाकर आपसे धन प्राप्त करूँ ! आपके प्रति मेरे हृदय में कैसी श्रद्धा है यह मैं कैसे वर्णन करूँ ? श्रीमान् आप के पास मैं धन के लोभ से नहीं आया केवल आपके पवित्र दर्शनों की उत्कट अभिलाषा ही मुझको यहां तक खींच ले आई है। भगवान की कृपा से अपने पालन पोषण के लिये आवश्यकता से भी अधिक धन मेरे पास है। जो कुछ मेरे पास है वह आप ही लोगों का दिया हुआ है। महाराणा ! यह धन आपके दर्शनों से बढ़ कर नहीं है। आपके दर्शनों को प्राप्त करके मैं कृतार्थ हो गया हूँ।" शीतल के यह वाक्य सुनकर सब चकित हो गये, और उसके मुख की ओर देखने लगे। महाराणा ने भी धन का उपहार लेने के लिये उसको कई बार कहा परन्तु वह लेना स्वीकार ही न करता था। जब महाराणा ने बहुत अनुरोध किया तो वह बोला—"श्रीमान् ! यदि आप मुझे उपहार देना ही चाहते हैं, और मुझ से आप अत्यन्त प्रसन्न हैं तो जो मैं माँगूँ वही वस्तु मुझे देने की कृपा कीजिये।" महाराणा ने स्वीकार कर लिया

और कहा—"बोलो ! तुम क्या चाहते हो ?" शीतल ने कहा—"महाराज ! मैं केवल एक सरोपा चाहता हूँ" सरोपा पांच कपड़ों को कहते हैं जो कि पुरुष पहिनते हैं। महाराणा को यह सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ और कहने लगा—"नहीं र कुछ और भी मांगो यह तो बहुत साधारण है।" शीतल ने कहा—"महाराणा मेरे लिये अमूल्य है" अन्ततः महाराणा ने शीतल को सरोपा देकर विदा किया। सरोपा पाकर शीतल को जो खुशी हुई वह अकथनीय है। असंख्य धन प्राप्त करके भी इतना हर्ष उसको नहीं हो सकता था।

कुछ समय पश्चात् शीतल घूमता घामता अकबर के दरबार में भी पहुँच गया। जब वह अकबर के सामने गया तो उसने अपनी पगड़ी उतार ली और फिर वह कोरनिश (सलाम) की। यह देखकर सब दरबारी लोग चकित हो गये। अकबर को भी क्रोध आ गया। उसने कहा—"बेवकूफ ! तू कौन है ? क्या तुझे दरबार का नियम नहीं मालूम ? पगड़ी के उतारने के बाद तूने सलाम क्यों किया; ऐसा करने का क्या कारण है।

शीतल ने गम्भीरता से उत्तर दिया—"बादशाह सलामत ! क्या आप मुझे भूल गये ? मैं वही सीतल भाट हूं जो पहले भी कई बार आपकी सेवा में उपस्थित हो चुका हूँ।" अकबर ने कहा-'लेकिन तूने पहले तो ऐसा कभी नहीं किया।" सीतल बोला—"जहां पनाह ! आप ठीक कहते हैं। बात दर असल यह है कि इस बार जब मैं आप के दरबार में आया तो

मेरे सिर पर महाराणा प्रताप की दी हुई पगड़ी थी। उस महा-राणा प्रताप की जिसने अपना सिर सिवाय भगवान के किसी के आगे नहीं झुकाया है। भला मैं ऐसे वीर की प्रतिष्ठा कैसे खो देता ? क्योंकि अगर मैं सिर झुकाता तो पगड़ी को मेरे सिर पर होने के कारण अवश्य झुकना पड़ता। यही सोचकर मैंने पगड़ी अपने सिर से हटा ली थी इसमें मैंने बुरा ही क्या किया ? "अकबर यह उत्तर सुनकर हैरान रह गया। मन ही मन में वह जल भुन कर राख हो गया लेकिन बनावटी हंसी हंस कर कहने लगा "शीतल ! शाबास !! तुम बड़े बुद्धिमान हो।" बस यह बात हंसी में ही टल गई। लेकिन अकबर इस बात को कभी न भूला। उसके हृदय में यह बात हमेशा खटकती रहती थी। राणा प्रताप का यह सम्मान उसको असह्य होगया।

देखो। पाठकगण ! एक साधारण भाट के हृदय में भी राणा के प्रति कैसी श्रद्धा थी। यह भाट राणा का नहीं था जो कि महाराणा की गुणावली गाता रहता लेकिन राणा के त्याग और वीरत्व पूर्ण आदर्श ने उस पर काफ़ी प्रभाव डाल दिया था। वह राणा को एक महान पुरुष समझ कर उनकी अपने हृदय में उपासना किया करता था। क्यों ? केवल राणा के आदर्श के एक महान पुरुष देखकर उनके कठोर व्रत को देखकर उनकी अतुल वीरता एवं साहस को देखकर !!

# नवां परिच्छेद

## हल्दीघाटी की लड़ाई

भारतवर्ष के इतिहास में हल्दीघाटी का युद्ध अपना एक मुख्य स्थान रखता है। इसका कारण केवल यही है कि यह युद्ध एक विकट युद्ध था। लाखों सैनिक मारे गये। अगणित वीर योद्धाओं के शोणित से पृथ्वी रंगी गई।

यह प्रसिद्ध लड़ाई विक्रमी सम्वत १६३२ की श्रवण शुक्ला सप्तमी को प्रारम्भ हुई थी। अर्थात् सन् १५७६ ईसवी का काल था। बरसात शुरू हो गई थी। नदी नाले भरने लग गये थे। ऐसे विकट समय में यह युद्ध प्रारम्भ हुआ।

अकबर ने एक बहुत बली विशाल सेना महाराणा प्रताप के मुकाबले के लिये भेजी थी। लाखों ही सैनिक थे जो एक से एक बढ़कर वीर और रणकुशल थे। अकबर के पास सेना की कमी ही क्या थी? काबुल से लेकर दक्षिण तक उसका राज्य फैला हुआ था। करोड़ों मनुष्य उसकी आज्ञा पालन करने को उद्यत थे। हरएक देश व हर एक राजा या बादशाह उसकी सहायता करने के लिये तैयार थे। अकबर के इशारे पर ही लाखों सैनिकों की एक सेना बनजाती थी। इस विशाल सेना के कई सेनापति थे जिसमें से हर एक महान वीर और अजेय योद्धा था। मानसिंह शक्तिसिंह इत्यादि भी इन्हीं में शामिल थे। ज्यादातर सेना नायक और सैनिक राजपूत थे क्योंकि युद्ध कला

में यही लोग प्रवीण होते हैं। वीरता में कोई भी जाति कम से कम उस जमाने में इनके समान न थी। प्रधान सेनापति अकबर का पुत्र सलीम था। वही सलीम जो अकबर के बाद जहांगीर के नामसे प्रसिद्ध हुआ। सलीम की अध्यक्षता में ही यह विशाल सेना भेजी गई थी। सलीम की अवस्था उस समय अधिक नहीं थी किन्तु वह तो प्रधान सेनापति और अध्यक्ष की हैसियत से ही था। लड़ने वाले सेनापति तो दूसरे ही थे। सेना का एक एक सैनिक चुना हुआ वीर था। जिन सैनिकों पर अकबर को पूर्ण विश्वास था वही रण में भेजे गये थे।

मानसिंह महाराज बहुत खुश थे। वह बड़े उत्साह से लड़ने आये थे। वही सेनानायकों में मुख्य भी थे। क्योंकि उन्हीं के आदेश से यह युद्ध प्रारम्भ किया गया था। वही अकबर को भड़काकर ऐसी विशाल सेना लाये थे। उनके हृदय में उल्लास और उत्साह की लहरें जोश मार रही थीं। वह सोचरहे थे कि अब राणा प्रताप से अपने अपमान का बदला अच्छी तरह लिया जायगा। राणा प्रताप को नहीं मालूम कि मानसिंह क्या है और कौन है? आज वह सब कुछ जान जायगा। मानसिंह जैसे वीर को वह कुछ नहीं समझता? जिसने काबुल बंगाल जैसे देशों को अपनी वीरता से हरा दिया। जिसका नाम सुनकर भारत के बड़े २ महान वीर नरेश कांप उठते हैं जिसकी वीरता का लोहा समस्त भारत मान रहा है, जिस के बल शौर्य से स्वयं अकबर भी प्रभावित होरहा है जिस अकेले

वीर ने ही मुगल साम्राज्य को भारत में स्थापित किया है उसी अद्वितीय योद्धा मानसिंह को एक साधारण वीर राणाप्रताप जो केवल मेवाड़ का ही आधीश्वर है बल्कि मेवाड़ का समस्त प्रांत भी जिसके अधिकार में नहीं है जिनके पास धन या जन कुछ भी नहीं है तुच्छ समझ रहा है। वह गर्व रखता है स्वभिमान रखता है। अब देखना है वह कहां तक अपने व्रत का पालन कर सकेगा। आज उसका गर्व चूर चूर कर दिया जायगा। उस का सारा अभिमान मिट्टी में मिला दिया जायगा। वह किस पर इतना उछल कूद रहा है? उसके पास रक्खा ही क्या है। वह अपने इन थोड़े से इने गिने सैनिकों को लेकर क्या खाक युद्ध कर सकेगा? सचमुच अब उसकी खैर नहीं है।

ऐसे ही विचार शक्तिसिंह के हृदय में उठ रहे थे। शक्तिसिंह अब राणा प्रताप के भाई नहीं रहे थे। अब वह अकबर के दर-बार के एक प्रमुख माननीय दरबारी होगये थे। उन्हें दरबार में एक अच्छा इज्जतदार पद मिल गया था। वह बड़े सुख से रहते थे। और उनकी बड़ी इज्जत होती थी फिर उन्हें राणाप्रताप की क्या चिन्ता होती। उनके हृदय में भी अपमान की ज्वाला भड़क रही थी। वही अपमान जो कि मेवाड़ में उनका हो चुका था। इसका वर्णन पहले ही गत परिच्छेद में कर दिया गया है पाठकगण कदाचित् भूले न होंगे। बस वही अपमान की ज्वाला अब जोर से भड़क उठी। एक सहोदर अपने सगे बड़े भाई का खून का प्यासा हो रहा था। शक्तिसिंह भी सोच रहे थे कि आज

उस अपमान का बदला भली प्रकार लिया जा सकेगा। प्रताप को अपनी वीरता का अभिमान है आज देखना है वह कैसा वीर है। मैं अपने हाथों से उसकी वीरता का अन्त कर दूंगा आज इस युद्ध में या तो वह जीवित ही पकड़ लिया जायगा, और मेरी ही तरह अकबर के दरवार में स्थान पायेगा या सन्धि कर लेगा या लड़ते २ उसका काम तमाम होजायेगा। इस युद्ध में ही उसके भाग्य का निर्णय है। हमारी इस विशाल सेना के सामने वह ठैर भी न सकेगा। वह पराजित होगा और अवश्य होगा। विजय का अधिकारी वह अभागा वीर नहीं हो सकता। मुझेभी जभी शान्ति होगी जब मैं उसका अपमान अपने नेत्रों से देखूंगा उसका अन्त देख कर ही मुझे सच्चा सुख प्राप्त हो सकेगा। वह तड़फायेगा और मैं प्रसन्न होऊंगा। वह रोयेगा और मैं हँसूंगा उस समय उसे मालूम होगा कि अपने वीर भ्राता का अपमान कितना भयंकर सिद्ध होता है। ठोकर खाकर ही वह संभलेगा और वीर शक्तिसिंह का मूल्य समझ सकेगा। उसी समय उसकी आंख खुलेंगी।

इसी प्रकार अन्य लोग भी भांति २ के विचार अपने हृदय में कर रहे थे। विचारकरने में लगता भी क्या था। लाखोंकी सेना साथ में थी। अस्त्र-शस्त्रोंकी भरमार थी। खाने पीनेकी भी कमी नहीं थी। इसके अलावा जिस चीज की कमी हुई वही मंगवाली किसी की रोक टोक नहीं थी। रास्ता उनके लिये खुला हुआ था उन्हें रोकने वाला ही कौन था। सब से अधिक खास बात यह

थी कि इन लोगों के पास कई तोपें भी थीं। पाठकगण तोप की शक्ति तो जानते ही हैं कैसी होती है। एक ही तोप का गोला अनेकों का नाश कर देता है। कुछ क्षणों में ही प्रलय मचा देता है इसके आगे सारी वीरता धरी रह जाती है। सब शस्त्र बेकार हो जाते हैं। ऐसी दशा में मुगलों की सेना विजय की आशा क्यों न करती उसकी आशा स्वाभाविक ही थी।

इसके विपरीत महाराणा प्रताप मुगल सेना से घिरे हुये थे। गनीमत यही थी कि वह पहाड़ी दुर्ग में थे और वही पहाड़ उनकी रक्षा कर रहा था। लेकिन सेना तो उनके पास केवल २२००० बाईस हजार ही थी और कुछ भील लोग भी उनकी सहायतार्थ वहां मौजूद थे। यह सेना मुगल सेना के सामने कुछ नहीं के बराबरथी। मुगलों की सेना इससे कई गुना अधिक थी। इसके अतिरिक्त राणाके पास इस सेना के अतिरिक्त अन्य किसी का सहारा न था। मुगल लोगअपनी सेना समाप्त होने परदूसरी सेना मंगा सकते थे किन्तु यह लोग कहां से मंगाते। इनके पास तो जो कुछ था रसद अर्थात भोजनादि का भी ऐसा ही हाल था। जो कुछ दुर्ग में था बस वही था। उसके समाप्त होने पर वह कहीं से रसद प्राप्त नहीं कर सकते थे। क्योंकि मुगलोंने चारों तरफसे उन्हें घेर रक्खा था। मुगलों को तो रसद की कमी का डर नहीं था। वह जब चाहते मंगा लेते थे। राणा दुर्ग में मुगलों द्वारा घिरे हुयेथे अतः हर बात की कमी उनके लियेरहती थी। मुगल सेना की तरह इन लोगों के पास तोपें भी नहीं थी।

तोपों का मुकाबला यह लोग नहींकर सकते थे। तोप का नामो-निशान भी इनके पास नहीं था। यह हाल था राणा प्रताप की सेना का। इसलिये तो लोग इनकी पराजय की कल्पना कर रहे थे। पाठकगण स्वयं ही मुगल सेना की तुलना प्रताप की सेना से करके मालूम करें कि परिणाम क्या हो सकता है?

लेकिन सबसे बड़ी बात यह थी कि राणा प्रताप साहसी थे। सेना या किसीअन्य वस्तुका अभावहो तो क्या हुआ,साहस का अभाव उनके पास नहीं था। वह जैसे वीर थे वैसे साहसी भी थे। और यही हाल उनके सब सैनिकों का!था वहलोग तो मरना मारना ही जानते थे परिणाम की ओर नहीं देखते थे। वह जानते थे कि मुगलों से विजय पाना दुर्लभ ही क्या असंभव ही है किन्तु फिर भी साहस नहीं खोते थे। उनका हर एक वीर सैनिक स्वतन्त्रता का सच्चा पुजारी था। उनकी सेना सुसंगठित थी। वह सब लोग अपने पैरों पर खड़े थे। सबअपने कर्तव्य को जानते थे स्वतन्त्रता के लिये सभी मतवाले हो रहे थे। वह लोग यही कहते थेकि आने वाली मुसीबतों से घबड़ाना व्यर्थ है। कर्तव्य पर डटे रहना ही मनुष्य का प्रधान कर्म है। एक हिन्दी के कवि ने भी कहा है—

हो सचेत श्रम करो सदा तुम चाहे जो कुछ हो परिणाम।
सदा उद्यमी होकर सीखो धीरज धरना करना काम॥

अस्तु·················

# युद्ध प्रारम्भ

मुग़ल सेना तादाद में अधिक थी और काफी अधिक थी यह हम पहले लिख चुके हैं किन्तु फिर भी वह छल करने से बाज़ न आई। धर्म युद्ध की अपेक्षा वह अधर्म युद्ध द्वारा ही जय प्राप्त करना चाहती थी कपट फरेब और कूट नीति ने अब भी उसके हृदय में स्थान बना रक्खा था।

सब से पहला काम उसने यह किया कि यह कई भागों में विभाजित होगई ताकि महाराणा को यह मालूम हो जाये कि मुग़ल सेना बहुत कम है। मुग़ल सेना ने अद्भुत ही व्यूह रचना की। पहले तो दुर्ग को चारों ओर से घेर लिया गया ताकि न तो कोई दुर्ग में जासके और न कोई अन्दर से बाहर आकर जीवित रह सके। सब नाके बन्द कर दिये गये। सेना की टुकड़ियां इधर उधर छुप गईं जिससे राणा केवल थोड़ी सी सेना ही देख सके। और वह छुपी हुई सेना छलसे राणा को बन्दी करले या घेरकर काबू में करले। पन्द्रह बीस हजार सैनिक ही केवल एक सेना बनाकर प्रकट रूप में उपस्थित थे शेष सभी अलग २ सेनायें बनाकर छुप रहे थे वह लोग छुपे २ ही अपना काम कर रहे थे। वह हर वक्त सचेत रहते और जिस विपक्षी को देख लेते उसीको मार डालते। यही उनका कर्म था। अथवा जब वह देखते कि प्रकट रूप में लड़ने वाली सेना शिथिल होने वाली है या उसमें सैनिकों की कमी हो गई है तो उसमें जाकर मिल जाते। इन लोगों ने राणा के दुर्ग को घेर कर रसद वगैरा भी बन्द कर रक्खी थी। मुगल सेना चाहती थी कि राणा

दुर्ग से बाहर निकल आयें और यही उसका अनुमान भी था कि जब राणा मुग़ल सेना की तादाद कम देखेगा तो वह अवश्य अपनी समस्त सेना के सहित दुर्ग से बाहर निकल कर मैदान में आजायेगा। उस समय मुग़लों की छुपी हुई सेनायें उस पर चारों ओर से टूट पड़ेंगी और वह आसानी से पकड़ने में आजायेगा। यह उनका अनुमान ही नहीं पूर्ण विश्वास था।

परन्तु राणा प्रताप इतना मूर्ख नहीं था कि स्वयं ही अपने पैरों में कुल्हाड़ी मार लेता। उसके जासूस भी इधर उधर छानबीन कर रहे थे। महाराणा को जासूसों के द्वारा यह मालूम हो गया था कि मुग़लों ने उसके साथ चाल खेली है। वह जान गया था कि मुग़लों के पास एक विशाल सेना है और उसके पास तोपें भी हैं। उसे यह भी मालूम होगया था कि उसका सगा छोटा भाई शक्तिसिंह भी उसके मुकाबले पर डटा हुआ था। भाई भाई के खून का प्यासा होरहा था। राणा को अच्छी तरह ज्ञात था कि मुग़लों की सेना में अधिकांश राजपूत ही हैं। उसे अपने राजपूत भाइयों से ही युद्ध करना होगा। खैर......

ठीक श्रावण शुक्ला सप्तमी को प्रातःकाल ही युद्ध शुरू हो गया। मुगलों के मन-सूबे मिट्टी में मिल गये। उनकी चालें बेकार सिद्ध हुईं राणा प्रताप उनकी चालों को समझ गया था। टुकड़ियां करने से उनको कोई लाभ न हुआ। राणा मैदान में नहीं आया वह दुर्ग से ही युद्ध कर रहा था क्योंकि प्रताप का मैदान में आजाना बड़ा खतरनाक था।

८ घाटी का भयंकर युद्ध ।
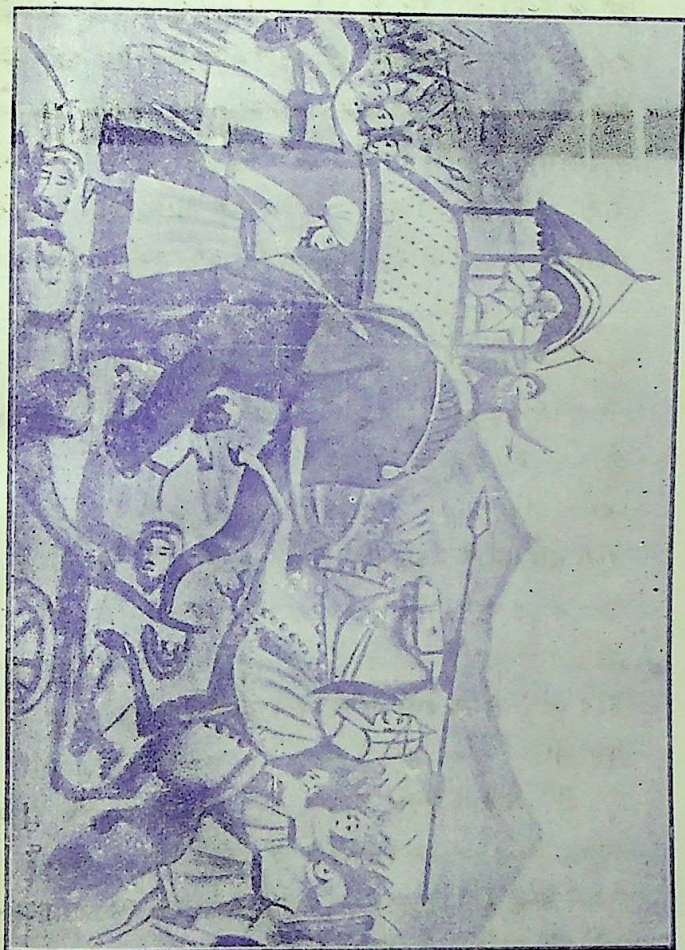
लेकिन यह बात नहीं थी कि राणा मैदान में न आकर कायरों की भाँति छुप छुप कर लड़ रहा हो। यह समझना पाठकों की भूल होगी। राणा घाटियों में ही लड़ना चाहता था। और मुग़ल घाटियों के बाहर। हल्दीघाटी में लड़ाई हो रही थी। यूँ तो वह घाटी काफी चौड़ी थी लेकिन युद्ध के लिहाज से तंग ही कही जायगी, क्योंकि लड़ाई में तो मीलों का मैदान चाहिये।

मुग़ल सेना अब भी चालें खेल रही थी। सेना की टुकड़ियां धोखे से राणा की सेना पर हमला कर बैठती थीं। राणा की सब सेना हल्दीघाटी में उतर आई थी। राजपूत अपने नेता 'मेवाड़ मार्त्तण्ड की जय बोलकर जमीन आसमान एक कर रहे थे। राजपूत सेना के अध्यक्ष इधर राणा प्रताप थे। वही अपने प्यारे घोड़े 'चेतक" पर सवार थे। चेतक प्रताप का सब से प्यारा घोड़ा था और बड़ा होशियार था। उसका रङ्ग नीला था और देखने में बड़ा सुन्दर था।

दूसरी मुग़ल सेना के अध्यक्ष शहाजादा सलीम एक हाथी पर सवार थे और अन्य सेना नायक मानसिंह शक्तिसिंह वगैरा घोड़ों पर।

दोनों सेनायें अपने २ मोरचों पर जा डटीं। महाराणा मेवाड़ का राज-छत्र अपने सिर पर धारण करके मुग़लों की विशाल सेना से लड़ने के लिये चल दिये। रणभेरी बजने लगी। मारू बाजा भी बजना शुरू हो गया। लड़ाई के समस्त बाजे एक साथ बज उठे, युद्ध शुरू हो गया। प्रबल उत्साह के

साथ महाराणा मुगलों पर टूट पड़े। मुगल इस आक्रमण से यकायक घबड़ा गये और उनके मोरचे टूट गये। प्रताप ने मुगल सेना को तितर बितर कर दिया। वह लोग छिन्न भिन्न होकर लड़ने लगे। युद्ध प्रति क्षण भयङ्कर होता जा रहा था। ज्यूं २ समय व्यतीत होता था युद्ध की भयङ्करता भी त्यों २ बढ़ती जा रही थी। एक हाथ में भाला और दूसरे हाथ में तलवार महाराणा सिंह की भांति गरजते हुये विकट संग्राम करने में व्यस्त थे।

हिन्दी के सुयोग्य कवि श्री० श्याम नारायण पाँडे साहित्य रत्न ने महाराणा की तलवार का वर्णन बड़ा सुन्दर किया है। वह लिखते हैं:—

## कविता

चढ़ चेतक पर तलवार उठा रखता था भूतल पानी को।
राणा प्रताप शिर काट काट करता था सफल जवानी को॥
कल कल बहती थी रण-गङ्गा, अरिदल को डूब नहाने को।
तलवार वीर की नाव बनी, चट पट उस पार लगाने को॥
बैरी दल को ललकार गिरी, वह नागिन सी फुफकार गिरी।
था शोर मौत से बचो बचो तलवार गिरी तलवार गिरी॥
पैदल से हय दल गज दल में, छप छप करती वह विकल गई।
क्षण कहां गई कुछ पता न फिर देखो चमचम वह निकल गई॥
क्षण इधर गई क्षण उधर गई, क्षण चढ़ी बाढ़ सी उतर गई।
थी प्रलय चमकती जिधर गई, क्षण शोर हो गया किधर गई॥

क्या अजब विषैली नागिनी थी, जिसके डसने में लहर नहीं।
उतरी तन से मिट गये वीर, फैला शरीर में जहर नहीं॥
थी छुरी कहीं तलवार कहीं, वह बरछी असी खरधार कहीं।
वह आग कहीं अङ्गार कहीं, बिजली थी कहीं कटार कहीं॥
लहराती थी शिर काट काट, बलखती थी भू पाट पाट।
बिखराती अवयव बाट बाट, तनकी थी लोहू चाट चाट॥

और भी—वीर कवि भूषण कविरत्न राज कवि श्री "क्लान्त" जी कहते हैं:—

छात्रता भरित रङ्ग रोम रोम अङ्ग लखि,
दंग दिल भंग सेना शत्रुन की सरकी।
धड़की धार औ व्यौम तड़कि तड़कि उठे,
भड़कि भड़कि भागे शेश कोल थरकी॥
दिग्गज दबकि रहे रविरथ रुकि गयो,
छूटी त्यौं समाधि "क्लांत" शम्भु विषधर की।
फड़की प्रताप बाहु खड़कि खड़कि खग्ग,
कड़कि कड़कि उठी कड़ी बखतर की॥

राणा प्रताप जिस ओर जाते थे उसी ओर भगदड़ मच जाती थी। वह अपने पूर्ण उत्साह के साथ युद्ध कर रहे थे। केवल वही नहीं उनका वफ़ादार घोड़ा चेतक भी बड़ा चतुर वीर था। वह अपने स्वामी के इशारे पर चलता था। राणा को उसे एड़ लगाने या समझाने की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती थी। वह स्वयम् ही बड़ा समझदार था। जिस समय वह देखता था कि शत्रु का शस्त्र राणा को बेधने के लिये आ रहा है उसी

क्षण वह पैंतरा बदल देता था और इस प्रकार शत्रु का शस्त्र बेकार चला जाता था। कई घातक वीरों से उसने इसी तरह राणा को बचाया था।

जिस समय प्राचीन काल में जब कि रथ पर बैठकर योद्धा युद्ध करते थे सारथी की चतुराई एवं निपुणता बहुत काम देती थी। अर्जुन को सुयोग्य एवं निपुण सारथी श्रीकृष्ण मिले थे इसीलिये उसे बड़ी सहायता मिल जाती थी। इसी भांति राणा को भी चेतक घोड़े से बड़ी सहायता मिल रही थी। चेतक सारथी एवं संरक्षक का काम कर रहा था। वह भी राणा के साथ ही साथ युद्ध करता था। जैसा अवसर देखता वैसा ही कर बैठता था। वह बड़ा बुद्धिमान था इसलिये राणा उसे बहुत प्यार करते थे। कभी २ वह अपनी टाप से प्रहार कर बैठताथा। कभी कभी अपने मुख से किसी सैनिक का सर पकड़ लेता था। कभी पिछली टांगें फटकार कर किसी को घायल कर देता था। सारांशतय: जैसा भी बनता था वह अपना कर्तव्य पालन करता ही था। इसके अतिरिक्त वह हृष्ट पुष्ट भी खूब था। कोसों दूर चले जाने पर भी नहीं थकता था। मुगल लोग भी घोड़े की वीरता और होशियारी देखकर दांतों तले उंगली दबा रहे थे। वास्तव में ऐसा घोड़ा उनकी नजरों से कभी नही गुजरा था। क्योंकि सभी घोड़े तो ऐसेहोते नहीं कोई कोई ऐसा निकलता है। यूं तो उस जमाने में सभी घोड़ों को रण की शिक्षा दी जाती और खूब बलवान और बुद्धिमान बनाने की

कोशिश की जाती थी। ज्यादातर घोड़े होशियार और बहादुर ही होते थे किन्तु फिर भी कोई कोई तो सब से बाजी मार ले जाता था। जैसे मनुष्यों का हाल था वैसे ही घोड़ों का। अस्तु

राणा के साथी राजपूत भी जी तोड़कर लड़रहे थे। अपने राणा को हथेली पर रखकर जीवन की आशा छोड़ कर वह मुगलों का सामना कर रहे थे। उधर मुगलों के सैनिकों का भी यही हाल था। वह भी लड़ने में कोई कमी नहीं कर रहे थे। मुगल सेना के सेनानायक भी इधर उधर सेना का संहार करते फिर रहे थे। खूब घमासान युद्ध हो रहा था। मुगलों को अपनी विजय का पूरा विश्वास था क्योंकि उनकी सेना बहुत ज्यादा थी किन्तु उनके यह विचार बदलने लगे। राणा की सेना ने उनके छक्के छुड़ा दिये। मुगल सैनिक अपने २ दम की खैर मनानेलगे। उन्हें यह स्वप्न में भी विश्वास न था कि राणा की सेनाकमहोने पर भी ऐसी बहादुर होगी और अपूर्व उत्साह से युद्ध करेगी। राणा की अतुल वीरता देखकर वह लोग दङ्ग रह गये। बड़े २ महान वीर, सुभट, शूरमा उनका रण-कौशल देखकर हैरान हो रहे थे। उनको यह मालूम अवश्य था कि राणा बड़े वीर व्यक्ति हैं किन्तु यह इतने वीर हैं यह पता न था। मानसिंह और शक्ति-सिंह ही क्या समस्त सेना नायक और स्वयम सलीम शत्रु होकर भी राणा की मुक्त कंठ से प्रशंसा कर रहे थे।

उस युद्ध में राजपूतों का जौहर देखने योग्य ही था। सारी मुगल सेना में खलबली मच गई थी। वह लोग वीर क्षत्रियों के

रणकौशल देखकर बड़े हैरान थे। मुगल सैनिक भी यद्यपि बड़ी वीरता से लड़ रहे थे किन्तु उनकी एक भी न चलती थी। प्रत्यक्ष मालूम हो रहा था कि राणा की ही विजय होगी।

अचानक मुगलों को अपनी तोप का ख्याल आगया उन्होंने गोलन्दाजों को आज्ञा दी कि गोलों की वर्षा आरम्भ करो। बस फिर क्या था? आज्ञा की देर थी। गोले बरसने लगे। तोप के गोलों से लड़ना उन मनुष्यों का काम नहीं था जब तब कि उनके पास भी तोपें न हों। महाराणा प्रताप की सेना घबड़ा गई। तोप के गोलों से एक २ दो २ करके मरने लगे और लाशों पर लाशें पटने लगीं। थोड़ी ही देर में कुहराम मच गया। राणा की सेना के पैर उखड़ गये उसको विजय की आशा न रही। वह कैसे सामना करता? उसके पास तो एक तोप भी न थी। तलवार बरछी भाले तोपके सामने क्या काम आते। बस भगदड़ मचगई। यह देख कर महाराणा को बड़ी चिन्ता हुई। वह स्वयम् हैरान थे कि क्या किया जाये? वह अपने सैनिकों को उत्साहित करते थे किन्तु सब बेकार था। तोपों के सामने कोई भी न ठहरसका।

अन्त में कोई उपाय न देखकर राणा ने अपने सैनिकों से ओजस्वी शब्दों से कहा—"मेरे बहादुर नौजवानों! तुम्हारी बल की परीक्षा का यही समय है। मृत्यु की चिन्ता न करो। एक दिन मृत्यु तो सब को आती है फिर मरने से क्यों डरते हो वीरों की सन्तान होकर अपने वीरत्व को कलंकित न करो। शत्रुओं को दिखला दो कि वीरता किसको कहते हैं? वीर

कैसे होते हैं। जबतक शरीर में प्राण हैं साहस न छोड़ो। हंसते२ लड़ते २ रण में ही अपनी जननी जन्मभूमि पर बलिदान हो जाओ। अपने कर्तव्य को न भूलो। चलो आगे बढ़ो कायर की मौत मरने से रण में वीरता से मरना लाख दर्जे अच्छा है:—

विचार लो कि मृत्यु हो न मृत्यु से डरो कभी।
मरो परन्तु यों मरो कि याद जो करें सभी॥
हुई न यों सुमृत्यु तो वृथा मरे वृथा जिये।
मरा नहीं वही कि जो जिया न आपके लिये॥
यही पशू प्रवृत है कि आप आप ही चरे।
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिये मरे॥

❀ ❀ ❀ ❀

अतीव भाग्य हीन है अधीर भाव जो मरे।
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिये मरे॥

जो सेना निराश हो चुकी थी उसको फिर जोश आगया वह फिर प्रबल उत्साह से लड़ने लगी और "हर हर महादेव" की आवाजों से रणस्थल गूंजने लगा। वीर राजपूतों ने मुग़लों की तोपें बेकार करदीं। मुग़ल सेना एक बार फिर घबड़ा उठी। महाराणा प्रताप सब से आगे लड़ रहे थे। मुग़लों को आश्चर्य हो रहा कि यह थोड़े से राजपूत जिनके पास न तोपें हैं न बन्दूक लेकिन फिर भी कैसी वीरता से लड़ रहे हैं। इन मुट्ठी भर मनुष्यों ने समस्त मुग़लों की नाक में दम कर रक्खा है। केवल अपनी वीरता और साहस के बल पर ही यह लोग युद्ध कर रहे

हैं। सब की जुबान पर राजाओं की प्रशंसा के शब्द ही थे। महाराणा प्रताप भी उस समय बड़ी वीरता से लड़ रहे थे। वह मानसिंह की खोज में थे। वह बार बार मुग़ल सेना में प्रविष्ट होकर मानसिंह ही को तलाश करते फिर रहे थे। किन्तु मानसिंह को उनके सामने आनेका साहस न होता था। वह प्रताप की सेना से ही लड़ रहे थे।

मानसिंह को तलाश करते २ महाराणा प्रताप सलीम के पास पहुँच गये। सलीम हाथी पर सवार था। प्रताप ने सोचा कि मानसिंह न सही सलीम ही सही। और यह सोचकर वह सलीम की ओर बढ़ गये। मुग़ल सेना यह देख बड़ी घबड़ाई वह अपने अध्यक्ष की रक्षा करने के लिये आतुर होउठी। इधर प्रताप का घोड़ा चेतक बड़े वेग से आगे बढ़ा और उसने अपनी दोनों टांगे उठाकर सलीम के हाथी के माथे पर रखदी। प्रताप ने भी भाला उठाया और वार चला दिया किन्तु सलीम की मृत्यु न थी। हाथी मचल गया। भाले का वार महावत के लगा और महावत मर गया। बिना महावत के हाथी सलीम को लेकर वहां से भाग गया। हाथी का यह स्वभाव होता ही है। इसलिये सलीम बच गया। मुग़लसेना खुश होगई। किन्तु उसके क्रोध का ठिकाना न रहा। प्रताप के लिये वह जानी दुश्मन बन गई। अपने स्वामी पर किया गया वार वह सहन न कर सकी। उसने प्रणकर लिया कि अब प्रताप को जीवित न छोड़ेंगे। किसी भी प्रकार हो प्रताप रणक्षेत्र से जीवित न जाने पाये। यही सब मुग़ल सैनिकों की

प्रतिज्ञा थी। सेना के सेनानायक भी भड़क उठे थे। सब मिल कर राणा प्रताप के प्राणों के ग्राहक बन गये।

## झाला सरदार मन्नासिंह

सारी मुगल सेना एक साथ ही अकेले प्रताप पर टूटपड़ी। राजपूत सेना उस समय वहां न थी वह दूर लड़ रही थी। मुगलों ने भी सोचा कि यह अवसर अच्छा हाथ लगा है अकेला प्रताप कर क्या सकेगा ? प्रताप की सेना को तो मुगलों की एक सेना ने एक ओर घेर रक्खा था वह उससे लड़ने में लगी हुई थी। इधर दूसरी ओर राणा प्रताप को घेर लिया। परन्तु राणा अकेले होते हुये भी नहीं घबड़ाये। वह दुगने उत्साह से लड़ने लगे।

प्रताप के मुख पर चिन्ता का एक भी चिन्ह नहीं था। प्रताप ने भी ऐसा युद्ध पहले कभी न किया था। उधर मुगल लोग भी उत्साह से उन पर वार कर रहे थे इधर वह भी संहार करते जा रहे थे। अकेले वीर ने अनेकों को सदा के लिये शान्त कर दिया अनेकों को पृथ्वीमाता की गोद में सदा के लिये सुला दिया। सैकड़ों को घायल बनाकर मूर्छित कर दिया। और एक ओर तो मुगलों के हजारों वीर योद्धा और दूसरी ओर अकेला रणवीर प्रताप। मुगलों का उत्साह तो प्रति पल बढ़ता ही जारहा था क्योंकि उनका दृढ़ विश्वास था कि प्रताप अब नहीं बच सकता आखिर हजारों वीरों से अकेला कहां तक लड़ेगा वास्तव में प्रताप की स्थिति बड़ी विकट थी। बिल्कुल वही जैसी कि सप्त वीरों के मध्य में घिर जाने पर वीर बालक अभिमन्यु की होगई

थी। महाभारत का यह हाल पाठकों को खूब याद होगा। राणा के अगणित घाव लग गये थे। शरीर लहू लुहान हो रहा था। यही हाल घोड़े का भी था। दोनों खूब घायल हो चुके थे। महा॰ राणा के शस्त्र भी टूटते जाते थे। शस्त्रों की सहायता देने वाला भी उस समय कोई न था। वहां तो दम लेने की भी फुरसत न थी मुगल सेना भी प्रताप को मार कर ही विश्राम करना चाहती थी उसने प्रताप को बुरी तरह घेर रक्खा था। वह उन्हें खूब थका रही थी और वार पर वार करती जा रही थी।

कुछ राजपूतों ने प्रताप की यह दशा देखली। वह लोग बड़े चिन्तित हुये। उनका कहना था कि राणा प्रताप यदि मरेगा भी तो मेवाड़ की बड़ी दुर्दशा होगी। उनके बिना मेवाड़ का उद्धार कौन कर सकता है यदि सारे राजपूत मारे जायें तो कोई चिन्ता नहीं लेकिन प्रताप की रक्षा होनी चाहिये।

उसी समय मन्नासिंह नामक झाला सरदार झपट कर मुगल सेना में घुस गया और जैसे तैसे करके राणा प्रताप के पास पहुँच ही गया। उसने वहां अधिक सोच विचार में समय नष्ट नहीं किया और राणा प्रताप से राजछत्र और चंवर छीन कर स्वयम धारण कर लिया। यही दो चीजें ऐसी थीं जिनसे मुगल लोग राणा प्रताप को पहचान लेते थे। जब मन्नासिंह झाला सरदार ने राज छत्र अपने सर पर धारण कर लिया तो मुगलों ने उसी को राणा प्रताप समझा और वह प्रताप को छोड़कर मन्नासिंह पर टूट पड़े। इस प्रकार राणा प्रताप को कुछ अवकाश मिलगया और उनके प्राण बच गये।

मन्नासिंह झाला सरदार भी बड़ा वीर था। कई लड़ाइयों में वह अपना रण कौशल प्रकट कर चुका था। उसने भी मुगलों की नाक में दम कर दिया और सेना में तहलका मचा दिया। सरदार बड़े जोश के साथ लगातार लड़रहा था। ओफ! कैसा वीर था वह! देखकर सब हैरान थे। वह किसी प्रकार वश में नहीं आता था। लेकिन आखिर मनुष्य ही तो था। हजारों आदमियों से अकेला कब तक लड़ता? जिस समय वह बड़ी वीरता थे लड़ रहा था। उसी क्षण मुगल सेना के एक सैनिक ने पीछे से आकर अपनी तलवार का वार किया। धोखे से सरदार का अन्त हुआ। मरते मरते भी वह अपने मारने वाले को तथा अन्य अनेकों वीरों को मार गया। धन्य! धन्य!! महावीर तुम मर गये परंतु तुम्हारी कीर्ति अमर है। तुम जैसे पुत्रों को पाकर भारत माता अब भी अभिमान से अपना शीश ऊँचा रखती है। तुम जैसे वीर नर पुंगव ही भारत सच्चे के सपूत कहलाने के अधिकारी हो सकते हैं।

---

## शरणागत शक्तिसिंह

झाला सरदार की मृत्यु से प्रताप को बहुत दुःख हुआ। चारों ओर उसके आत्म-त्याग की प्रशंसा सुनकर उन्हें हर्ष भी होरहा था। न केवल राजपूत ही अपितु शत्रु लोग भी झालासरदार की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा कर रहे थे।

प्रताप ने सरदार के वंशधरों को जागीरें बख्श दी। खास

तौर पर सद्रि देश में कुछ जागीरें उन्हें दी गईं और उन्हें राजकीय झण्डा रखने की भी आज्ञा हुई। राजचिन्हों से विभूषित होकर महाराणा के दाहिनी ओर बठने और महलों तक नक्कारा बजाते हुये आने सम्मान भी उन्हें प्रदान किया गया। आज तक भी मेवाड़ में झाला सरदार के वंशजों को ऐसा ही सन्मान प्राप्त है।

इस में युद्ध में दोनों ओर का काफी नुकसान हुआ। बल्कि अधिक हानि मुगलों की हुई। राणा प्रमाप के १४ हजार वीर मारे गये और मुगलों के ५० हजार। अतः दोनों ओर की सेनायें भयङ्कर संग्राम करते २ थकगई थी। इसीलिये कुछ समय के लिये युद्ध बन्दकर दिया गया। लेकिन मुगल सेना तादाद में अब भी काफी थी वह हल्दी घाटी से गई नहीं, वह वहीं रहकर विश्राम करने लगी।

राणा प्रताप भी बहुत घायल हो रहे थे और यही हाल उनके घोड़े चेतक का था। अतः विश्रामार्थ राणा अपने घोड़ेपर एक ओर चल दिये। सन्ध्या का समय था रात होने वाली थी और राणा प्रताप उस समय अकेले ही थे। मुगलों ने प्रताप को अकेले जाते हुये देखा। धोखा दगा कपट छल का तो उन लोगों के हृदय में निवास ही था। दो आदमियों की आज्ञा दी गई कि वह प्रताप का पीछा करें और उसको मार डालें। प्रकट रूप में मार डालने की हिम्मत तो किसकी थी इसलिये छुप कर मार डालने के लिये ही कहा गया। दोनों मुगल सवार यह आज्ञा

पाकर प्रताप के पीछे होलिये। प्रताप को कुछ भी मालूम न था कि ऐसा षडयन्त्र रचा गया है। वरना वह इन दो सवारोंसे क्या डरता ? जो वीर हजारों वीरों के मध्य में लड़ सकता है और तलवारों की परवाह नहीं करता वह इन दो म्लेच्छों की क्या चिन्ता करेगा ?

जिस समय वह दोनों यवन सैनिक प्रताप के पीछे जा रहे थे। शक्तिसिंह भी उस समय वहीं था। उसको यह धोखे का व्यवहार अच्छा न लगा। आखिर वह क्षत्रीय ही तो था। उसका खून उबलने लगा। उसके हृदय में भातृ-प्रेम उमड़ पड़ा। वह भी उन दोनों यवनों के पीछे चल दिया। बहुत दूर तक वह लोग चलते रहे। आगे जाकर एक नाला रास्ते में आया। बस सब लोग वहीं ठिठककर रह गये किन्तु प्रताप का घोड़ा चेतक अपने स्वामी को लेकर एक ही छलांग में उस नाले को पार कर गया। यवन सैनिक भी नाले को पार करने की कोशिश कर रहे थे, उसी समय शक्तिसिंह भी वहां पहुँच गया। उसने वहीं उन दोनों यवनों को मार डाला और सन्तोष की सांस ली। उन दोनों को मार कर उसने प्रताप को अपनी मातृ-भाषा में आवाज दी। प्रताप ने आश्चर्य से मुड़कर देखा तो शक्तिसिंह को अपने पास आता हुआ पाया। वर्षों का दबा हुआ क्रोध आज फिर भड़क उठा। वह तलवार निकाल कर वहीं खड़े हो गये और जोर से पुकारकर कहने लगे—"आ! क्षत्रिय कुल-कलंक! मैं आज तेरे खून से अपने हाथ रंगूंगा या तो आज

इस जगह मेरा अन्त होगा या तेरा ही। अभी तक तेरी प्यास अपने भाइयों के खून से नहीं बुझी। अपने हाथों से ही सैकड़ों राजपूत भाइयों को मार कर तुझे अभी तक सन्तोष नहीं हुआ। आ ! मैं तैयार हूं ! अब अपने सगे बड़े भाई के खून से भी अपनी प्यास बुझा। यह कहते हुये प्रताप शक्तिसिंह के आने की प्रतीक्षा में खड़ा हो गया।

परन्तु जैसा प्रताप ने सोचा वैसा न हुआ। बिलकुल उसके विपरीत ही हुआ। शक्तिसिंह आते ही प्रताप के चरणों में गिर पड़ा। प्रताप आश्चर्य से उसकी ओर देखने लगे। वह कहने लगे "हैं ? यह क्या ? अपने शत्रु के पैरों पर क्यों गिरते हो ? तुम तो मुझे मारने के लिये आये थे। शक्तिसिंह लज्जित हो कर कहने लगा—"नहीं भाई साहब ! मैं आप को मारने नहीं आया, मारने के लिये तो वह दो यवन सैनिक आये थे। प्रतापसिंह ने देखा कि वास्तव में कुछ दूर पर दो लाशें पड़ीं थीं। प्रतापसिंह के पूछने पर शक्तिसिंह ने सारा हाल कह सुनाया और फिर नम्रभाव से कहने लगा—"मुझे क्षमा कीजिये। मैंने बड़े अपराध किये हैं। परन्तु विश्वास रखिये मैंने अकबर की ओर मिलकर भी ऐसा कोई कार्य नहीं किया है जो क्षत्रिय जाति के लिये कलंक रूप हो। मैंने इस युद्ध में भी राजपूत बीरों पर हाथ नहीं उठाया और मैं इसलिये दूर रहा ताकि मुगलों को भी मुझ पर सन्देह न हो सके। मेरे हृदय में उस समय भी स्वभिमान था। मैंने कभी अकबर की गुलामी न की। हां

मित्र भाव से अवश्य रहा और मैंने उनकी सहायता भी की किन्तु अपने स्वाभिमान पर आंच न आने दी युद्ध में मेरी आंखें खुल गईं जब मैंने आपके रण कौशल को देखा। आपके निःस्वार्थ त्याग को अपने नेत्रों से देखा। मुगलों का युद्ध स्वार्थ का है और आपका युद्ध धर्म युद्ध है और स्वतन्त्रता के लिये है। विजय होने पर आपकी जीत है और हारने पर भी जीत आपकी है। मन्ना-सिंह झाला सरदार के आत्म त्याग को देखकर मुझे बड़ी शिक्षा मिली। मेरे हृदय में उसके लिये गर्व और श्रद्धा के भाव उत्पन्न हो गये। भाई साहब ! मेरे पिछले पापों को भूल जाइये और मुझे क्षमा कर दीजिये ''यह कह कर शक्तिसिंह पुनः प्रताप के चरणों पर गिर पड़ा। लज्जा और क्षोभ से उसका सिर ऊंचा नहीं उठता था। नेत्रों से आंसू निकल रहे थे। प्रताप भी अब अधिक कठोर न बन सके। उनके नेत्रों से भी जल बिन्दु निकल कर रज किरणों से खिलने लगे। दोनों हाथों से शक्तिसिंह को उठाकर उन्होंने हृदय से लगा लिया। दोनों भाई रो रहे थे खूब जी भर कर रो रहे थे। प्रकृति शान्त थी नीरवता का सम्राज्य-- चारों ओर फैला हुआ था और दो भाई गले मिल कर रो रहे थे उस सुनसान पहाड़ी जंगली स्थान में। कैसा अनुपम दृष्य था। प्रताप ने कहा--"भाई शक्तिसिंह ! यदि सुबह का भूला शाम को घर लौट आये तो वह भूला नहीं कहलाता। मैं हृदय से तुम्हें 'क्षमा करता हूं। अब जैसी तुम्हारी इच्छा हो वही कार्य तुम कर सकते हो। मुझे कोई ऐतराज नहीं है।" दोनों भाई बहुत

देर तक बात करते रहे" दोनों ने अपनी अपनी आप बीती कहानी संक्षिप्त रूप में सुनाई। दोनों भाई एक जगह वहीं विश्राम करने के लिये बैठ गये थे। पास ही एक वृक्ष से चेतक घोड़ा भी बंधा हुआ था।

चेतक बहुत थक गया था और घायल भी काफी हो चुकाथा अतः कुछ क्षण बाद ही उसका सांस उखड़नेलगा जब तक राणा उसके पास पहुँचे और उसको पुचकारने लगेतब तक वह अपने स्वामी के गोद में अपने प्यारे स्वामी की ओर प्रेम दृष्टि से देख कर संसार से सदा के लिये विदा हो चुका था। प्रताप का सच्चा सेवक और साथी प्रताप से सदा के लिये प्रथक होगया। प्रताप आंखें फाड़ कर उसकी ओर देखने लगे और बच्चों की तरह रो पड़े। चेतक के वियोग में वह पागलों की तरह कभी उसको चूमते थे कभी प्यार करते थे कभी सीने से लगाते थे। अपने सच्चे मित्र का दुख किसको नहीं होता? चेतक ने हमेशा राणा का साथ दिया। उसने प्रताप के लिये अपने प्राणों की चिन्ता भी न की। सत्यतः मुसीबत का साथी ही सच्चा दोस्त कहलाता है।

चेतक की स्मृति में प्रताप ने वहीं उसके मरने के स्थान पर एक चबूतरा बनवा दिया जो अभी तक मौजूद है। आजकल यह स्थान जारीली के पास है और चैतक चबूतरा कहलाता है। शक्तिसिंह भी प्रताप के दुख से बहुत दुखी हुये उन्होंने अपना घोड़ा प्रतापसिंह को देदिया उसका नाम "अंकारो" था। शक्ति-सिंह ने जिन दो यवन सैनिकों को मारा था उनमें से ही एक का

घोड़ा शक्तिसिंह ने लेलिया और वह मुग़ल सेना की ओर वापस चला गया।

जब शक्तिसिंह मुगलों की ओर गया तो सलीम ने उससे पूछा कि "तुम कहां चले गये थे। हम लोगों को बहुत चिन्ता हो गई थी। "शक्तिसिंह ने सारा हाल कह सुनाया। जिसको सुनकर सलीम व मुगल सैनिक बड़े क्रोधित हुये। सलीम ने चाहा कि शक्तिसिंह को वहीं मार डाला जाये किन्तु ऐसा करना उन्होंने उचित न समझा। क्योंकि वह लोग शक्तिसिंह की शक्ति को जानते थे और शक्तिसिंह भी मूर्ख न था। वह भी सावधान होकर आया था। सलीम ने केवल उसे मुगल सेना से निकल जाने की आज्ञा दी।

शक्तिसिंह तो चाहता ही यह था। वह वहां से चल दिया और प्रतापसिंह के पास जाने लगा। रास्ते में मैसरोर गढ़ पर उसने आक्रमण किया और उस पर विजय प्राप्त की। जब वह राणा प्रताप के पास पहुँचा तो उसने कहा—"भाई साहब! मैं अपने अपराध के प्रायश्चित स्वरूप मैसरोर गढ़ को विजय करके आया हूँ यह मेरी तुच्छ भेंट स्वीकार कीजिये।

महाराणा शक्तिसिंह के इस कार्य पर बहुत खुश हुये और कहने लगे-"शावास शक्तिसिंह! तुमने बहुत अच्छा काम किया परन्तु मैं इसको लेकर क्या करूँगा। तुमने मुझे भेंट दी है मैं उसे सस्नेह स्वीकार करता हूं और साथ हीं तुम्हारी वीरता से खुश होकर तुम्हारी भेंट तुम्हीं को वापिस करता हूँ। तुम्हीं

मैसरोर गढ़ पर राज्य करो। इसी में मुझे खुशी है। मैं यह युद्ध शासक बनने के लिये नहीं कर रहा हूं। मैं तो मेवाड़ को स्वतंत्र देखना चाहता हूँ चाहे मैं भिखारी बन कर ही रहूं। "राणा के इस आदर्श को देखकर शक्तिसिंह चकित रहगये। प्रताप ने अपनी माता को भी शक्तिसिंह के साथ ही मैसरोर गढ़ भेज दिया। शक्तिसिह मैसरोर गढ़ के शासक हो गये। अब वह बिल्कुल स्वतंत्र थे। उनकी वीरता की धाक भी धीरे२ दूर २ तक फैलने लगी और वह भी देश के प्रमुख वीरों में नाम पाने लगे। राणा प्रताप शक्तिसिंह के पास नहीं थे वह उधर युद्ध में ही लगे हुये थे।

## वर्षा

यह लड़ाई हल्दीघाटी की पहिली लड़ाई थी जो कि भारतीय इतिहास में बहुत प्रसिद्ध है। पहली लड़ाई के बाद ही जैसा कि पहले लिख चुके हैं। मुगल सेना हल्दीघाटी में ही पड़ी हुई थी वह अभी तक वहाँ से नहीं गई थी। दूसरी ओर प्रताप की सेना भी वहीं डटी हुई थी। उसी समय वर्षा अधिक बढ़ गई। नदी नाले जल से भरने लगे। लाशों की दुर्गन्ध से भी वायु दूषित हो रही थी। चारों ओर जलवायु अस्वच्छ और दुर्गन्ध युक्त ही मिलती थी। इसी कारण ही बीमारी फैल गई लौगों की नाक में दम आगया। अनेकों मनुष्य बीमारी से अकाल में काल के ग्रास हो गये।

इधर प्रताप को भी कुछ अवकाश मिला। वह फिर सेना

को संगठित करने लगे। नई सेना तो कहां से आती ? वह बचे हुये सैनिक थे। उन्हीं को महाराणा प्रताप युद्ध के लिये तैयार करने लगे। वर्षा ऋतु इन लोगों के लिये अधिक हानिकारक सिद्ध न हो सकी क्योंकि यह लोग वहीं के निवासी थे। राणा प्रताप ने एक ओजस्वी भाषणद्वारा सब सैनिकों को पुनः उत्साहित किया। सब राजपूत फिर मरने मारने को तैयार होगये।

वर्षा ऋतु भी अब समाप्त हो चुकी थी। युद्ध फिर आरम्भ होगया था। जिस उत्साह के साथ पहला युद्ध हुआ था उसी उत्साह के साथ दूसरा भी युद्ध छिड़ गया। वही भयङ्करता, वही कठोरता और वैसे ही मारकाट। राजपूतों की संख्या इस समय भी मुगलों से बहुत कम थी। मुगलों की सेना लगभग ३५ हजार थी और राजपूतों के पास उनके मुकाबले में चौथाई सेना भी नहीं थी।

## कुम्भलमेर पर मुगलों का अधिकार

प्रति क्षण राजपूत सेना कम होती ही जा रही थी। प्रताप को यह स्थिति बड़ी भयङ्कर मालूम हुई। उसने सोचा कि इन लोगों को समाप्त होने पर एक भी व्यक्ति नाम को न रहेगा मुगल सेना उन से कई गुना अधिक थी। यद्यपि उसकी हानि राजपूतों से भी अधिक हो रही थी तथापि वह लोग काफी थे और यदि वह कम भी हो जाते तो उन्हें क्या चिन्ता थी। उनकी सहायतार्थ दूसरी सेना भी आ सकती थी ? परन्तु राजपूतों को

सहायता देने वाला कौन था ? कोई नहीं ? केवल वही अपने भाग्य पर विश्वास करके लड़ रहे थे।

प्रताप ने कुछ सोच विचार कर सब लोगों को कुम्भलमेर की ओर प्रस्थान करने की आज्ञा दी। सब ने वही आश्रय लिया लेकिन मुगलों ने उसका पीछा न छोड़ा। मुगलों ने उस किले को चारों ओर से घेर लिया। वह सेना उस समय शहबाजखां की अध्यक्षता में थी। राजपूत गढ़में घिर गये थे बाहर रसद भी नहीं आ सकती थी। मुगलों ने सब नाके बन्द कर दिये थे। इस प्रकार राजपूत लोग अन्दर ही अन्दर घबड़ा उठे। पेट की ज्वाला कैसे शांत हो। पानी के लिये भी एक ही कुंआ था। उसका पता भी एक हिन्दू कुल कलङ्क ने मुगलों को बता दिया। मुगलों ने उस में विषैले पदार्थ डाल दिये जिससे राजपूत लोग मरने लगे। मालूम होने पर राजपूतों ने उसका पानी पीना बन्द कर दिया। लेकिन प्रश्न यह है कि अब वह लोग क्या खाये ? क्या पियें ? कहां रहें ? क्या करें ? क्या न करें ? बड़ी हैरानी थी। बड़ी विकट समस्या थी। एक हिन्दु कुल कलंक के कारण देश भक्त राजपूत भूख प्यास से व्याकुल होकर मरने लगे। वह हिन्दू कुल कलङ्क कौन था ? वह एक राजपूत ही था और उस का नाम देवराज था। आह ! स्वार्थ से वश होकर उस कलङ्क ने कैसी दुष्टता की ? परन्तु क्या हुआ ? प्रताप मुगलों के सामने दया का भिक्षुक नहीं बना। वह निर्भीक ही रहा।

प्रताप ने अपने वीर सरदारों को कुम्भलमेर छोड़ने की आज्ञा दी और कुम्भलमेर का दुर्ग शोणित गुरु नामक एक सरदार को रक्षार्थ सौंप दिया। शोणित गुरु मेवाड़ का राष्ट्रीय महाकवि था साथ ही वह बहादुर भी बहुत था। वह अपनी ओजस्विनी प्रभावशाली कविताओं से मुर्दों में जान डाल देता था। उसने प्राणों की बाजी लगा कर उस दुर्ग की रक्षा की परंतु विधाता का विधान तो विचित्र ही था। वह हार गया, नहीं, नहीं परलोक सिधार गया। वीरता से लड़ते लड़ते मर गया और अपनी अमर स्मृति संसार में सदा के लिये छोड़ गया।

कुम्भलमेर पर मुगलों का अधिकार हो गया। वह लोग बहुत खुश थे और समझ रहे थे कि अब शीघ्र ही राणा प्रताप मुगलों की अधीनता स्वीकार कर लेगा। क्योंकि प्रताप को अब कहीं भी रहने का ठिकाना नहीं है। परन्तु मुगलों को यह आशा निराशा के रूप में परिवर्त्तित हो गई। एक सच्चा वीर स्वतंत्रता का सच्चा पुजारी क्या कभी अपने शत्रु के सामने नत मस्तक होकर दया की भीख मांग सकता है! नहीं कभी नहीं! वह लोग मातृ-भूमि के उद्धार की इच्छा रखते थे, अपने सुख ऐश्वर्य की नहीं। जब तक प्रताप की सेना का एक भी वीर राजपूत जिन्दा रहेगा तब तक उसका स्वाभिमान नष्ट नहीं हो सकता। सारे राजपूत बलिदान की वेदी पर भेंट चढ़ जायंगे। प्रताप स्वयं अपने शरीर के टुकड़े २ हो जाने देगा। परन्तु "दासता" को वह लोग कभी स्वीकार न करेंगे। वह आत्माभि-

मानी सच्चे वीर और स्वाधीनता के सच्चे पुजारी हैं। उन्हे भय किस बात का है। वह तो निडर हैं दुःख-सुख की वह लोग कभी चिन्ता नहीं करते।

## मुग़लों की विजय

महाराणा प्रताप कुम्भलमेर के किले को छोड़ कर चौंड नामक किले में रहने लगे। इस किले के पास अधिकांश भीलों का ही निवास है। यह मेवाड़ के दक्षिण पश्चिम में एक पहाड़ी पर बसा हुआ है। यहां भीलों ने प्रताप का बहुत साथ दिया किन्तु मुगलों को कहां चैन था। वह लोग तो हाथ धोकर प्रताप के पीछे पड़े हुये थे। मुगलों ने भी यह प्रण कर लिया था कि प्रताप को चैन से न बैठने देंगे और उसे अकबर की आधीनता स्वीकार करने के लिये बाध्य करेंगे। उधर राणा की यह प्रतिज्ञा थी कि वह आजन्म मुगलों के सामने मस्तक नहीं झुकायेंगे।

मुगलों की विविध सेनायें जहाँ राणा जाते थे वहीं पहुंच जाती थी। हर बार युद्धहोता था। राणाकी पराजयभी होती थी किन्तु वह अपने प्रण से कभी विचलित नहीं हुआ। यह बात अवश्य थी कि महाराणा को तङ्ग बहुत किया गया। ज्यू ही वह अपनी शक्ति दृढ़ करने का विचार करते थे त्यूंही मुगल सेना उनके विचारों को नष्ट कर देती थी। उनकी कामना पूरी न हो पाती थी। जबतक प्रताप एक स्थानपर अधिकार करता था तब तक दूसरा उसके हाथ से निकल जाता था। मुगलों की एक ही

सेना न थी कई सेनायें थीं। वह चारों ओर से मेवाड़ को घेरे हुये पड़ी थीं।

महाराज मानसिंह भी शान्त न थे। वह प्रताप की इस बिकट परिस्थिति पर बहुत खुश हो रहे थे। उन्हें आशा ही नहीं दृढ़ विश्वास था कि अब शीघ्र ही प्रताप काबू में आ जायगा। वह कब तक इस तरह भटकता हुआ अपने प्राणों को छुपाता रहेगा? अब उसके पास रक्खा ही क्या है। धन नहीं बल नहीं न खाने को न पीने को सब कुछ नष्ट होगया।

मुगल सेना ने मेवाड़ में तूफान मचा रक्खा था। जिस तरफ वह पहुंच जाती थी उसी ओर आतंक छा जाता था। प्रजा त्राहि २ कर रही थी। मुगल मनमाने अत्याचारों से अपने हृदयकी प्यास बुझा रहे थे। किसी जगह आग लगा देतेथे। कहीं मार काट मचा देते थे। किसी को लूटते थे किसी को मारते थे। गरज कि हर तरह मेवाड़ का विनाश करना ही उनका ध्येय बना हुआ था।

महाराज मानसिंह ने 'धरमेति और 'गोगुडां' नामक किले जीत लिये थे और मेवाड़ की राजधानी उदयपुर पर मोहब्बतखाँ ने अपना अधिकार करलिया था। शाह नामक एक मुगल सेनापति ने अपनी चालाकी से भीलों को राणा प्रताप के विरुद्ध कर दिया था। जिन भीलों का राणा को पूरा भरोसा था और जो लोग राणा के रक्षक बने हुये थे वह लोग अब राणाके शत्रु बन गये। यह देखकर महाराणा को बड़ा दुख हुआ। परंतु यह सोचकर सन्तोष करबैठे कि—"यह भी भाग्य का ही खेल है।"

भीलों के द्वारा ही राणा को सुगमता से रसद मिल जाती थी अब वह भी बन्द हो गई। चौंड का किला भी अब राजपूतों के लिये निरर्थक सिद्ध हुआ। फिरएक बड़ी विकट समस्या प्रताप के सामने उपस्थिति होगई।

फरीदखां नामक एक मुगल सेनापति ने ऐसे समय में राणा पर आक्रमण करने का विचार किया। एक बड़ी सेना लेकर वह चौंड की ओर बड़ा। रास्ते में "चम्पत गढ़" को उसने जीता और उसको अपने अधिकार में करके चौंड की ओर बड़े उत्साह से बढ़ने लगा। राणा प्रताप को भी यह हाल मालूम हो गया। उन्होंने अब चौंड को छोड़ने का ही विचार किया क्योंकि इसके अतिरिक्त कोई उपाय ही नहीं था। प्रताप अपने साथियोंको लेकर वहां से निकल गये। बस फिर क्या था, चौंड पर फरीदखां का अधिकार होगया। चौंड पर ही क्या समस्त मेवाड़ परइस समय मुगलों की तूती बोल रही थी। जिस जगह देखो वहां मुगल ही दिखाई देते थे। कोई स्थान उनके अधिकार से खाली न था।

आह! कैसा विकट समय था? प्रताप को कैसे २ संकटों का सामना करना पड़ रहा था? अभी ऐक स्थान पर तो उनका रहना ही असंभव था। आज यहां कल वहां, बस यही हाल था राणा प्रताप अपने जीवन से बिल्कुल निराश हो चुके थे। जीवन की आशा भी कैसे होती। चारों ओर शत्रु ही शत्रु थे कोई भी राणा का सहायक नजर न आता था। राणाको विश्वास था कि यदि कोई भी मुगल उन्हें देख लेगा तो अवसर पाने पर उन्हें

मार डालने से कभी न चूकेगा। उनके प्राण हमेशा खतरे में थे। उनका कहीं कोई ठिकाना न था न खाने का पता था न पीने का न सोने का न बैठने का।

राणा को जितनी चिन्ता अपनी थी उससे अधिक अपने बाल बच्चों की थी। वह सोचते थे कि यदि कहीं यह लोग मुगलों के हाथ पड़ गये तो इनकी क्या दशा होगी? इनकी रक्षा कौन करेगा? इनकी करुण पुकारों को सुनने वाला वहां कौन है? इनको सताया जायेगा इन पर अत्याचार किये जायेंगे इनको मुसलमान बनाने का यत्न किया जायेगा यदि न बनेंगे तो मार डाले जायेंगे। यह सोचते ही राणा की आंखों से आंसुओं की धारा बहने लगती थी।

ऐसे समय में भीलों ने खूब साथ दिया। सारे भील उनके विरुद्ध नहीं हुये थे। कुछ भील उनके सहायक भी थे। राणा ने अपने बाल बच्चों की रक्षा का भार भील को ही दिया। भीलों ने वचन दिया कि वह प्राण रखते उनकी रक्षा करेंगे। राणा जानते थे कि भीलों लोग अपनी जुबान के बड़े पक्के होते हैं। इसीलिये वह अपने कुटुम्ब की ओर से चिन्ता रहित हो गये। महाराणा को कई दिन बीत जाते थे और महाराणी व बाल-बच्चों के दर्शन नहीं होते थे। कई कई दिन भूख प्यास से ही उन लोगों को काटने पड़ते थे। भीलों ने यद्यपि उनकी रक्षा प्राणों से भी अधिक की थी किन्तु फिर भी उनको बड़ा कष्ट था। भील लोग अपनी झोलियों में राणा के बाल-बच्चों को रख कर

पहाड़ों की गुफाओं में छुपाकर रखते थे। कभी कहीं और कभी कहीं। एक स्थान पर कभी न रहते थे ताकि शत्रुओं को उनका पता न लगने पाये।

लेकिन फिर भी प्रताप के हृदय में अभी आशा का अंकुर बाकी था। वह अपने सिद्धान्त पर सुमेरु पर्वत के समान अटल थे। भयानक से भयानक संकट भी उन्हें अपने पथ से विचलित न कर सके। प्रताप को विश्वास था कि वह अब भी मेवाड़ पर विजय करेगा और अवश्य करेगा।

प्रताप की भांति राजपूत वीर भी अपने व्रत पर अचल थे। अवसर पाने पर वह भी नहीं चूकते थे और मुगल सेना को तङ्ग करते ही थे। मुट्ठी भर वीर करते भी क्या? जो कुछ बन पड़ता, करते थे। पहाड़ों की कन्दराओं में छुपते रहने परभी जब कभी वह लोग मुगल सेना को देख लेते तभी अवसर मिलने पर टूट पड़ते थे। मुगल सेना भी ऐसे आकस्मिक आक्रमणों से बड़ी तङ्ग आगई थी। राजपूत लोग पहाड़ की शिलाओं पर छुप कर बैठ जाते थे। और वहीं से पत्थरों की वर्षा करते थे कभी कभी तलवारों से तीरों से भी युद्ध होता था। और जब मुगल सेना उन पर आक्रमण करती तभी वह इधर उधर गुफाओं में छुप जाते थे। इस पहाड़ी लड़ाई को ही गोरिल्ला युद्ध कहते है। ऐसा ही युद्ध औरङ्गजेबके समय में शिवाजी ने किया था परन्तु इस में और उसमें काफी अन्तर था। शिवाजी की सेना प्रताप की सेना से कहीं अधिक थी।

राजपूतों का यह हाल देखकर मुग़लों को बड़ा क्रोध आया। मुगल सेनापति फरीदखां ने युद्ध की तैयारी की और प्रताप तथा उनके साथी राजपूतों का समूल नाश करने की कठोर प्रतिज्ञाकी। एक बड़ी सेना लेकर बड़े गर्वसे फरीदखां युद्ध करने को चल दिया। मुगल सेना जगह २ जाकर प्रताप और उसके साथियों को तलाश करती फिरती थी। पहाड़ों में गुफाओं में कन्दराओं में नग़रों में जङ्गलों में सर्वत्र खोज जारी थी किन्तु कहीं भी उन लोगों का पता न चला। भीलों के घरों की भी तलाशी ली गई लेकिन फिर भी कुछ नतीजा न निकला।

## राणा की वीरोचित उदारता

खोज करते २ मुगल सेना एक पहाड़ी स्थान पर पहुँची जहां कुछ राजपूत छुपेहुये थे। राजपूतों को मौका मिल गया उन्होंने मुग़ल सेना को चारों ओरसे घेर लिया और मार काट मचाना शुरू कर दिया। फरीदखां इस आकस्मिक आक्रमण से घबड़ा गया। राजपूतों ने भी खूब जी तोड़ कर युद्ध किया और बात की बात में सैकड़ों मुगल सैनिकों को मार डाला। केवल फरी-दखां और एक उसका साथी बाकी बच रहे। राजपूतों ने दोनों को पकड़ लिया। और उन्हें महाराणा प्रताप के सामने ले गये।

प्रिय पाठको! बताइये! राणाने इस समय उनके साथ कैसा व्यवहार किया होगा? और कैसा व्यवहार करना उचित था। शायद इसकी कल्पना भी कोई न कर सकेगा कि राणा ने उनके साथ मित्रता का व्यवहार किया। जिन लोगोंने उसे नाना

प्रकार के कष्ट दिये। और दाने २ के लिये मोहताज बना दिया इन्हीं को राणा छोड़ देंगे ? नहीं ! नहीं ! वह उनकी खाल खिंचवा लेंगे उनसे पूरा २ बदला लेंगे। परन्तु वाहरे उदार वीर सचमुच उसने अपनी अपूर्व उदारता का परिचय दिया। कैसा परिचय जैसा कि संसार की कोई भी जाति उपस्थित नहीं कर सकती ? वीरों की यही शान थी ! हां क्या हुआ ? राणा ने उन्हें छोड़ दिया क्षमा कर दिया और कहा कि—"हम पराजित वीरों पर हाथ नहीं उठाते। हमारा धर्म हमें यही शिक्षा देता है।" प्रिय पाठकों ! क्या ऐसे उदहारण हिन्दू इतिहास के अतिरिक्त अन्यन्त्र भी मिल सकते है। यदि मिलेंगे भी तो शायद एक दो ही। परन्तु हमारा पवित्र इतिहास ऐसे अगणित उदाहरणों से भरा पड़ा है।

परन्तु कैसा धर्म संकट है। इसी ने हिन्दुओं को पद दलित किया। शत्रु पर विश्वास करना था उसको क्षमा कर देना राजनीति के विरुद्ध है। ऐसे समय में राज नीति का ही अवलम्ब लेना चाहिये। शत्रु पर दया करना उचित नहीं। भगवान कृष्ण की यही नीति तो थी जिसने पाँडवों को विजयी बनाया अन्यथा पांडवों की क्या मजाल थी कि कौरवों से जीत जाते। कृष्ण की नीति को हिन्दुओं ने तो ग्रहण न किया हां अन्य जातियों ने तो उसको सहर्ष अपनाया इसलिये तो सदैव जय श्री विधर्मियों के हाथ ही लगी। अस्तु..

प्रताप की ऐसी वीरता और निर्भीकता की चरचा समस्त

देश में फैल गई थी। सब मुक्तकंठ से राणा व उसके साथियों की प्रशंसा कर रहे थे। मित्र या शत्रु सभी उसकी वीरता पर मुग्ध थे। इधर राणा अपना धर्म पालन कर रहे थे उधर मुगल अपनी धूर्त्तता नहीं छोड़ते थे। उन्होंने फिर चालबाजियों से राणा को पकड़ने की कोशिश की परन्तु वह फिर भी निष्फल ही रही। उन्होंने एकबार प्रतापके बाल बच्चों का पता भीमालूम कर लिया था। लेकिन भीलों ने अपनी बुद्धिमानी से उनको खूब छकाया और प्रताप के कुटुम्ब की रक्षा कर ही ली।

भीलों ने वास्तव में राणा की बड़ी सहायता की। राणा तथा उनके साथियों के लिये भोजनादि का प्रबन्ध भी यही लोग किया करते थे। यदि इन लोगों की सहायता राणा को प्राप्त न होती तो न जाने इन बिचारोंकी क्या दशा होती ? और प्रतापके कुटुम्ब को तो अवश्य ही विपदाग्रस्त होना पड़ता। और भी न जाने क्या २ होता ?

अकबर को भी पल २ के समाचार अपने जासूसों द्वारा मालूम होते रहते थे। वह जानता था कि प्रताप इस समय कैसी विकट परिस्थिति में हैं ? वह बारम्बार प्रताप की सराहना करता था और उसके साहस को देखकर चकित हो रहा था। ऐसा अपूर्व साहस ऐसी अपार शक्ति अब तक उसने किसी भी योद्धा में नहीं देखी थी। उसकी सभा में वीरों की कमी नहीं थी परंतु कहना ही पड़ेगा कि ऐसा साहसी व पराक्रमी वहां कोई भी न था ? दुख संकटों को इस प्रकार तृणवत समझना क्या किसी साधारण मनुष्य का कार्य हो सकता है।

# दसवां परिच्छेद

## वीरांगना

अकबर बादशाह का चरित्र इतिहास प्रेमी पाठकों से छुपा हुआ नहीं है। निसन्देह यह वीर था साहसी था चालाक था बुद्धिमान था और पूरा कूट नीतिज्ञ था। अपनी कुटिल नीति से ही वह भारत देश का सम्राट बन बैठा था। वरना उसके पास था ही क्या? जिस समय हुमायूं उसका पिता मरा था उसके पास केवल थोड़ा सा ही राज्य था और वह भी नहीं के बराबर था, क्योंकि चारों ओर शत्रु ही शत्रु दिखाई देते थे। वास्तव में वह किस्मत का सिकन्दर था। उसके भाग्य ने उसका खूब साथ दिया। वह स्वयं अपने भाग्य की सराहना करता था। भाग्य का एक प्रसिद्ध अङ्गरेजी इतिहासकार ने निम्न वर्णन किया है—

Fate is a person which has five fingers, when she wishes to get her will on any man She puts two on his eyes, and two on his ears, and one in his lips, with the words "Be Silent"

भावार्थः—भाग्य एक व्यक्ति (नारि) है। जिसके पाँच अंगुलियां हैं: जब वह किसी पुरुष पर प्रसन्न हो जाती है तो अपनी दो अंगुलियां उसकी आंखों पर दो उसके कानों पर और एक उसके होठों पर रख देती है और कहती है "चुप रहो'

परन्तु यह अवश्य कहना होगा कि अकबरका चरित्र अत्यन्त

दूषित था। कई विवाह करने पर भी उसकी कानुकता कम न हुई थी। 'हरम' (राज महल—अन्तःपुर) में अनेकों सुन्दरियों को होते हुये भी वह सुन्दरी ललनाओं के दर्शनों को लालायित रहा करता था। अपने इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये उसने एक आज्ञा निकाली जो प्रकट रूप में तो अत्यन्त महत्वपूर्ण थी किन्तु वास्तव में वह अकबर की कामुकता का जीता जागता उदाहरण था किन्तु लोग इसके मर्म को न समझ सके वह आज्ञा क्या थी? आज्ञा थी कि हर महीने नौरोज का मेला लगा करे। और उस मेले का नवां दिन केवल स्त्रियों के लिये ही नियुक्त हो। ऐसा ही होने लगा। देहली के किले में ही यह मेला लगता था। एक खास बाजार इसके लिये नियुक्त था यह काफी बड़ा था। उसके एक ओर पास ही अकबर का महल था। उस बाजार का नाम मीना बाजार रक्खा गया था अब भी देहली के किले में यह स्थान मौजूद है किन्तु केवल उसका चिह्न मात्र।

नवें दिन बड़ा भारी मेला भरता था। पुरुष क्या पुरुष की छाया भी वहां नहीं पड़ सकती थी। काफी प्रबन्ध हो जाता था। केवल स्त्रियां ही उस मेलेमें जा सकती थीं। यहां तक कि सामान बेचने वाली भी स्त्रियां ही होती थीं। तारीफ यह कि सब स्त्रियाँ अधिकांश नवयुवतियां ही होती थीं वृद्धा तो शायद ही कोई दिखाई देती हो। सामान खरीदने वाली स्त्रियां भी सब बड़े २ घराने की नवयुवती ललनायें होती थीं सब लोगों को आज्ञा थी कि अपने २ घर की स्त्रियों को वहां भेजे जो अमीर उमराव या

सरदार नहीं भेजता था अकबर उससे अप्रसन्न होजाता था वह कहता था कि मीना बाजार में अपने घरकी स्त्रियों को न भेजना शाही आज्ञा की अवहेलना करना है अतः सभी प्रतिष्ठित बड़े घरानों की स्त्रियाँ वहां जाती थीं। वहां हर प्रकार का सामान एक पैसे से लेकर हजार रुपये तक का मिलता था। समान बहुत बढ़िया और सस्ता बेचा जाता था। भांति २ की आकर्षक वस्तुओं से मीना बाजार जगमगा उठता था। विशेषतय: अनन्थ सुन्दरी नवयावनाओं के अनुपम सौन्दर्य बाजार की जगपगाहट कई गुना अधिक बढ़ जाती थी उस दिन की शोभा के समक्ष दिवाली की शोभा भी फीकी पड़ जाती थी। बाजार साक्षात सौन्दर्य की प्रदर्शनी ( Beauty Exhibition ) मालूम होता था। उस बाजारका वर्णन करना वास्तव में बड़ा कठिन है। कठिन ही क्या असंभव है। उसकी शोभा वर्णन करने के लिये कवि की वाणी भी असमर्थ हो जाती है।

केवल कुछ राजपूत वीरों की स्त्रियां वहां नहीं जाती थीं। वह बादशाह की अप्रसन्नता की चिन्ता नहीं करते थे। यद्यपि वह लोग बादशाह के आधीन थे किन्तु फिर भी निर्भीक थे और स्वभिमान का ध्यान रखते थे। अन्य राजाओं नवाबों इत्यादि सभी की स्त्रियाँ वहां जाती थीं। बादशाह की बेगमें शहजादियां वगैरा भी वहां पहुँचती थी। वहां जाति का कोई प्रश्न न था। हिन्दू मुसलमान सभी घरानों की स्त्रियां वहां जाया करती थी। अकबर बादशाह वहां क्या करता था ? यह भी समये वह

वेष बदल कर वहां पहुँच जाता था और वहां सुन्दरियों के रूप सुधा को पान किया करता था। जो कोई भोली भाली नव-युवती उसने जाल में फंस जाती थी बस छल-बल या कौशल से उसका सतीत्व नष्ट कर दिया जाता था। वह केवल सुन्दर रमणियों का सतीत्व खरीदने के लिये ही वहां जाता था। जिस सुन्दरी पर वह मोहित हो जाता था उसी को अपने प्रेम पाश में फंसाने की कोशिश पूरी तरह से किया करता था। इसी प्रकार वह अपना मनोरथ सिद्ध करता था। कभी कभी उसे विफल भी होना पड़ता था। वह मौका देखकर ही अपना जाल फैलाता था क्योंकि उसे भी अपना ख्याल था और बदनामी का भी भय लगा रहता था। कई बेगमों, शहजादियों, रानियों, राजकुमारियों व अन्य प्रतिष्ठित घराने की सौंदर्यशालिनी रमणियों पर उसने जाल फैलाया। उसे सफलता भी प्राप्त हुई, विफलता भी। हर मेले में वह एक न एक को फांस ही लेता था। कई मेले इसी तरह निकल गये।

एक रोज उस मेले में एक अनुपम सुन्दरी नवयौवना आई। उसको देखकर अकबर का दिल हाथ से जाता रहा। उसने कभी पहले ऐसी सुन्दर रमणी न देखी थी। वह मुग्ध हो गया। उसने उस रमणी को अपने प्रेमपाश में फंसाने का विचार किया। वह सुन्दरी कौन थी ? वह बीकानेर नरेश के छोटे भाई महाराज पृथ्वीराज की धर्मपत्नी महारानी 'किरणमयी' थी। महाराणा प्रताप के छोटे भाई शक्तिसिंह इस सुन्दरी के

पिता थे। इसका नाम कहीं २ केवल 'सुन्दरी' ही लिखा गया है। परन्तु हम इसका नाम यहां 'किरणमयी' ही लिखेंगे। क्योंकि यही नाम ठीक मालूम होता है।

जब तक किरणमयी बाजार में रही तब तक अकबर भी उसके रूपसुधा का पान करता रहा। वह बराबर यही सोच रहा था कि किसी प्रकार इसको अपने पाप जाल में फंसा लिया जाये चाहे छल बल कौशल किसी का भी प्रयोग करना पड़े। कामी सम्राट उस समय कामोन्माद से अन्धा हो रहा था। उचितोनुचित का उसे कुछ भी ख्याल न था। इतना व्यग्र पहिले वह कभी नहीं हुआ था।

शाम हो गई। धीरे २ मीना बाजार खाली होने लगा सब स्त्रियां अपने २ घरों को जाने लगीं। कुछ देर में ही उस नवयुवती के अतिरिक्त वहां कोई न रहा। उसकी चिन्ता बढ़ने लगी। "अभी तक पालकी क्यों नहीं आई ?" यही विचार किरणमयी की चिन्ता बढ़ाने लगा उसके मनमें भांति २ के विचारों का युद्ध हो रहा था। उसी समय एक पालकी वहां आ पहुंची। किरणमयी पालकी वाले कहारों से बहुत नाराज़ हुई। देर ज्यादा होगयी थी अतः किरणमयी शीघ्र ही पालकी में बैठ गई और कहारों को चलने की आज्ञा दी। कहार उसको नये मार्ग से लेजा रहे थे यह देख कर किरणमयी को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने इसका कारण भी कहारों से पूछा। किन्तु उत्तर मिला कि यही मार्ग सीधा है। जिससे शीघ्र ही महलों में पहुँच जायेंगे।

कुछ ही देर बाद पालकी एक सुसज्जित भव्य-भवन में जाकर रुक गई और वह कहार किरणमयी को वहीं उतार कर चल दिये। किरणमयी कह रही थी कि यह भवन किसका है। हमारा तो नहीं है। परन्तु वहां सुनता ही कौन था। कहार यह कह कर चल दिये कि—"नहीं सरकार! यह आपका महल है" किरणमयी आश्चर्य सागर में डूबी जारही थी। यह क्या मामला है उसकी कुछ समझ में नहीं आया। उसने देखा कि उसी समय कमरे के सभी दरवाजे बन्द हो गये थे और वह वहां कैद थी। कुछ क्षण उपरान्त एक छोटासा गुप्त द्वार खुला और एक मनुष्य वहां आया। किरणमयी ने आश्चर्य से पूछा—'तू कौन है ?" उत्तर मिला-- तुम्हारा प्रेमी अकबर" किरणमयी के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वह सारा रहस्य समझ गई वह कहने लगी "क्या आप ही सम्राट अकबर हैं। क्या यह छल प्रपंच आपका ही रचा हुआ हैं ? क्या यह नकली कहार आपके ही थे? क्या वह आपके ही आदेश से मुझे यहां छोड़ कर चले गये हैं ? बोलिये ! क्या यह सब आपका रचा हुआ ढोंग है।

अकबर ने कहा—'तुम्हारे प्रेम में पड़कर मैं दीवाना सा होगया हूँ और इसीलिये यह कपट नाटक रचना पड़ा है। भारत के विशाल साम्राज्य का सम्राट अकबर आज तुम्हारे सामने प्रेम भिक्षुक के रूप में खड़ा है। आज जिसके नाम से दूर दूर के राजा महाराजा अथवा महान सुभट वीर काँपते हैं वही तुमसे प्रेम की भिक्षा मांग रहा है। सुन्दरी मीना बाजार

में तुम्हें देखकर मैं मोहित होगया। मैं सर्वस्व तुम पर न्यौछावर करने के लिये तैयार हूँ। भुवन मोहनी। आओ मुझे प्रेम दान देकर कृताथ करो। मेरे राज्य का सारा वैभव तुम्हारे चरणों पर लोटेगा।

किरणमयी ने कहा—"परन्तु ऐसे वैभव और वैभव वाले दोनों को ठोकर मारती हूँ। क्या तू मुझे लोभ देकर और भय दिखाकर अपने जाल में फँसाना चाहता है? परन्तु तेरी यह आशा व्यर्थ है।"

अकबर बोला—"सुन्दरी! मेरी आशा कभी व्यर्थ नहीं हो सकती है। मैं इस विशाल साम्राज्य का अधीश्वर हूँ। मैं जो कुछ चाहूँ कर सकता है। यदि तुम सीधी तरह न मानोंगी तो मुझे अपने बल का प्रयोग करना पड़ेगा। किसी भी प्रकार मैं अपनी इच्छा अवश्य पूर्ण करूंगा।"

यह कहकर अकबर सुन्दरी की ओर बढ़ा किंतु उसी क्षण किरणमयी ने कटार निकाली और अकबर को पृथ्वी पर पटक कर उसकी छाती पर चढ़ बैठी। कटार तानकर वह वीरांगना कहने लगी—"नीच पातकी! तू अपने बल का क्या प्रयोग करेगा? तेरी शक्ति कहां है? शक्तिशाली और बलवान वीर पुरुष स्त्रियों पर अपने बल का प्रयोग नहीं करते। तू वीर नहीं कायर है। यदि बीरता है तो अपनी वीरता दिखा। मैं भी देखती हूँ कि तू कितना वीर है? मूर्ख! तूने क्षत्राणियों को क्या समझ रक्खा है?......

## ( कवित्त )

१—एरे निरज्ञानी तूने भारतीय नारियों की,
अब तक शक्ति वीरता न पहचानी है।
भारतीय वीर ललनाओं की विमल कीर्त्ति,
देवताओं ने भी मुक्त कंठ से बखानी है।
अंकित अमर इतिहास स्वर्ण अक्षरों में,
क्षत्राणियों की जग विदित कहानी है।
काल की निशानी बनी कालिका भवानी,
देख रक्त है रगों में भरा बूंद भी न पानी है।

२—शक्तिहीन भारतीय नारियों को जान कर,
व्यर्थ अभिमान कर फूला न समाता है।
किन्तु जानता न वीरता की साक्षात हम,
प्रतिमायें हैं कि जिन्हें कायर बताता है।
त्रिभुवन डोलता है जिनकी हुँकार सुन,
जिनका प्रताप लखि विश्व थर थराता है।
रण में कठोर हैं कराल विकराल हम,
चूड़ियों का सुदर्शन चक्र बन जाता है।

३-भारत की छतरानियों के बल शौर्य का तूने न देखा कमाल है।
जान रहा जिसको अबला वह शक्तिमयी सबला बिकराल है।
ढाल है दीन जनों के लिये अरु पापी जनों के लिये करवाल है।
जान न तेरी बचेगी अरे शठ नाच रहा अब शीस पै काल है।

वीरांगना सती ललना किरणमयी का यह सिंहनाद सुनकर अकबर भय से कांपने लगा और कहने लगा:—

"पड़ा गुनाहों में हूँ ऐ मादर इलाही तोबा इलाही तोबा"

( अज्ञात् उर्दू कवि )

वह बारम्बार किरणमयी से क्षमा याचना करने लगा। किरणमयी ने कहा—"पापी तू क्षमा के योग्य नहीं है। स्त्रियों को केवल विलास की सामिग्री समझने वाले और पर स्त्री को कुदृष्टि से तकने वाले कभी दया के अधिकारी नहीं हो सकते।"

अकबर ने गिड़गिड़ाते हुये कहा—"ऐ महरबान मादर! मुझे इस बार केवल एकबार क्षमा करदो। मेरी अब आँखें खुल गई हैं। मैं कुरान और खुदा की कसम खाकर कहता हूं कि अब कभी पर स्त्री पर कुदृष्टि न डालूंगा मेरे अपराध को भूल जाओ और मुझे छोड़ दो। मैं आजन्म तुम्हारे इस उपकार का ऋणी रहूंगा। और कभी इस अहसान को नहीं भूलूंगा। क्षमा करो क्षमा करो, देवी में हाथ पसार कर प्राणोंकी भिक्षा चाहता हूं। तुम वीरांगना हो हिन्दू वीर ललना हो। दया और क्षमा तुम्हारे भूषण कहे जाते हैं। मेरी यह प्रार्थना स्वीकारकरो। सत्य मानों मैं अब कभी ऐसा न करूंगा। क्या तुम्हें विश्वास नहीं होता। कुरान और खुदा की सौगन्द मैं खा चुका हूं अब कभी ऐसा करने का नाम भी न लूंगा" अकबर का तमाम शरीर कांप रहा था। उसके नेत्रों में आंसू भरे हुये थे। उसकी दृष्टि में दीनता के भाव थे। वह भय से पीला पड़ा हुआ था।

किरणमयी को यह देख कर दया आगई उसको हँसी भी आती थी और करुणा भी। वह हट गई और उसने अकबर को छोड़ दिया। अकबर को अब सन्तोष हुआ। नीचे आंखें किये लज्जित भाव से वह खड़ा हुआ था। उसने पालकी मंगवाई और कहारों से किरणमयी को ले जाने के लिये कहा। चलते २ अकबर ने किरणमयी से प्रार्थना की कि वह इस बात को किसी पर प्रकट न करे वरना उसकी बड़ी बदनामी होगी। किरणमयी ने भी दया पूर्वक उसकी प्रार्थना स्वीकार करली और सिवाय अपने पति के किसी से यह भेद न कहा परन्तु धीरे २ मीना-बाजार का यह भेद जाहिर होता ही गया और मीना बाजार की शोभा दिन बदिन कम होती गई और अकबर भी फिर कभी वहां न गया क्योंकि उसको शिक्षा मिल गई थी।

———

# ग्यारहवाँ परिच्छेद

## विपत्तियों का पहाड़

### सन्धि-सन्देश

महाराणा प्रताप की इस समय बड़ी शोचनीय दशा थी। जंगल पहाड़ों में छुप २ कर दिन व्यतीत करते फिरते थे। खाने पीने सोने उठने बैठने का कुछ पता न था कभी २ भूखा रहना पड़ता था। जो कुछ मिलता वही खा लेते थे। जैसा रूखा सूखा

होता उसी पर सन्तोष कर लेते थे। यही हाल उनकी रानी और बाल-बच्चों का था।

जिस महाराणा की आज्ञा पालन करने में सैकड़ों व्यक्ति अपना सौभाग्य समझते थे आज वही निर्जन स्थान में दुखी जीवन व्यतीत करते थे। जिस महारानी की सेवा श्रूषा में हजारों दासियां लगी रहती थीं। जिसने मखमली गद्दों से नीचे पैर न रक्खा था वह पथरीली कंटकमय भूमि पर विचरण कर रही थी। जिसको किसी दिन किसी बात की कमी न थी वह बेचारे दाने दाने को मोहिताज हो रहे थे। भाग्य की विचित्र गति है, समय की बलिहारी है। किसी संस्कृत कविने कहा है—

नृपस्य चित्तं कृपणस्य वित्तं मनोरथं दुर्जन मानवाणाम्।
त्रिया चरित्रस्य पुरुष्यःभाग्य' दैवो न जानति कुतो मनुष्यः॥

अर्थात्—राजा का हृदय, कन्जूस का मन, दुर्जन मनुष्य की इच्छा, स्त्री का चरित्र और "पुरुष का भाग्य" यह बातें ऐसी हैं जिनका पार देवता भी नहीं पा सकते मनुष्य तो क्या चीज़ है।

महाराणा का ध्यान अपने दुखों की ओर न था परन्तु अपने बच्चों के संकट को देखकर वह विकल हो जाता था। छोटा नन्हा राजकुमार जब रो रो कर कहता था—"मुझे भूख लगी है,, और एक भी रोटी का टुकड़ा उसे देने के लिये नहीं मिलता था तबराणा कीक्या दशा होती होगी। महारानी पद्मावती कहीं २ महारानी का नाम "गुणवतीभी लिखा गया है अपने

परिवार की यह दशा देखकर विकल हो उठती थी। राजकुमार अमरसिंह तो बड़ा था इसलिये समझदार था और राजपूतों के साथ युद्ध में ही अकसर रहा करता था लेकिन अन्य बच्चे अबोध थे। ग्यारह साल की उम्र राजकुमारी चम्पावती की थी। पाँच छः वर्ष का बालक सुन्दरसिंह था और एक छोटी लड़की दो तीन वर्ष की थी। यही परिवार उसके साथ था।

चम्पावती राजकुमारी बड़ी समझदार और बुद्धिमती थी। वही बच्चों को खिलाया करती थी और इन मुसीबत के दिनों में भी उन्हें हंसाया करती थी। वह चट्टान पर बैठ जाती थी, फूल इकट्ठे करके पास रख लेती थी और उनकी माला गूंथा करती थी और बच्चों को देदिया करती थी। बच्चे फूलों की माला पाकर बड़े खुश होते थे। पास ही बहते हुये नाले के पानी में बच्चे पत्थर फेंक फेंक कर तमाशा देखते थे और किलकारी मार कर हंस दिया करते थे। थोड़ी देर बाद ही वह कहते—'हमें भूख लगी है।" राजकुमारी चम्पा चोंक उठती थी वह उन्हें कहानी सुनाने लगती थी। बातों से ही उनके पेट की ज्वाला को शांत करने का उद्योग करती थी। परन्तु बच्चे नहीं मानते थे। वह मचलते थे और रूठ जाते थे, रोते थे अपनी बड़ी बहन से रोटी का टुकड़ा मांगते थे। चम्पा यह दशा देखकर रो पड़ती थी वह रोटी कहां से लाये? रोटी तो एक भी नहीं है। उसने स्वयं दो दिन भूखी रह कर बिताये हैं, पास में पैसा भी नहीं है और पैसा भी इस समय किस मतलब का उन्हें तो रोटी चाहिये।

चम्पा बच्चों को गले लगाकर चूमने लगी और बोली—"ठहरो मैं तुम्हें रोटी दूंगी। आओ मेरे साथ आओ।' यहकह कर वह उन्हें अपने साथ ले जाती है और एक जगह से एक रोटी लेआती है। वही रोटी उन दोनों बच्चों को देकर कहती है—"लो दोनों मिलकर खा लो" बच्चे उस सूखी हुई रोटी को बड़े चाव से खा लेते हैं और पानी पीकर सन्तोष कर लेते हैं। वह रोटी चम्पा राजकुमारी ने अपने हिस्से की बच्चों को लाकर दी है। उसने दो दिन से कुछ भी नहीं खाया और जो कुछ उसे अपने हिस्से का मिलता उसको जोड़ २ कर रखती जाती थी। वह रोटी किस चीज की थी? गेहूँ की नहीं? जौ की नहीं, चने की नहीं न मालूम क्या अनाज था जिसमें सब तरह के दाने मिले हुये थे। यही इन बेचारों का हाल था। कभी पत्ते खा लेते थे कभी जङ्गल के फल फूल। कभी घास की रोटियां बना कर ही दिन काट लेते थे। कभी पानी पीकर ही रह जाते थे।

बच्चों ने चम्पा राजकुमारी से चलने को कहा। बच्चों को माता पिता की याद आगई। चम्पा उठी उसे चक्कर आगया वह खड़ी न रह सकी गिर पड़ी। उसके शरीर में शक्ति नहीं थी। बेचारी ने कई दिन से खाना नहीं खाया था और भर पेट खाना तो किसी रोज भी उसको न मिलता था। ऐसी दशा में शक्ति कहां से आये उसका सुन्दर गौर वर्ण शरीर जो सुविकसित पुष्प के समान था आज मुरझा रहा था। वह बच्चों को लेकर माता पिता के पास गई। वहां जाकर देखती है कि माता पिता उदास

मुख किये बैठे हुये हैं और मेवाड़ रक्षा के विषय में कुछ सोचा रहे हैं।

कुछ लोग कहते हैं कि इन दिनों मुगल सम्राट अकबर भी बेष बदलकर यहां आया करता था और इन लोगों की दशा देखा करता था। कई बार वह भिक्षुक वेष में आकर इन लोगों से रोटियां भी लेगया और जब २ इनके पास खाना देखता तब २ वह किसी न किसी बहाने खाना ले लिया करता था और उन्हें भूखा तड़फाया करता था। राणा का परिवार धर्म-प्रेमी था अतः याचकों को खाली हाथ कभी न जाने देता था। स्वयं भूखे रहकर दूसरों का पेट भरना वह अपना धर्म समझता था। इस परिवार की एसी उदारता देखकर अकबर दंग रह गया और एक दिन प्रकट रूप में प्रताप के पास जाकर उसकी प्रशंसा करने लगा। अकबर ने यह भी कहा कि वह प्रताप की सदैव प्रशंसा करता है परन्तु राजनीति की दृष्टि से वह उसका घोर शत्रु है और इसीलिये वह उनको इतने कष्ट दे रहा है। अकबर ने राणा प्रताप को गले से लगा लिया और उसकी प्रशंसा करता हुआ वापिस चला गया।

हम नहीं कह सकते कि यह बात कहाँ तक ठीक है। हम भी इस पर विश्वास नहीं करते कि यह बात सत्य ही होगी। यद्यपि इस कथा से राणा एवं उसके परिवार की उदारता का अपूर्व परिचय मिलता है परन्तु अकबर का यह व्यवहार हमें सत्य प्रतीत नहीं होता। वह प्रताप को इस दशा में पाकर कब

छोड़ने वाला था। क्योंकि मुगल सेना तो प्रताप की तलाश में मेवाड़ के जङ्गलों और पहाड़ों की खाक छानती फिर रही थी। खैर कुछ भी हो महाराणा प्रताप के लिये यह दिन बड़े भयानक थे।

एक दिन महाराणी पद्मा ने कुछ रोटियां सूखी घास को पीसकर उसके आटे से बनाई। सबने हिस्सा बांट लिया मुश-किल से एक एक रोटी हर एक के हिस्से में आई। किंतु वही रोटी उन्हें मोहन भोग से भी अधिक स्वादिष्ट मालूम हुई। छोटी लड़की खेल रही थी। सब तो खाचुके थे किन्तु उसने अभी खाना शुरू भी न किया था। जब वह खेल चुकी तो रोटी रोटी कहकर चिल्लाने लगी। महाराणी ने उसके हिस्से की रोटी उसको देदी। लड़की रोटी पाकर बड़ी खुश हुई और हंसने लगी। भूखी तो थी ही रोटी खाने लगी। लेकिन ज्यूं ही उसने रोटी मुंह से लगाई (जैसे कि बच्चे रोटी खाया करते हैं) कि उसी क्षण एक बन बिलाव अचानक ही वहां आया और लड़की से रोटी छीन कर लेगया और फिर न जाने कहां भाग गया। महाराणी यह दृश्य देख रही थी। वह बन बिलाव के पीछे गई भी लेकिन वह भला कैसे पकड़ में आ सकता था ?

लड़की रोटी छिन जाने पर जोर २ से रोने लगी ! प्रताप ने भी उसका रोना सुना। उनके नेत्रों से भी आंसू बहने लगे। महाराणी उन्हें सांत्वना देने लगी—"नाथ ! आप क्यों विकल—होते हैं ? आपको रोता हुआ देखकर हमारी भी छाती फटी जाती है। परमात्मा को याद रखिये वही हमारा इस मुसीबत में एक मात्र अवलम्ब है।

राणा कहने लगे—"पद्मे ! परमात्माको याद करते २ जमाना गुजर गया। उसने हमारी कुछ न सुनी। वह हम से रूठा हुआ है। वह न मालूम अभी क्या क्या रङ्ग दिखायेगा। पद्मे ! पद्मे !! मुझ से अब अधिक नहीं देखा जाता। मैं अपना दुःख देख सकता हूँ, कठोर से कठोर सङ्कट भी सह सकता हूं, भयानक से भयानक अपदायें भी झेल सकता हूं परन्तु अपने प्राणों से प्यारे इन नन्हें सुकुमार बालकों को एक २ दाने के लिये तरस कर चीखते चिल्लाते हुये नहीं देख सकता। पद्मा ! मैं ऐसी स्वतंत्रता का क्या करूंगा ? आह... मेरा शरीर टुकड़े २ हुआ जा रहा है..................राणा यह कह कर मूर्छित होगये......उसी समय आवाज आई—"पिता जी !" इस आवाज में वह आकर्षण था कि राणा की मूर्छा उसी समय दूर हो गयी। वह उठकर बैठ गये। उन्होंने देखा कि पास ही उसकी प्यारी बेटी राजकुमारी चम्पा पृथ्वी पर पड़ी हुई है। महाराणी का भी ध्यान उस ओर गया। माता पिता दोनों घबड़ा उठे और बेटी के पास जाकर बैठ गये। चम्पा ने कहा—'आप घबड़ाइये नहीं। मेरी तबियत कुछ खराब हो गई। परंतु पिता जी आपने अभी क्या कहा था ? मैं ऐसी स्वतन्त्रता को क्या करूंगा,, क्या यह शब्द हिंदूपति मेवाड़मार्त्तण्डमहाराणा प्रताप के मुख से निकल रहे थे ? भारत के गौरव स्तम्भ प्रताप की पुत्री यह शब्द नहीं सुन सकती ? स्वतन्त्रता हमारे जीवन से कहीं अधिक मूल्यवान है। यह हमारी परीक्षा का काल है। हमें सदैव अपने व्रत पर अटल रह कर धैर्यपूर्वक सब दुखों को

सहन करना चाहिये। माता जी तुम भी पिता जी को धीरज नहीं बंधाती। तुम हमें तो शिक्षा दिया करती हो परन्तु पिता जी से कुछ नहीं कह सकतीं?"

अपनी पुत्री के मुख से यह बचन सुनकर माता पिता के नेत्रों में जल की एक धारा बहने लगी। पिता ने पुत्री को गले से लगा लिया और उसके मस्तक को चूमते हुये कहने लगे—"बेटी! तेरा पिता स्वतन्त्रता के नाम को कभी कलङ्कित न करेगा। तेरी जैसी पुत्री पाकर कौन पथभ्रष्ट हो सकता है? भारतवर्ष को तेरी जैसी कन्याओं की ही आवश्यकता है।···" प्रतापका कण्ठ रुक गया हृदय गद्‌गद् होगया और वह बारम्बार चम्पावती के मस्तक को चूमने लगे। अचानक उन्हें मालूम हुआ कि चम्पा का शरीर ठण्डा होता जा रहा है। वह बोले—'बेटी चम्पावती।"

चम्पावती ने कहा—'पिता जी! मेरा अन्त समय आगया है। मेरीदशा प्रतिक्षण खराब होती जा रही है। मैंने एकसप्ताह से अन्न का एक दाना भी मुंह में नहीं डाला है और इसी भूख के कारण ही मेरी यह दशा हो गई है। मुझे जो रोटियां मिलती थीं मैं उन्हें बचाकर रख लेती थी और बच्चों को खिला दिया करती थी क्योंकि बच्चे भूख को सहन नहीं कर सकते। आज भी जो घास की रोटी बनाई गई थी। उनमें से एक मुझे भी माता जी ने दी थी परन्तु मैंने वह रोटी राजकुमार को खिला दी क्योंकि वह ज्यादा भूखा था। मैं जानती थी कि आप

स्वयं भूखे रहकर पहले हमें रोटियां देते थे इसलिये मैंने भी अपना यही कर्त्तव्य समझा कि जबतक बच्चों का पेट न भरे मेरे लिये भोजन रुचिकर नहीं हो सकता······पिता जी! माता जी!! आप मेरी चिन्ता न करें। स्वतन्त्रता के संग्राम में मैं अपने प्राणों की आहुति देकर अपना जीवन सफल समझती हूँ। हैं आप रो रही हैं? क्यों? आप अपनी ही शिक्षा को भूल गये। स्वतन्त्रता के लिये तो ऐसे ऐसे हजारों बलिदानों की आवश्यकता है। पिता जी माता जी, मुझे अंतिम समय अशीर्वाद दीजिये कि मैं जब २ जन्म लूं तब २ मुझे आप ही माता पिता के रूप में प्राप्त हों। स्वतन्त्रता के अनन्य उपासक प्रताप की पुत्री कहाने का सौभाग्य मुझे हर एक जन्म में प्राप्त हो और ऐसी ही गौरव-शालिनी मेरी मृत्यु हुआ करे। प्रणाम! अन्तिम प्रणाम!! मेवाड़ भूमि से अन्तिम विदा!!!" राजकुमारी का जीवन दीप बुझ गया महाराणी और महाराणा जोर २ से रोने लगे। कुहराम मच गया। बच्चे भी चिल्लाने लगे। प्रताप के साथी भी दौड़ कर आगये। सब शोक से विह्वल होकर आंसू बहा रहे थे। हवा की सनसनाहट तेज होती जाती थी। जङ्गल की नीरवता मृत्यु की भयानकता प्रति क्षण बढ़ती जा रही थी। प्रताप पागल हो गये। वह पागलों की तरह बकने लगे। उनके होशो हवास ठिकाने न थे। महाराणी बेहोश पड़ी थीं। महाराणा ने अपने एक राजपूत वीर को बुलाया और कहा—"जाओ। इस समय जाओ और अकबर के पास मेरा सन्धि सन्देश ले जाओ। मैं अकबर से संधि

करूंगा। मुझे स्वतन्त्रता नहीं चाहिये। मैं ऐसी दारुण भयंकर परिस्थिति अपने नेत्रों से नहीं देख सकता। जाओ फौरन चले जाओ।" सर्वत्र सन्नाटा छा गया। महाराणा प्रताप के मुख से यह शब्द सुनकर किसको आश्चर्य न होगा? परन्तु उस समय किसको साहस था कि राणा को समझाता। प्रताप की हठसे सब लोग परिचित थे। प्रताप ने एक पत्र लिख दिया उसमें केवल यही लिखा था—"सन्धि करने को तैयार हूँ" बस। नीचे महाराणा के हस्ताक्षर थे। राणा का दूत उस पत्र को लेकर चला गया। ओफ! यह क्या हो गया? विधाता न जाने अभी क्या क्या खेल खिलाना चाहता है?

जब महाराणा की मोह निद्रा दूर हुई, महारानी मूर्छा से जागी और उनको पत्र का हाल मालूम हुआ तो वह शेरनी की तरह गरज कर कहने लगी—"महाराणा! आप यह क्या कर बैठे?" रामकुमारी का दाह संस्कार उस समय तक हो चुका था। महाराणा मानों सोते से जाग उठे। उनकी आंखें खुल गई वह बोले—"हैं! क्या सचमुच मैंने सन्धि सन्देश भेज दिया आज सुबह से ही मैं पागल हो रहा था। पहले तो चम्पा ने सावधान कर दिया था परन्तु अब कौन करता? आह! मैंने यह क्या कर डाला? नहीं! नहीं!! मैं सन्धि नहीं करूंगा। उस दूत को वापस बुला लो परन्तु वह तो वहां पहुँच ही गया होगा। हे भगवान्! अब क्या होने वाला है? मैंने अपने हाथों से ही अपने पैरों में कुल्हाड़ी मार ली। अपनी

पुरानी प्रतिज्ञा, चम्पा से किये हुये प्रण को में शोक विह्वल हो
कर उन्माद में भूल बैठा था। भगवान! रक्षा करो। मेरे प्रणकी
लाज रखो !! कुछ भी हो अकबर का उत्तर आने पर मैं सारा
हाल साफ २ अकबर को लिख दूंगा। मैं उसकी आधीनता कभी
स्वीकार नहीं करूंगा। एक कन्या ही क्या मेरा सारा परिवार
भी यहीं नष्ट हो जाये तो भी मैं अपने प्रण से मुख न मोड़ूंगा।
प्रताप के इन बचनों से सब वीर कड़क उठे। सबने मिलकर एक
स्वर से कहा—"मेवाड़ मार्त्तण्ड की जय। मेवाड़ जननी जन्म-
की जय। स्वतंत्रता देवी की जय।" जय घोषों से वह स्थान गूंज
उठा

## अकबर के दरबार में

जब प्रताप का दूत अकबर के सामने आया तो सब लोग
आश्चर्य से उसकी ओर देख रहे थे। उसने पत्र अकबर को दिया
और अकबर की दशा उस पत्र को पढ़कर क्या हुई, यह वर्णन
करना बड़ा कठिन है। उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। वह
उछल पड़ा उसने सब दरबारियों को वह पत्र पढ़ कर सुनाया।
चारों ओर हर्ष की धारायें बहने लगीं।

सब खुशी से फूल रहे थे किन्तु दरबार में एक व्यक्ति ही
ऐसा था जिसके मुख पर हंसी का या खुशी का कोई चिन्ह न था।
वह व्यक्ति कौन था? वह था-'महाराज पृथ्वीराज राठौर बीका-
नेर नरेश के छोटे भाई-शक्तिसिंह के जमाता वीरांगना महाराणी
किरणमयी (जिसका हाल पहले आ चुका है, जो मीना बाजार

में अकबर के दाँत खट्टे कर चुकी थी ) के पतिदेव। यह अकबर के दरबार में थे किन्तु इन्होंने अपनी स्वतंत्रता नष्ट न होने दी थी। यह बड़े स्वाभिमानी और वीर थे साथ ही महान् कवि भी। पृथ्वीराज बुद्धिमानी भी बहुत थे और उनकी बुद्धिमत्ता से ही अकबर उनसे खुश रहता है था। यद्यपि अकबर ने उन्हें किसी अपराध के कारणअपने यहाँ नजरबन्द कर रक्खा था किन्तु उनके विरुद्ध उसे कुछ करने का साहस नहीं होता था। पृथ्वीराज भी नीति से काम लेते थे। वह बाहर से तो अकबर के मित्र बने हुये थे ही किन्तु उनके हृदय में प्रताप के प्रति बड़ी सहानुभूति थी। वह प्रताप को बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे।

प्रताप का पत्र उन्हे पढ़ने को दिया गया। पहले तो वह बड़े चिन्तत हुये परन्तु अपने मन के भावों को दबा कर कहने लगे—"सम्राट यह पत्र सरासर जाली है। मैं प्रताप के हस्ताक्षर और उनकी लिखावट खूब पहचानता हूं। यह काम तो किसी चालाक दुश्मन का है जो चाहता है कि मुगल सेना प्रताप की ओर से उदासीन हो जाये और आपको प्रताप की ओर से निश्चन्त जानकर वह अपना उल्लू सीधा करे। सम्राट आप तो बुद्धिमान हैं। कहीं आप ऐसी चालों में न आजायें।"

पृथ्वीराज की यह बातें सुनकर सब लोग चकित रह गये। अकबर ने कहा-"तो आप ही बताइये इसकी सत्यता मालूम करने का क्या उपाय है? पृथ्वीराज ने कहा— 'सम्राट! आप मुझे अज्ञा दें तो में यह भेद मालूम कर सकता हूँ अकबर ने

पृथ्वीराज को आज्ञा दे दी ।

पृथ्वीराज फौरन वहां से उठकर अपने महलों में चले गये । उनका मुख उदास था । उनकी रानी किरणमयी यह देख कर बड़ी चिन्तित हुई और उनकी उदासी का कारण पूछने लगी । पृथ्वीराज ने कहा—"प्रिये ! मैं अपनी उदासी का कारण क्या वर्णन करूं । लो यह पत्र पढ़कर तुम स्वयं ही जान जाओगी।" पृथ्वीराज वह पत्र अपने साथ ही ले आये थे ।

किरणमयी भी उस पत्र को देखकर और पढ़कर चकित होगई। वह कहने लगी—"प्राणनाथ ! यह क्या होगया ? वास्तव में यह तो बड़ा बुरा हुआ । यह पत्र मेरे ताऊ का ही है । परंतु मुझे विश्वास नहीं होता कि उन्होंने जान बूझ कर ही ऐसा किया है । अवश्य किसी ने उन्हें बहकाया है या बेहोशी की हालत में वह ऐसा लिख बैठे हैं । सम्भव है यह मुग़लों की चाल-बाजी का एक नमूना हो। प्राणेश्वर! महाराणा प्रताप पर समस्त भारतवर्ष गर्व करता है । वह महान विभूति हैं । स्वर्गीय पुरुष हैं । स्वतन्त्रता के सच्चे उपासक हैं । प्राण रहते वह ऐसा कभी नहीं कर सकते । उन्हीं के आदर्श का यह परिणाम हुआ था । मेरे पिता जी ने उनसे अपने अपराध की क्षमा माँगी । और वह मुग़लोंको छोड़ गये। प्राणनाथ ! आपने क्या सोचा है । हृदयेश ! मेवाड़ को इस कलंक से बचाइये । शीघ्रही कोई उपाय सोचिये ।"

पृथ्वीराज ने कहा—"प्रिये ! न घबड़ाओ । उपाय मैंने

सोच लिया है यदि भगवान ने चाहा तो सफलता ही होगी। मैं एक पत्र महाराणा प्रताप को कविता में लिखूंगा। और उन्हें उसी पत्र द्वारा समझाने की कोशिश करूँगा। जहां तक आशा है हमारा यत्न विफल न होगा।" किरणमयी को भी यह उपाय उपयुक्त मालूम हुआ। वह अपने पति की कविता का प्रभाव जानती थी। उसको पति के इन वचनोंमें कुछ शांति हुई।

कुछ समय पश्चात् पृथ्वीराज ने एक पत्र कविता में लिखकर तैयार किया और किरणमयी को दिखाया। वह बहुत खुश हुई और कहने लगी—"नाथ वास्तवमें आपने कमाल करदिया। बड़ी प्रभावशाली कविता है। इसे शीघ्र भेज दीजिये" और वह ईश्वरसे प्रार्थना करने लगी कि यह प्रयत्न सफल हो। पृथ्वीराज ने वह पत्र प्रताप के उसी दूत को दिया जो प्रताप का पत्र लाया था और उसको ताकीद कर दी कि यह पत्र बिल्कुल गुप्त ही रहे। सब तरह समझा बुझा कर उन्होंने उसे भेजदिया। वह दूत भी बुद्धिमान था। सब कुछ समझ गया। पृथ्वीराज ने यहां पर। बड़ी बुद्धिमत्ता दिखलाई। जरा से चूकने में सारा गुड़ गोबर में होने का अन्देशा था। प्रताप के दूत को अकबर ने कैद कर दिया था। पृथ्वीराज ने बहुत काफी रुपया व्यय करके तथा पहरेदारों को खूब रिश्वत देकर उसको कैद से निकाल लिया और उसके बजाय एक दूसरे व्यक्ति को वहां कैद कर लिया। रुपये में सब कुछ करामात है। रुपया क्या नहीं कर सकता ?

किसी को भी यह भेद मालूम न हुआ। केवल किरणमयी को ही यह रहस्य पृथ्वीराज ने बता दिया था। वह प्रताप के उत्तर की प्रतीक्षा कर रही थी। वह वास्तविकता जानने के लिये बड़ी व्यग्र और उत्सुक बनी हुई थी। वह बार २ देवी देवता मानती थी परमात्मा को प्रार्थना करती थी, और ठीक यही हाल उसके पतिदेव महाकवि महाराज पृथ्वीराज राठौर का था।

## पृथ्वीराज का पत्र

उधर महाराणा प्रताप चिन्तित अवस्था में बैठे हुये अपने पत्र के विषय में विचार कर रहे थे। वह सोचते थे कि अकबर क्या ख्याल करेगा? दुनियां क्या कहेगी? अकबर क्या उत्तर देगा? इन्हीं ख्यालों की उधेड़-बुन में उन्हें काफी समय होगया।

यथा समय पृथ्वीराज का पत्र लेकर प्रताप का दूत लौटकर आगया। उस समय प्रताप, महाराणी पद्मा, बाल बच्चे व सभी राजपूत सरदार वहां मौजूद थे। सब पत्र का विषय जानने के लिये उत्सुक हो उठे। प्रताप ने सहमते हुये कांपते हुये हाथों से पत्र खोला और खोलते ही चौंक पड़े। प्रताप के दूत ने सारा हाल कह सुनाया। प्रताप ने भी पत्र पढ़ कर सबको सुनाया। सारे राजपूत सरदारों और महाराणा पर उस पत्र का बड़ा प्रभाव पड़ा। सब की भुजायें फड़कने लगीं और नवीन उत्साह सब के हृदयों में भर गया।

पाठक उस पत्र की भाषा जानने के लिये अवश्य उत्सुक

हो रहे होंगे। अतः पाठकों के मनोरञ्जनार्थ हम पत्र का कुछ अंश यहां उद्धृत किये देते हैं। उसपत्र के अंश ही प्रायः आज कल प्राप्त होते हैं पूरा पत्र नहीं मिलता, परन्तु निम्न पद्यों से ही पाठक पत्र का भावार्थ एवं तत्व तथा चमत्कार जान सकते हैं :-

( कविता )

सोरठा— अकबर समद अथाह, सूरापण भरियो सजल।
मेवाड़ी तिण मांह, पोयण फूल प्रताप सी ॥ १ ॥
अकबर एकण बार, दागल की सारी दुनी।
अण दागल असवार, रहियो राय प्रताप सी ॥ २ ॥
अकबर घोर अंधार, ऊघाणे हिन्दू अवर।
जागे जग दातार, पौहरे राण प्रताप सी ॥ ३ ॥
हिन्दूपति परताप, पत राखी हिन्दुवाणरी।
सहे विपत सन्ताप, सत्य सपथ कर आपणी ॥ ४ ॥
चौथो चितोड़ाह, बांटो बाजान्ती तणो।
माथे मेवाड़ाह, सोहै राण प्रताप सी ॥ ५ ॥
सौरभ अकबर शाह, अलियल आभड़ियो नहीं।
चम्पो शित्तौड़ाह परसो तण प्रताप सी ॥ ६ ॥
पातल पाघ प्रमाण, सांची सांगा हर घणी।
रही सदा लग राण, अकबर सूंऊ भी अणी ॥ ७ ॥

दोहा—भाई जण अहड़ा जणा, जहड़ा राण प्रताप।
अकबर सूतो ओभ के, जाण सिराण सांप ॥ ८ ॥

सोरठा—राओ अकबरि याह, तेज तिहारो तुरकड़ा।
नम नम नीसरियाह, राणा बिना महराजवी ॥ ९ ॥

सह गावड़िये साथ, येकड़ बाड़े बोड़िया ।
राण न मानी नाथ, तांडे राण प्रताप सी ॥१०॥
सोयो सो संसार, असुर पालो लै ऊपरै ।
जागे जगदातार, पोहरे राण प्रताप सी ॥ ११ ॥

दोहा—धर बांकी दिन पाधरा, मरदन मूके माण ।
घणे नरिन्दा घेरियो, रहे गिरिन्दा राण ॥ १२ ॥

प्रताप व प्रताप के सभी साथी पत्र को सुनकर बहुत प्रभावित हुये । यूं तो प्रताप पहले ही अपनी भूल पर पश्चात्ताप कर रहे थे । क्योंकि ऐसा उन्होंने अपनी इच्छा से नहीं किया था । पुत्री की मृत्यु के शोक में पागल होकर वह ऐसा कर बैठे थे । ऐसी विपत्ति आने पर सत्यतः मनुष्यों की बुद्धि ठिकाने पर नहीं रहती । परमात्मा भी जिससे रूठा हुआ हो जिस पर विपदा के पहाड़ टूट पड़े हों वह यदि शोक विह्वल होकर ऐसा कर बैठे तो आश्चर्य ही क्या है । इस भूल से प्रताप का चरित्र दूषित नहीं हो सकता जैसा कि कुछ लोगों का ख्याल है । वह सदैव अपने प्रण पर हिमालय की तरह अचल और अटल था और हमेशा रहा ।

---

# बारहवां परिच्छेद

## भामाशाह

उधर अकबर को भी यह हाल मालूम हुआ कि राणा प्रताप सन्धि करने को तैयार नहीं है । पृथ्वीराज ने भी उसको

विश्वास दिला दिया था कि महाराणा आधीनता स्वीकार करने वाला व्यक्ति नहीं है। वह प्राण रहते कभी पराधीनता की शृङ्खला में बद्ध होना स्वीकार न करेगा। वह बड़ा स्वाभिमानी है। अकबर भी यह बात खूब समझता था और उसको भी पूरा विश्वास हो गया था कि अब किसी भी प्रकार राणा प्रताप आधीनता स्वीकार नहीं करेगा। इतने कष्ट सहने पर जब कि राणा अपने प्रण से विचलित न हुआ तो अब कौन ऐसी शक्ति हो सकती है जो उसे उसके कर्तव्य से विमुख बनादे। कोई नहीं अकबर अवसर पाकर कई बार प्रताप के पास सन्धि का सन्देश भेज चुका था। परन्तु प्रताप ने कभी उसको स्वीकार न किया। सन्धि सन्देश लेकर जब मुगलों का दूत प्रताप के पास पहुंचता था तब क्या होता था:—

लिये सन्धि सन्देश समीप प्रताप के,
सैनिक पहुँचे अकब्बर के।
दुरनीति म्लेच्छन की लखि के,
भुजदंडहि केहिर के फरके॥
चमकी दमकी असि दामिनि सी,
कड़के जिमि मेघ हों अम्बर के।
रणमत्त जो ह्वै करके गरजे तब,
बन्द सभी करके कर के॥

यह सब कुछ था परन्तु अब इस समय महाराणा प्रताप की शक्ति बहुत कम होगई थी। हल्दी घाटी की लड़ाई में उसकी

ताकत काम आ चुकी थी। वह बड़े उत्साह से लड़ा था हजारों सैनिक मारे जा चुके थे। फिर शेष ही क्या रहा था। जो सैनिक बाकी बचे थे उनमें से भी कम होते जा रहे थे। कारण यह था कि कोई तो भूक प्यास से व्याकुल होकर प्राण खो बैठता था कोई लड़ाई झगड़े में मर जाता था क्योंकि छोटी २ लड़ाइयां तो अभी तक बन्द नहीं हुई थीं। कुछ सैनिक प्रताप को छोड़ कर भी चले गये थे क्योंकि पेट की समस्या बड़ी विकट है। जब लोगों को भूखा ही रहना पड़ा और विजय की भी उन्हें कोई आशा न रही तो वह लोग वहां से भाग गये। प्रताप यह सब जानकर 'आह' भरकर चुप हो जाते थे। क्या करते? उन लोगों को कैसे वापस बुलाते? उनके पेट की समस्या वह किस प्रकार हल करते सारे ही सैनिक तो 'प्रताप' नहीं हो सकते। सब के हृदयों में प्रताप समान दृढ़ता नहीं हो सकती।

अब प्रताप शक्तिहीन हो गये थे। अठारह वर्ष के लगातार युद्ध ने उन्हें अत्यंत क्षीण कर दिया था। न धन ही रहा, न बल ही रहा जिसके आधार पर कुछ किया जा सके। उन्होंने आंख उठाकर एक बार अपने चारों ओर देखा और आह भरकर चुप हो गये। केवल थोड़े से सैनिक ही उनकी सेना को सुशोभित कर रहे थे। उस सेना को सेना कहते हुये भी संकोच होता है। वह तो एक टुकड़ी थी छोटी सी साधारण सी। आह! क्या इसी के बल पर महाराणा अपनी मातृ-भूमि का उद्धार करना चाहते हैं? क्या इसी सेना (!) को लेकर प्रतापसिंह मुगलों की विशाल सेना से युद्ध करना चाहते हैं?

हम पहले लिख चुके हैं कि मेवाड़ पर मुगलों का ही अधिकार नजर आता था। जिस ओर देखो मुग़ल ही मुगल दिखाई देते थे। उदयपुर, चितौड़, कुम्भलमेर, चौंड आदि २ सभी प्रसिद्ध गढ़ों पर उनका अधिकार हो रहा था। किन्तु फिर भी मुगल चैन से नहीं रह सकते थे। जिस प्रकार वह लोग प्रताप को सुख की नींद नहीं सोने देते थे उसी प्रकार प्रताप के थोड़े से वीरों ने ही मुगलों की नींद हराम करदी थी। मुगलों की भी नाक में दम आ रहा था। वह लोग राजपूतों से बड़े तङ्ग थे। हर समय उनको आफतों का सामना करना पड़ता था। उनके दिलों में धुड़क पुकड़ मची ही रहती थी। वह राजपूतों को "पहाड़ी डाकू' कहा करते थे।

मुगलों की नाक में दम भी आ रहा था और उनकी सेनायें भी नष्ट होती रहती थीं। परन्तु उनकी शक्ति क्षीण नहीं हुई थी। क्योंकि वह देहली से सहायता मांग लिया करते थे और इसीलिये वह लोग हमेशा ज्यों के त्यों शक्तिशाली बने रहते थे लेकिन राजपूत कहां से सहायता लेते ? उनकी शक्ति तो दिन ब दिन कमजोर होती जा रही थी। भविष्य में भी कोई आशा न थी प्रताप दिन रात यही सोचते थे कि क्या किया जाये ?

एक रोज प्रताप ने सब को बुलाया और कहने लगे— भाइयो ! आप लोग देख रहे हैं कि हमारीशक्ति नित्य प्रति क्षीण होती जा रही है। पास में खाने को दाना भी नहीं है ऐसी दशा में सेना भी कैसे संगठित की जा सकती है। धन के बिना कुछ भी नहीं हो सकता इसलिये मेरी राय तो यह है कि मेवाड़ भूमि को अन्तिम प्रणाम करके कहीं दूर देश में चलना चाहिये वहां

कुछ दिन विश्राम करके पहले अपनी स्थित सुधारनी चाहिये फिर कुछ विचार किया जाये। यदि इस दशा में हम लोग मुगलों का मुकाबला करें तो हमारी रही सही शक्ति भी नष्ट हो जायेगी और हमारे पास कुछ भी शेष न रहेगा। कहिये ! आप लोगों की क्या राय है ?''

सब ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और सोगदी राज्य में चलने का निश्चय किया ; यह राज्य सिन्ध नदी के किनारे बसा हुआ है। प्रताप को आशा थी कि वहाँ शांति से कुछ दिन व्यतीत हो जायेंगे। अतः सब लोग वहीं जानेको राजी होगये। चलते समय सबने मेवाड़ की धूलि अपने मस्तक पर लगाई और उस पवित्र भूमि को चूमा। सब की आंखों में आंसू थे। सबके मुख कमल मुरझा रहे थे शोक एवं दुख की घनघोर घटायें छा रहीं थी। शक्तिशाली तेजस्वी वीर निस्तेज एवं निष्प्रभ मालूम हो रहे थे। हाँ ! जिसके लिये लगभग २० वर्ष तक निरंतर युद्ध किया, जिसके लिये अपने सारे सुखों का बलिदान किया उसी को आज इस प्रकार विवश होकर छोड़ते हुये किस देश-प्रेमी स्वतंत्रता के उपासक का हृदय टुकड़े टुकड़े न हो जायेगा।

## भामाशाह की उदारता

"महाराणा प्रताप" मेवाड़ भूमि को सदा के लिये छोड़कर जा रहे हैं यह समाचार गुप्त रहते हुऐ भी चारों ओर फैलगया। मेवाड़ की समस्त प्रजा व्याकुल होकर रोने लगी। महाराणा अरबली की पहाड़ियों को पार कर चुके थे और मारवाड़ की

सीमा पर पहुँच चुके थे, किंतु प्रजा वहां पर भी उनका पीछा नहीं छोड़ती थी। जिस प्रकार अयोध्या की प्रजा श्री रामचन्द्रजी के बन जाने के समय विकल हो गई थी उसी प्रकार वही दशा आज मेवाड़ की भी हो रही थी। महाराणा के दर्शनों के लिये जन समूह उमड़ा पड़ता था। जहां कहीं महाराणा पहुँचते वहीं लोग उनके दर्शनों के लिये आ पहुँचते थे। महाराणा ने बड़ी कठिनता से विवधि प्रकार से आश्वासन देकर मेवाड़ की प्रजा को शान्त किया। वह बेचारी रोती हुई वापिस लौट गई। प्रताप भी जंगलों में होकर रास्ता तय करने लगे। नगरों में होकर जाना या किसी बस्ती में होकर गुजरना वह उचित नहीं समझते थे, क्योंकि जिस जगह वह जाते थे वहीं प्रजा उनको घेर लेती थी चाहे वह किसी भी राज्य की हो। प्रताप की सुकीर्ति समस्त देश में फैल गई थी और सभी उनका आदर करते थे। नरेश न सही प्रजा तो कम से कम प्रत्येक प्रान्त की ही उन्हें श्रद्धा की दृष्टि से देखती थी।

प्रताप के दर्शनीर्य आये हुये व्यक्तियों में से उनके पुराने वृद्ध मन्त्री "भामाशाह भी थे। जब प्रताप अपने बाल-बच्चों व साथियों के साथ एक पहाड़ी घाटी में एक झरने के पास बैठे हुए थे और अपनी प्यास उसके पानी से बुझा रहे थे उसी समय भामाशाह प्रताप के पास आये। भामाशाह जाति के वैश्य थे। और मेवाड़ के ही निवासी थे। किसी समय वह प्रताप के मंत्री भी रह चुके थे। उन्होंने दूर से ही प्रताप व उनके साथियों की

दशा देखी। उनकी आँखों से झर-झर आंसू झरने लगे। आह! सी दशा तो भिखारियों की भी नहीं होती। काल का यह कैसा भयानक कुचक्र है। वह प्रताप के निकट आये और आते ही उनके पैरों पर गिर कर फूट २ कर रोने लगे। महाराणी के भी उन्होंने चरण छुये और कहने लगे—"आह! आप लोगों की यह दशा? तन पर कपड़े भी नहीं, पास में खाने को दाना भी नहीं। जल पीकर ही आप लोग जीवन व्यतीत कर रहे हैं। हे मेवाड़ के नर केहरी! आपकी यह दुर्दशा!" यह कहते हुए वह फिर फूट फूट कर रोने लगे। महाराणा महाराणी व अन्य सरदारगण भी अपना शोक न रोक सके। उनकी आंखें भी जल वर्षा कर रही थीं।

महाराणा ने कहा—"भाई। यह तो विधाता का विधान् है। हमारा भाग्य ही ऐसा है इसमें किसी का वश ही क्या है?" बस यही शब्द राणा के मुख से निकल सके और वह उदास हो गये। भामाशाह कहने लगे—"महाराणा! आपकी यह व्यथा देखकर मेरा हृदय वेदना से भरा जाता है। मैं भी आपका सेवक रह चुका हूं। मैं ही क्यों मेरे पूर्वज भी आपकी सेवा कर चुके हैं। मुझे मालूम हुआ है कि आप धनाभाव के कारण ही मेवाड़ देश को छोड़कर जा रहे हैं। मेरी प्रार्थना है कि केवल इसी! कारण से आप मेवाड़ को न छोड़िये! हे मेवाड़ के भाग्य विधाता यह आपका प्यारा देश किसके सहारे रह सकेगा? इसकी नौका का कर्णधार कौन कहलायेगा। मातृभूमि के आंसुओं को कौन

पोंछेगा ? आप धन की चिन्ता न करें ! मेरे पूर्वजों और मैंने आपका ही अन्न खाकर कुछ धन जोड़ रक्खा है। वह धन किस काम आयेगा ? आप उसी धन से अपना कार्य सम्पन्न कीजिये। महाराणा जी ! क्या मेरी यह प्रार्थना आप स्वीकार न करेंगे ?" यह कह कर भामाशाह ने धन की थैली महाराणा के चरणों में रखदी। और ! इतना धन ? कहते हैं कि थैली में पचास लाख सोने की मोहरें थीं। महाराणा व उनके साथियों को इतना धन देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ ? परन्तु महाराणा भामाशाह से कहने लगे—"मन्त्रिवर ! मुझे यह धन लेने में संकोच होता है ? यह तुम्हारी वर्षों की महनत का जमा किया हुआ धन है। और तुम सारा धन हमको दे रहे हो ऐसी दशामें तुम्हारे पास कुछ भी न रहेगा। तुम कङ्गाल हो जाओगे।......

बीच में ही बात काट कर भामाशाह ने हाथ जोड़ कर कहा—"महाराणाजी ! यह धन मेरा नहीं है आपका ही है। मैंने यह आपसे तथा आपके पूर्वजों से ही प्राप्त किया है। आप की वस्तु आपको ही समर्पित कर रहा हूं फिर भी आपको क्यों संकोच हो रहा है ? महाराणा ! क्या मेरा शरीर मेवाड़ का नहीं है क्या मातृ-भूमि मेरी जननी नहीं है। क्या मुझको जन्मभूमि की सेवा करने का अधिकार नहीं है। महाराणा जी ! आप यह न समझें कि मैं यह धन दान रूप में दे रहा हूं। भला मैं आपको क्या दान दे सकता हूं ? जो आपके ही धन से इतना बड़ा हुआ हो वह आपको क्या दे सकेगा ? यदि सारे संसार का धन भी आपके

चरणों पर न्यौछावर कर दिया तौभी कम है। क्षत्रियकुल सूर्य ! मेरी प्रार्थना को न ठुकराइये। मेरी वृद्ध आत्मा को दुख न पहुँचाइये। यह धन स्वीकार कीजिये। आप इस धन से बारह वर्षों तक पच्चीस हजार सेना का संचालन कर सकते हैं। आप मेरी चिन्ता क्यों करते हैं ? मेरी अवस्था अब बहुत होचुकी है। मैं अब संसारमें कितने दिन का महमान हूँ ? मुझे अपनी उदरपूर्ति के लिये कितना सा धन चाहिये ? महारानी ! आप कोई संकोच न करें और इस धन को लेकर अपना कार्य सम्पन्न करें। एक बार फिर भाग्य की परीक्षा कर देखें।"

वृद्ध भामाशाह की विनय सुनकर महाराणा गद्गद् होगये। उन्होंने अपने स्वाभिभक्त मंत्रीको जो उनके चरणों में पड़ा हुआ था उठाकर गले से लगा लिया। महारानी के मुख से भी "धन्य स्वामिभक्त" के शब्द निकल पड़े। सारे राजपूत 'धन्य धन्य' की आवाजों से उस स्थान को गुंजायमान करने लगे। उसी समय वृद्ध मन्त्री ने पुकिलत होकर "महाराणा की जय, मेवाड़ की जय, हिन्दू पति प्रताप की जय "बोलकर सोते हुए वीरों को जगा दिया।

## प्रतिकूल परिस्थिति

उधर मेवाड़ में मुगलों का पूरा अधिकार हो गया। सब ने यही समझ लिया कि मेवाड़ का महाराणा मुगलों से डर कर भाग गया और अब वह कभी मेवाड़ की ओर मुख करने का साहस न करेगा। सब लोग अब बहुत खुश थे। हर जगह

मुगल लोग स्वतन्त्रता से विचरण कर रहे थे। उन्हें अब किसी का भय नहीं रहा था। उनके रास्ते का कांटा दूर हो गया था। वह अब बिलकुल स्वच्छन्द थे।

यही हाल देहली में था। अकबर खुशी से फूला न समाता था। दरबार में हमेशा नाच रंग हुआ करते थे। प्रताप का भय उनको अब बिल्कुल भी न रहा था। मानसिंह भी बहुत खुश थे वह अपनी सफलता पर पुलकित हो रहे थे। उन्होंने अपने अपमान का बदला पूर्णतय: चुका लिया था। प्रताप जङ्गलों पहाड़ों की खाक छानता फिरा वह दाने २ के लिये मोहताज होगया उनका धन, बल सब कुछ नष्ट होगया और अन्त में मेवाड़ छोड़ कर भाग ही गया। अबतो हमेशा के लिये मेवाड़ पर मुगलों का अधिकार हो चुका। मेवाड़ का एक भी टुकड़ा राजपूतों का न रहा और न अब रह सकेगा। यह सोचकर वह लोग खुश हो रहे थे। अगर कुछ दुख था तो केवल यही कि प्रताप ऐसे समय में भी मुगलों के आधीन रहना पसन्द नहीं करता और उसने अभी तक अकबर के आगे सर न झुकाया। यही एक ऐसी बात थी जो उनके दिलों में खटक रही थी।

महाराज पथ्वीराज और उनकी वीराँगना धर्मपत्नी महारानी किरणमयी को भी यह हाल सुनकर दुख हो रहा था किरणमयी सोच रही थी कि क्या कभी मेवाड़ का सौभाग्य सूर्य उदय न होगा ? जब उसे प्रताप के दुखों का हाल मालूम हुआ था तो वह खूब रोया करती थी। परन्तु उसको भी प्रताप की

तरफ से पूर्ण विश्वास था वह समझती थी कि वह स्वतंत्रता का उपासक है सदा स्वतंत्र होकर ही रहेगा।

राणा प्रताप भी भामाशाह की सहायता से नया कार्य शुरू कर रहे थे। कुछ इतिहास भामाशाह की उदारता को नहीं मानते और उनका मत है कि भामाशाह ने प्रताप को धन नहीं दिया था। वह लोग भामाशाह का कोई जिक्र नहीं करते। वह कहते हैं कि महाराणा को गढ़ा हुआ धन मिल गया था और उसी धन की सहायता से उन्होंने नया कार्य शुरूकिया। सुप्रसिद्ध इतिहासकार कर्नल टाड ने भामाशाह की सहायता को ही माना है। नहीं कहा जा सकता कि कौनसी बात ठीक है। दोनोंही बातें मानी जा सकती हैं परन्तु भामाशाह एक कल्पित पात्र है यह भी समझ में नहीं आता। खैर कुछ भी हो महाराणा को धन की सहायता अवश्य मिली चाहे वह कहीं से भी क्यों न मिली हो।

उस धन को पाकर राजपूतों में नव जीवन आगया फिर वह लोग नये उत्साह से अपनी सेना का संगठन करने लगे। प्रताप ने नये सैनिकोंकी भरती शुरू करदी। शीघ्र ही एक सुसङ्गठित बड़ी सेना तैयार होगई। यद्यपि सेना बहुत बड़ी तो नहीं थी परंतु संतोष के लिये काफी थी और राणा प्रताप तो उसी के द्वारा विजय पाने की आशा कर रहे थे। डूबते हुये कोतो तिनके का सहारा भी बहुत काफी है।

जब कि देहली में शांति स्थापित थी और मेवाड़ में मुगल रङ्गरेलियां कर रहे थे। मुगल सेनापति शहबाजखां भी जो मेवाड़

के देवीर नामक स्थान पर प्रताप की सेना को नष्ट करने के लिये तुला हुआ खड़ा था अब खूब खुशियां मना रहा था। सारे लड़ाई के काम ढीले पड़ गये थे। उन्हें स्वप्न में भी आशा न थी कि प्रताप अब कभी मेवाड़ कानाम भी लेने का साहस करेगा। ऐसे ही अवसर को देखकर राणा प्रताप पुनः अपनी सेना लेकर मेवाड़ पर चढ़ आया। प्रताप का नाम सुनकर सब लोग चौंक पड़े। सारे नांच रङ्ग बन्द होगये। मुगल सोते से जाग उठे। किंतु फिर भी वह लोग कम न थे। तमाम मेवाड़ में फैले हुये थे। काफी सेना उन लोगों के पास थी। फिरघोर युद्ध छिड़ गया।

यह युद्ध भी गत युद्ध की अपेक्षा कम भयानक नहीं था। राजपूत वीर बड़े उत्साह से लड़ रहे थे। उन्हें यह अवसर बड़ी कठिनता से प्राप्त हुआ था। राणा प्रताप के उत्साह का तो कुछ ठिकाना ही न था। जिस ओर जाते थे उसी ओर सफाया हो जाता था। मुगलों ने जो उपाय हल्दीघाटी के युद्ध में किये थे उन्हीं का प्रयोग वह लोग अब भी करने लगे परंतु इसबार उन्हें सफलता न मिली। समस्त मुग़ल सेना ने बड़ी हिम्मत करके प्रताप को घेर लिया और उन्हें जीवित ही कैद करने के विचार से सब मिलकर उन पर टूट पड़े। परंतु महाराणा प्रताप तनिक भी विचलित न हुये वह दुगने उत्साह से लड़ने लगे। महाराणा प्रताप ने भी सोच लिया था कि बस यही युद्ध अंतिम युद्ध होगा या तो विजय ही होगी या मृत्यु ही।

महाराणा प्रताप के रण कौशल की प्रशंसा करते हुये

हिन्दी के सुप्रसिद्ध आधुनिक कवि श्री हरिशंकर शर्मा कविरत्न अपनी स्वरचित पुस्तक प्रतापी प्रताप में लिखते हैं:—

( कवित्त )

१—चीखते थे हाथी हींसते थे बार बार,
बैरियों में रल्ला सुन हल्ला मच जाता था।
कट्ट कट्ट रुण्ड, मुण्ड, झुंड झख मारते थे,
झट्ट पट्ट वीरता का झण्डा गढ़ जाता था।
हेकड़ों की हेंकड़ी दबा के दुम भागती थी,
मुगलों का सारा मद मान झड़ जाता था।
लेकर स्वतन्तत्रा की तेज तलवार जब,
प्रणवीर प्रबल प्रताप अड़ जाता था॥ १॥

२—राणा रणवीर जी का मुगल महीपति से।
घोर घमसान जब युद्ध ठन जाता था।
धम्म धम्म धौंसे ढोल बाजते थे गोले तोप,
छोड़ती थी तीरों का वितान तन जाता था॥
खट्ट खट्ट खांडे खड़कै थे तड़कै थे हिय।
शत्रुओं को शोणित से सांदा सन जाताथा।
बैरी कुलघातक, सुराजपूत बालक,
प्रताप के प्रताप से प्रताप बनजाता था॥२॥

श्री हरिशङ्कर शर्मा कविरत्न

राजपूत सेना भी मुगल सेना पर टूटी पड़ी। इस आक्रमण से मुगलों के हौसले पस्त हो गये। उन्हें यह भी सोचने का

अवसर न मिला कि अब क्या करना चाहिये और राजपूत सेना पर किस प्रकार विजय प्राप्त हो सकती है ? विजय पाना तो दूर रहा मुगलों को अपनी जान के लाले पड़ गये । वह लोग जिधर देखते थे उधर राजपूत ही राजपूत दिखाई पड़ते थे । चारों ओर त्राहि त्राहि मच रही थी । हाहाकार ही हर तरफ दिखाई देरहा था । मुगल सेना के सभी लोग एक एक करके मेवाड़ से भागने लगे । राजपूत उन्हें खदेड़ते थे और वह जान बचाते फिरते थे ।

कुम्भलमेर के दुर्ग पर घोर युद्ध छिड़ा परन्तु अन्त में प्रताप की विजय हुई । मुगल सेनापति मारा गया और उसकी सेना वहीं नष्ट होगई । कुम्भलमेर दुर्ग कैसा था ? यह हम पहले लिख चुके हैं अतः फिर यह लिखने की आवश्यकता नहीं कि इस दुर्ग पर विजय प्राप्त कर लेने से महाराणा प्रताप को कितना लाभ हुआ । प्रताप को यह गढ़ जीतकर बहुत खुशी हुई ।

राजपूतोंकी हिम्मत भी बढ़ गई वह आगे बढ़ने लगे। और विजय श्री भी उनका ही साथ देने लगी । महाराणा ने एक दो नहीं बत्तीस किले फतह किये । उदयपुर का मुगल सरदार तो प्रताप से डर करही भाग गया । जिन स्थानों को प्रताप ने खोया था उनको पुनः अपने अधिकार में कर लिया । महाराणाप्रताप जहां भी सेना लेकर जाते वहीं उनकी विजय होती थी । मुगलों के पेर पूरी तरह उखड़ चुके थे अब जमाना भी बहुत कठिनथा । प्रताप का नाम ही सुन सुन कर मुगल भाग खड़े होते थे ।राणा

का आतङ्क सारे मुगल सैनिकों पर छा रहा था। किसी को कान हिलाने की भी हिम्मत नहीं हुई।

राणा प्रताप ने मेवाड़ के अतिरिक्त अपने आस-पास के भी कुछ प्रांतों पर काबू कर लिया। आमेर (जयपुर) राज्य के प्रसिद्ध व्यौपारिक स्थान "मालपुरा" पर भी प्रताप ने विजय प्राप्त की और इस प्रकार मानसिंह पर भी अपने स्वाभिमान का सिक्का जमा दिया। राणा प्रताप ने मानसिंह को केवल यही शिक्षा दी थी कि सच्चे राजपूत आन पर ही जीते हैं और आन पर ही मरते हैं। मालपुरा को जीतने का भी प्रताप का यही उद्देश्य था। एक बार आमेर पर भी आक्रमण किया और वहां भी प्रताप की ही विजय हुई। प्रताप ने अपने आधिपत्य वहां स्थापित नहीं किया और न उसका ऐसा उद्देश्य ही था वह तो केवल महाराजा मानसिंह को राजपूतों की सच्ची वीरता दिखाना चाहते थे मानसिंह भी सब कुछ जानते थे और समझते थे परन्तु उन्होंने फिर प्रताप का मुकाबला करने की हिम्मत नहीं की; वह जानते थे कि प्रताप साधारण व्यक्ति नहीं है। प्रताप से लोहा लेना बच्चों का खेल नहीं है। मानसिंह ने यद्यपि अनेकों लड़ाइयां लड़ीं थीं जो एक से एक भयङ्कर थी। काबुल और बङ्गाल जैसे देशों पर विजय प्राप्त की थी परन्तु प्रताप जैसे वीर से उसका मुकाबला अभी तक न हुआ था। एक दो वर्ष नहीं लगातार पच्चीस वर्ष तक प्रताप अपनी मातृ-भूमि के लिये लड़ता रहा। कैसे कैसे सङ्कटों का उसने

सामना किया फिर भी अपने प्रण से विचलित नहीं हुआ। ऐसे उदाहरण इतिहास में कम ही मिलते हैं। भारत को अपने इस वीर पर महान गर्व है और हमेशा तक रहेगा। महाराणा का किसी से व्यक्ति गत द्वेष न था और न वह किसी के विरोधी ही थे वह तो केवल स्वतन्त्रता के अनन्य उपासक थे। जैसा कि हिन्दी के सुकवि श्री बिरही उदयप्रदीप जी ने कहा है:—

१—मुगल घराने से विरोध रंच मात्र था न,
राजपूत जाति से न थोड़ा भी विरोध था।
व्यक्तिगत शाह से भी तनिक विरोध था न,
'मान' कछवाह से भी कुछ न विरोध था॥
धर्म से विरोध था न कर्म से विरोध कोई,
सुन्नत शियाह से न खुदा से विरोध था।
था न किसी और से विरोध भी प्रताप का तो,
एक परतन्त्रता से केवल विरोध था॥

२—पानी था प्रलय का या कि झार बड़वानल था,
आग का भभूका था कि अन्धड़ का पौन था।
चण्ड मारतण्ड था निदाध की दुप्हेरी का,
धक्का वज्र का था या कि घाटियों का गौन था॥
धर्म का धुरीण था कि कर्म का प्रत्यक्ष रूप,
टेक का ही बाना था कि आन का ही भौन था।
वीर कारनामों से है हैरत में विश्व आज,
किसी ने न जाना कि प्रतापसिंह कौन था॥

(श्री विरही उदय प्रदीप)

# तेरहवाँ परिच्छेद

## प्रताप की विजय

समस्त मेवाड़ पर अब प्रताप का अधिकार हो गया था। मुगल सेना नष्ट हो चुकी थी जो कुछ शेष थी वह भाग कर देहली पहुंच गई थी और प्रताप से लड़ने का साहस अब उसमें न था। अकबर को इन समाचारों से कितना दुःख हुआ होगा, यह पाठक स्वंयम ही जान सकते हैं। पच्चीस साल तक घोर लड़ाई लड़कर वह अपनी अगणित सेना नष्ट कर चुका था। इसलिये अब उसने युद्ध बन्द कर देना ही उचित समझा। अकबर जान गया कि प्रताप निराश होकर बैठने वाला व्यक्ति नहीं हैं। जब तक वह जीवित है अपने प्रण से विचलित न होगा। इसलिये अच्छा यही है कि अब युद्ध न किया जाये और मेवाड़ की ओर ध्यान भी न दिया जाये।

यही सोच कर अकबर शान्त हो गया और फिर उसने मेवाड़ का नाम भी न लिया। व्यर्थ ही खून खराबी करने से उसकी सेना का भी तो नाश होता था। उसको भी तो अपनी चिन्ता थी। जितना लाभ न होता उससे अधिक हानि हो जाती थी। अकबर की सेना का साहस भी अब मेवाड़ की ओर मुख करने का न होता था।

मेवाड़ में फिर पहले जैसे ही राजपूती शान हो गई। परन्तु चित्तौड़ का उद्धार अभी तक न होने पाया था। उसी को

अपने अधिकार में करना शेष था । महाराणा प्रताप ने एक रोज सरदारों को एकत्रित करके कहा—"मेरे प्यारे बहादुर भाइयों। आज तुम्हारे ही साहस और उत्साह से हम मेवाड़ के अधिकारी कहला रहे हैं। तुमने जो वीरता दिखाई उससे शत्रुओ के अरमान मिट्टी में मिल गये हैं। हमें मालूम होता है कि अकबर भी अब मेवाड़ की ओर से उदासीन होगया है। इसलिये वह इधर ध्यान नहीं देता। यह सब तुम्हारे ही कारण हुआ। मेवाड़ अब हमारा है। हर जगह हमारा ही यहां अधिकार है। हमें इस समय पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त है। कोई भी कांटा हमारे रास्ते में अब नहीं रहा है। परन्तु भाइयो अभी हमारा हर्ष मनाना व्यर्थ है। हमारा प्रण अभी अधूरा ही है। हमने चितौड़ के उद्धार करने की भीषण प्रयिज्ञा की थी, वह अभी पूरी नहीं हुई। इसलिये जब तक हमारी यह प्रतिज्ञा पूरी न हो जाये हमें सुख की नींद न सोना चाहिये। हमें पूर्ववत ही अपने प्रण का पालन करना चाहिये। हम अभी महलों रहने के योग्य नहीं हुये हैं स्वर्ण पात्रों में भोजन करने का अधिकार अभी हमें प्राप्त नहीं चित्तौड़ पर हमारा झन्डा फहरायेगा तभी हम इन सारे सुखों को भोगने के अधिकारी हो सकेंगे।'

प्रताप के इन वचनों से राजपूत वीर फिर भड़क उठे और कहने लगे—'महाराणा! जब तक हमारे दम में दम है हम चित्तौड के उद्धार कायत्न करते ही रहेंगे। हम अपनी पूर्व प्रतिज्ञा को नहीं भूल सकते। हम सब चित्तौड़ के लिये अपने प्राण देने को तैयार हैं।"

वास्तव में प्रताप अपनी पूर्व प्रतिज्ञा का ही पालन कर रहा था। यद्यपि इस समय वह मेवाड़ के विशाल साम्राज्य का अधीश्वर था किन्तु महलों में न रह कर एक कुटी में ही रहता था, चटाई पर ही सोता था। पत्तल दोनों में ही खाना खाता था स्वर्ण के थाल में नहीं। उसने अपनी आन नहीं तोड़ी थी उसने भामाशाह का यथायोग्य उचित सन्मान किया, क्योंकि यह सब कुछ भामाशाह के ही कारण हुआ। राणा ने भामाशाह को पूर्णतयः सन्तुष्ट किया।

राणा चित्तौड़ के उद्धार का उपाय सोच रहे थे। सब वीरों को उन्होंने तैयार कर लिया था। राजपूत सेना उनका साथ देने को हरदम तैयार थी। राणा को पूर्ण आशा थी कि चित्तौड़ भी फतह हो जायगा। क्योंकि जब सम्पूर्ण मेवाड़ को ही जीत लिया तो चित्तौड़ को जीतना क्या कठिन था? परन्तु भाग्य की विपरीत गति है।

## प्रताप की मत्यु

महाराणा प्रताप अचानक बीमार पड़गये। उनकी बीमारी दिन बदिन बढ़ती ही जाती थी। सारे राजपूत वीर घबड़ा उठे। हां! क्या मेवाड़ का भाग्य विधाता सदा के लिये सोने वाला है? हाँ—भगवान की यही इच्छा है।

प्रताप का रोग बढ़ गया और उनके-जीवन की आशा न रही। प्रताप को स्वयं बड़ा दुख हुआ। इसलिये नहीं कि वह मर रहे थे बल्कि इसलिये कि वह जीते जी चित्तौड़ का उद्धार न

कर सके। उनकी अभिलाषा मन की मन में रह गई।

मेवाड़ का सिंह नर केहरी प्रताप मृत्यु शैया पर पड़ा हुआ था चारों ओर राजपूत वीर उदास मुख बैठे हुये थे। महाराणा कहने लगे-"वीरो! मेरी मृत्यु का शोक करना व्यर्थ है। मेरी आत्मा को शान्ति उसी समय प्राप्त हो सकती है जब कि तुम हमेशा अपने प्रण पर डटे हुये अपने कर्त्तव्य का पालन करते रहो। मातृभूमि के लिये सर कटते हुये देख कर ही मेरी आत्मा प्रसन्न होगी। भाइयों! राजकुमार अमरसिंह ऐश्वर्य प्रेमी है मुझे आशा है कि वह मेरे वचनों पर न चल सकेगा। मुझे मरते समय भी यह व्यथा दुख पहुँचा रही है। मैं अमरसिंह का हाथ तुम्हारे ही हाथों में देता हूँ। तुम्हीं उसके वंश के गौरव की रक्षा करना और उसे पथ भ्रष्ट होने से बचाना। कहीं ऐसा न हो कि वह अपने कुल को कलंक लगादे। वह प्रमादी है कहीं आलस्य में ही अपना अमूल्य जीवन न गंवा बैठे इसका ध्यान रखना। मैं अपनी यह थाती तुम्हें सौंप रहा हू तुम्हीं इसकी रक्षा करना। जबतक चित्तौड़ का उद्धार न करलो अपने प्रण से विचलित न होना। अपनी आन बान शान को हमेशा कायम रखना मेरे सामने इसी समय मेरे वीरो प्रतिज्ञा करो कि चित्तौड़ उद्धार में ही अपना जीवन बिताओगे। और सदैव अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रहोगे। मैं मरने से पहले आपके मुख से यही प्रतिज्ञा सुनना चाहता हूं।"

सब राजपूतों ने वहीं प्रताप के सामने चित्तौड़ के उद्धार

की अटल प्रतिज्ञा की। प्रताप को प्रतिज्ञा सुनकर सन्तोष हुआ। वह फिर कहने लगे—"वीरो ! मुझे तुम्हारी प्रतिज्ञा पर विश्वास है। अब मैं सुख से मर सकूंगा। बहादुरो ! संसार को तुम यह दिखादो कि मेवाड़ का बच्चा बच्चा "प्रताप" है। स्वतन्त्रता का सच्चा उपासक है।

साहस उत्साह और उद्योग से कोई वस्तु दुर्लभ नहीं यह आप सब लोग देख चुके हैं। सफलता उद्योग की दासी है बिना उद्योग के सफलता कभी प्राप्त नहीं होती। सफलता प्राप्त करने के लिये कष्ट संकटों की चिन्ता नहीं करनी चाहिये। परीक्षा से घबड़ाना वीरों का नहीं कायरों का काम है। आग में तपने से ही सोना चमकता है। बिना कसौटी पर घिसे हुये परख नहीं होती। उद्योग करते रहो। साहस ही उन्नति का मूल है। उत्साह से ही कठिनता सुगमता के रूप में परिणित हो जाती है।

भोग विलास में जीवन बिताना मानव जीवन का उद्देश्य नहीं है। स्वतन्त्रता के लिये मरना ही मनुष्य का सच्चा जीवन है। मनुष्य सुख ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिये संसार में जन्म नहीं लेता उसका जीवन संसार के सन्मुख एक आदर्श उपस्थित करने के लिये होता है जिसके पद चिन्हों पर चलकर अन्य व्यक्ति अपना लोक और परलोक दोनों सुधार सकें।

वीरों ! मेरा जीवन दीप अब बुझने ही वाला है। मुझे आज्ञा दो। मेरी प्यारी जननी जन्मभूमि ! मुझे सदा के लिये बिदा कर। मैं प्रत्येक जन्म में तेरी ही सेवा करूं ऐसा शुभ

आशीर्वाद दे ! प्रणाम ! अन्तिम प्रणाम !! मातेश्वरी अन्तिम प्रणाम !! सब उपस्थित सज्जनों को मेरा अन्तिम यथायोग्य बंदे बच्चों ! अन्तिम आशीर्वाद !! अपनी मातृभूमि की गोद में फलो फूलो और उसकी तन मन से सेवा करो !!

प्रताप बहुत कुछ कहना चाहते थे परन्तु न कह सके। उनका कंठ रुक गया और वह शान्त हो गये सदा के लिये शान्त हो गये। सब लोग शोक विह्वल होकर रो पड़े !!
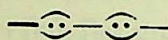
# उपसंहार

प्रिय पाठको ! प्रताप का उज्वल जीवन चरित्र आप पढ़ चुके ! उसके पवित्र चरित्र का आपने भली भांति अध्ययन किया वह सच्चा वीर था। उसका आदर्श जीवन निष्कलंक था। चरित्र निर्मल था। उसके हृदय में दृढ़ता थी, पवित्रता थी, देश प्रीति थी, स्वाभिमान था और अपने पूर्वजों का मान था। सच मुच उसका कहना बिल्कुल ठीक था कि- 'यदि राणा सांगा और मेरे ( प्रताप ) मध्य कोई दूसरा शाशक न होता तो चित्तौड़ यवनों के हाथ में कभी न पड़ता। मेरे पिता उदयसिंह ही चित्तौड़ को पराधीन बनाने के दोषी हैं। यदि वह न होते अथवा वह कायरता धारण न करते तो चित्तौड़ कभी पराधीनता की शृंखला में बद्ध न होता। "यही चित्तौड़ की चिन्ता मरते समय भी उनके हृदय में बनी ही रही। इसमें किंचित मात्र भी सन्देह नहीं कि

यदि प्रताप कुछ समय तक और जीवित रहते तो चित्तौड़ पर अधिकार करके ही मानते। उनकी हठ पूरी होती और अवश्य होती! उनके इन्हीं गुणों को याद करके तो आज मेवाड़ ही नहीं समस्त भारतवर्ष उनके प्रति कह रहा है:—

## "प्रताप के प्रति"

लुट चुकी है लाज सारी।
होगये हो मौन क्यों तुम देख कर दुर्गति हमारी?
१—वीरवर जिस देश के हित जान की बाजी लड़ाई।
प्रेम में हो मत्त जिसके सम्पदा अपनी लुटाई।
दुःख को ही सुख समझ कर आफते लाखों उठाई॥
वीरता, रणधीरता, गम्भीरता पूरी दिखाई।
रो रही सिर धुन रही वह मातृभू मेवाड़ प्यारी।
लुट चुकी है लाज सारी॥ होगये०
२—उस समय उस आन पर उस मान पर वह शूर जूझे।
होगये बलि दान कितने? आज इसको कौन बूझे?
शत्रु भी होकर रहे मेवाड़ के महमान कितने?
कर रहे हैं आज भी विद्वान भी गुणगान कितने?
आज ही! उस देशकी सन्तान दुखियारी भिखारी।
लुट चुकी है लाज सारी॥ होगये०
३—आत्म गौरव पूर्ण वैभव शूरता वह भूल बैठे।
स्वार्थ, मत्सर, मोह मिथ्या मान में हम फूल बैठे॥
धर्म से कर्त्तव्य से सब आज हो प्रतिकूल बैठे।
ब्याज के ही लोभ में फंस हाय! सब खो मूल बैठे।

अबरहा क्या और बाकी हो विजय जिससे हमारी।
लुट चुकी है लाज सारी ॥ होगये०

४—लाल लाखों लुट रहे हैं नाश की यह साज देखो।
दिन दहाड़े देवियों की दुष्ट लूटें लाज देखो ॥
गिर रहा है गर्त में यह अजय वीर समाज देखो ।
आज कण कण को दुखी हैं भटकते मोहताज देखो ॥
बंध रहे हैं दासता की शृङ्खला में शस्त्रधारी ।
लुट चुकी है लाज सारी ॥ होगये०

५—छारही यों घोर कुलषित कष्ट की काली घटायें ।
सह रहे हैं मूक पशुवत सिसकियां भरकर व्यथायें ॥
क्या कहें ? किसको कहें ? अबकौन सुनता है कथायें।
हो रहे पाषाण पानी देखकर बिगड़ी दशायें ॥
हो छुपे किस स्थान पर स्वाधीनता के हे पुजारी।
लुट चुकी है लाज सारी ॥ होगये०

६—देश से इस जाति से यदि प्रेम हो तो पुन: आओ।
संगठन का प्रेम का वह शंख अपना फिर बजाओ ॥
पथ प्रदर्शक तारिका बन मार्ग भूलों को बताओ ।
मर मिटें इस देश के हित भावना ऐसी! जगाओ ॥
देश में फिर से उड़े घर घर ध्वजा कल्याणकारी।
लुट चुकी है लाज सारी ॥ होगये०

होगये हो मौन क्यों तुम देखकर दुर्गति हमारी ॥
( श्री "सज्जन कविरत्न )

## * गायन *

लख कर जिसकी प्रबल शक्ति को हृदय धड़कते ।
युद्धस्थल में सन्मुख जिसके शत्रु भड़कते ॥
मत्तसिंह सम हृदय विदारक बीर वरों में ।
भरी भीरुता निज प्रहार से शत्रु शरों में ॥
अमर कीर्ति मेवाड़ की जान रहा संसार है ।
मार्त्तण्ड सम तेज यश जगमें विदित अपार है ॥

( श्री० "बुद्धेश" )

और भी :—

## कवित्त

माना था न मान का गुमान अरमान भरा,
आन भरा आनके सुनाया तीव्र ताना था ।
थाना तुर्कजादों का उठाना था जरूर उसे,
मारके मिटाना शाही शानका निशाना था ॥
ध्येय "हरनाथ" एक अहर निशा था यही,
हिन्दी हिन्दुजाति हिन्दुधर्मको बचाना था ।
बाना राजपूती का निभाना ठाना २ बीर,
राना मरदाना देश दीन पै दिवाना था ॥

( राजकवि श्री हरनाथ जी )

यह वीरता का युग था । प्रत्येक के हृदय में बीरत्व की लहरें जोश मारती थी । अकबर इस बात को अच्छी तरह समझता था कि राजपूत जाति बड़ी बहादुर है । राजपूतों का

बच्चा बच्चा वीरता का साक्षात् अवतार है। मीना बाजार में यह राजपूत वीराङ्गनाओं की वीरता भी देख चुका था। वीराङ्गना के वीरता पूर्ण वाक्य उसके कानों में सदैव गूंजते रहते थे—वह वाक्य नहीं थे सिंहनी का सिंहनाद था। यह शब्द उसे खूब याद थेः—

### कवित्त

नारी हीन मान मुझे काम पूतली सी नीच
ढीली कर देती हूँ अनाड़ियों की नाड़ी मैं।
क्षत्रि की सपूतनी हूँ वीर राज पूतनी हूं,
तेरे लिये भूतनी हूँ खेल की खिलाड़ी मैं।
"रामाधीन" भाषै तुझ ऐसे आवताइयों को
कसरिन सी हूं भय दायक पहाड़ी मैं।
कामिनी नहीं हूँ कामनों की पूर्ति कारिनी मैं
कामियों के कंठ को कठोर हूँ कुल्हाड़ी मैं॥
(श्री० "रामाधीन जी')

॥ समाप्त ॥